देखा परखा

डॉ० जगदीश चन्द्र जैन

हंस प्रकाशन इलाहाबाद

प्रकाशक हस प्रकाशन, इलाहाबाद

मुद्रक : भार्गव प्रेस, इलाहाबाद

आवरण . कृष्ण चन्द्र श्रीवास्तव

प्रथम सस्करण : दिसम्बर १९५९

मूल्य : तीन रुपये

प्रकाशकीय

डाक्टर जगदीश चन्द्र जैन के स्फुट निबन्धो का यह सकलन प्रस्तुत करते हुए हमे प्रसन्नता है। वह एक जाने-माने व्यक्ति है। सजग देश-प्रेमी है। गाधीजी की हत्या के षड्यत्र की गन्ध मिलने पर उन्होने बापू को बचाने के लिए आप्राण उद्योग किया, लेकिन अपनी ही सरकार से उनको अपेक्षित सहयोग नही मिला और बापू को बचाया न जा सका। इसकी कहानी उन्होने अपनी पुस्तक 'बापू को न बचा सका' मे लिखी है। इसी आधार पर उन्होने गाधीजी की हत्यावाले मामले मे गवाही भी दी थी जो बहुत महत्वपूर्ण सिद्ध हुई।

लेकिन यह सब आनुषगिक है। डाक्टर जैन प्रधानत पाली-प्राकृत-अपभ्रश के पण्डित है। उसी मे वर्षो पहले डी० लिट्० की उपाधि ली थी। बम्बई के रुइया कालेज मे हिन्दी विभाग के प्रधान आचार्य है। हिन्दी पढाने के ही सिलसिले मे दो बरस पेकिङ् विश्वविद्यालय मे रह चुके है। अभी कुछ हफ्ते पहले तक बिहार के प्राकृत जैन इस्टीट्यूट मे सह-सचालक थे, लेकिन वातावरण अनुकूल न होने के कारण वहा से अलग होकर वापस अपने रुइया कालेज पहुँच गये है।

जैसा बहुरगी उनका जीवन है वैसे ही बहुरगी ये निबन्ध है और हमे विश्वास है कि इनसे पाठको का मनोरजन होगा।

क्रम

पुरातत्ववेत्ता मुनि जिन विजय	१
अपभ्रंश साहित्य मे नारी	८
प्राचीन जैन साहित्य मे दण्डविधान	२०
प्राचीन जैन साहित्य मे चौर कर्म	२६
वैशाली का महत्व	३८
कुरु जनपद की यात्रा	४३
चीनी भाषा और लिपि	५३
चीन के गोर्की लू शुन	५६
पूर्व देश की लजीली लडकी	६५
कमल का मठ	८२
सोम नदी के प्रवाह के विरुद्ध	६०
नये चीन की एक कहानी	६६
प्रोफेसर मा छाओ छिन	१०८
क्रान्तिकारी बाघा जतीन	११४
क्रान्तिकारी भूपेन्द्र चक्रवर्ती	१२०

देखा परखा
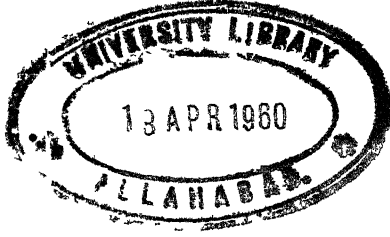
पुरातत्ववेत्ता मुनि जिनविजय

लम्बा चेहरा, आँखों पर चश्मा, पीछे की ओर कंघी किये हुए सफेद रुक्ष बाल, खादी का कुरता और धोती, कुर्सी पर बैठे, आँखो से सटाकर किसी प्राचीन हस्तलिखित पुस्तक को पढ़ते हुए मुनि जी को देखकर मैंने प्रणाम किया और अपना नाम बताकर (आँखों की रोशनी कम हो जाने के कारण मुनिजी किसी को देखकर पहचान नहीं पाते) बैठ गया । फौरन ही मुनि जी ने पुस्तक एक तरफ रखते हुए बडे स्नेह से मेरा स्वागत किया और कुशल-वार्ता पूछने लगे ।

मुनिजी प्राकृत, सस्कृत और अपभ्रश भाषाओं के अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति-प्राप्त एक जाने-माने विद्वान हैं । वे केवल पुरातत्व-वेत्ता ही नही है, उनकी विविध प्रवृत्तियों ने उनके जीवन को स्नेहशील और कोमल बना दिया है । समाज-सुधार के कामो में वे अग्रणी रहे है, राष्ट्र के आन्दोलनों मे सक्रिय भाग लेकर उन्होने जेलयात्रा की है, और देश-विदेशो मे खूब परिभ्रमण किया है । और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि असाधारण पडित होते हुए भी क्राति की ज्वाला को उन्होंने अपने अन्तस्तल मे सजोकर रक्खा है । मुनि जी जैसे सरल स्वभावी और कर्मठ व्यक्ति को देखकर बहुत कम लोग इस रहस्य को जान सकते है ।

मुनिजी का जन्म मारवाड मे रूपाहेली नामक गॉव मे क्षत्रिय घराने मे हुआ था । इनके पिता धारा के सुप्रसिद्ध राजा मुञ्ज के वशज थे और उनकी माता करौली के राजघराने की कन्या थीं । १८५७ के स्वातंत्र्य संग्राम मे इनके परिवार के लगभग १५० व्यक्ति कत्ल कर दिये गये, केवल इनके दादा, पिता और काका बच गये जो वर्षों तक फ़रार हालत मे इधर-उधर घूमते रहे ।

मुनि जी का बचपन का नाम किसन सिंह था, लेकिन उनकी माता उन्हे रण-मल्ल कहकर पुकारती थी । आखिर बडे होकर किसनसिंह को अंग्रेज साम्राज्य-शाही से अपने पूर्वजो का बदला लेना था ! कहने की आवश्यकता नहीं कि मुनि जी को इस रोमाचकारी घटना ने विशेपरूप से प्रभावित किया, और आगे चल कर इस दिशा मे विशेष कुछ न कर सकने के कारण उनका हृदय अन्दर ही अन्दर कुढन से भर गया ।

बचपन से ही जिनविजय जी बडी चचल प्रकृति के थे । १२ वर्ष की उम्र में वे राजस्थान के एक खाकी बाबा के सपर्क मे आये और उनका चेला बन कर रहने लगे । वे लगोटी लगाते, भभूत रमाते और अभिवादन के उत्तर मे 'नमः शिवाय' कहते । खाकी बाबा हाथी की सवारी करते और राजा-महा-राजाओ द्वारा सन्मान पाते । बाबा जी के और भी बहुत से चेले-चॉटे थे जो प्रायः उद्दड और उच्छृङ्खल प्रकृति के थे । सब मे छोटे थे किसन सिंह । बाबा जी ने उन्हे एक अलौकिक जोगी बना देने का आश्वासन दिया था । लेकिन होनहार कुछ और थी । एक बार किसन सिंह अपने गुरु जी के साथ जंगल की किसी गुफ़ा मे ठहरे हुए थे । किसन सिंह ने मौका पाकर उनके चगुल से भाग निकलने का इरादा किया । लेकिन जगल का रास्ता बीहड़ था । फिर पता लग जाने पर सोटो की मार का डर था । लेकिन राजपूत अपने प्रण के पक्के होते है । अपने सिर पर पैर रख कर वे भाग निकले और दस-पन्द्रह मील की दूरी पर जाकर उन्होने दम लिया ।

किसनसिंह को शुरू से ही पढने-लिखने की तीव्र उत्कठा थी । कुछ समय वे किसी जैन यति के पास रहे, फिर मालवा मे एक स्थानकवासी साधु के पास आकर रहने लगे । इस समय किसनसिंह की अवस्था केवल १४ वर्ष की थी । हजारो रुपये खर्च करके बड़ी धूमधाम से इन्हे साधु की दीक्षा दी गई, और अब ये 'किसनलाल' कहे जाने लगे । लेकिन किसनलाल का मानसिक सघर्ष सदैव चलता रहा । अपनी स्नेहमयी माता की मूर्त्ति उनके हृदय-पटल पर अकित रही । जब से वे घर त्याग कर खाकी बाबा के पास आये, घर लौट कर भी नही जा सके थे । दीक्षा लेने तक की खबर उन्होने माँ को नहीं दी थी । 'रणमल्ल' नामको वे कैसे सार्थक कर सकेंगे ? 'क्या अब दुश्मन से बदला लेने के प्रण को भग कर देना होगा ?' इत्यादि विचार उनके मस्तिष्क मे चक्कर लगाया करते ।

किसनलाल ने स्थानकवासी साधु के वेष मे महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश आदि में भ्रमण किया । लेकिन पढ-लिखकर जैन आगमो के रहस्य को समझने की

उत्कठा अभी उनके हृदय मे विद्यमान थी। इधर स्थानकवासी साधुओं के सम्पर्क से भी उन्हे मनचाहा सतोष नहीं मिला था। ऐसी हालत मे वे स्थानकवासी सम्प्रदाय छोड़कर श्वेताम्बर मूर्त्तिपूजक सम्प्रदाय मे आ गये। यहाँ वे स्वर्गीय आचार्य विजयवल्लभ सूरि आदि सुधारवादी जैन मुनियों के सम्पर्क मे आये और अब वे जिनविजय नाम से कहे जाने लगे।

हमारे देश मे बहुत कम ऐसे लोग होंगे जो स्वर्गीय लोकमान्य तिलक, महात्मा गाधी और विश्वकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर, इन सब के निकट सम्पर्क मे आये हों। लेकिन मुनि जिनविजय जी को यह सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उन दिनो तिलक 'केसरी' का सम्पादन करते थे! 'केसरी' पढकर जिनविजय जी के राष्ट्रसेवा के सस्कार दृढ बने थे। १९१७ मे जब मुनिजी भ्रमण करते हुए पूना पहुँचे तो पूना लोकमान्य तिलक की प्रवृत्तियो का केन्द्र बना हुआ था। तिलक जी की राष्ट्रभक्ति की बाते सुनकर मुनिजी के हृदय मे उनके प्रति बडी श्रद्धा पैदा हो गई थी। साधुवेष मे ही पैदल चलकर वे उनसे मिलने गये, फिर उनके बगले के सामने रहने लगे। धीरे-धीरे तिलक जी से मुनिजी का सपर्क बढ़ा, दोनो रोज घूमने जाते और दर्शन, साहित्य और राजनीति की चर्चा होती। तिलक जी भी अनेक बार जिनविजय जी के यहाँ आते और विचार-विनिमय करते। मुनिजी उनके क्राति-कारक विचारों से बहुत प्रभावित हुए। अर्जुनलाल सेठी आदि के सपर्क मे भी वे आये। इससे पाखड, अधानुकरण आदि की पुरातन भावनाये गलित होती गईं और आधुनिक विचारधारा उनके मन मे उदित हुई। इस समय केवल क्रातिकारी पार्टी के लोगो को ही उन्होने आश्रय नहीं दिया, बल्कि समूचे राष्ट्र की भावना से अनुप्राणित हो अहिंसाव्रत धारी साधुवेषी इस मुनि ने पूना की पहाड़ियो पर जाकर चुपचाप पिस्तौल आदि चलाने का अभ्यास किया। उन्होने हिमालय जाकर सन्यासी अवस्था मे रहते हुए ब्रिटिश हकूमत का शस्त्रों से मुकाबला करने के लिये एक क्रातिकारी पार्टी बनाने का निश्चय किया। दुर्भाग्य से पिस्तौल चलाते हुए मुनि जी की टाग मे गोली लग गई और बहुत-सा समय उन्हे खाट पर पडे रह कर बिताना पडा।

महात्मा गाधी की विचारधारा से भी मुनि जिनविजय कम प्रभावित नही हुए। काठियावाड के सुप्रसिद्ध जैन विचारक श्रीमद् राजचन्द्र के व्यक्तिगत सपर्क मे आने से गाधी जी उनके भक्त बन गये थे। श्रीमद् राजचन्द्र और गाधी जी के विचारो से जैन समाज मे काफ़ी शोर मचा। दरअसल इनके प्रगतिशील विचार बहुत से लोगो को पसद नहीं थे, इसीलिये जिनविजय जी

की कार्य-प्रणालियों का विरोध जैन साधुओं की चर्चा का विषय बन गया था। इस समय गाधी जी के राष्ट्रीय आन्दोलनो से प्रभावित होकर जिनविजय जी ने उनके साथ पत्र-व्यवहार किया और राष्ट्र कार्य मे भाग लेने की इच्छा प्रकट की। गाधी जी तो ऐसे लोगो का सहयोग प्राप्त करने के लिये उत्सुक थे ही।

१ अक्तूबर, १९२० को तिलक जी का स्वर्गवास हो गया। इस समय अंग्रेज सरकार से असहयोग करने के लिये गाधी जी ने अहिंसात्मक आन्दोलन शुरू किया। लोगों ने अंग्रेजी स्कूल और कालेजों का बहिष्कार किया और जगह-जगह राष्ट्रीय विद्यापीठ कायम होने लगे। यह देखकर भावुक हृदय जिनविजय अपने ऊपर नियंत्रण न रख सके और साधु-वेष मे ही रेलगाडी मे बैठकर (जैन साधु को रेलगाडी द्वारा यात्रा करने का निषेध है) पूना से बबई आये और वहाँ से अहमदाबाद के लिये रवाना हो गये। धार्मिक और सामाजिक बधनों की परवा न करके, रेलगाड़ी मे बैठकर राष्ट्रीय आन्दोलन मे भाग लेने के लिये चल पड़ना, यह जैन परपरा मे पोषित एक साधु के लिये सचमुच ही बडे साहस का काम था, जिसे कार्यरूप मे लाने के लिये मुनिजी के मन मे घोर अन्तर्द्वन्द्व मचा होगा !

अहमदाबाद पहुँचकर मुनि जी की गाधी जी के साथ चार-पाँच दिन तक चर्चा होती रही। गाधी जी के सामने उन्होने अपने क्रातिकारक विचार प्रस्तुत किये और कहा कि राजपूत के बेटे के लिये तो युद्ध मे मरना ही श्रेयस्कर है। साधु-वेष परिवर्त्तन करने की बात भी हुई। इसके बाद मुनि जी पूना वापिस चले आये और उन्होने 'मुम्बई समाचार' मे लेख लिखकर अपने वेष-परिवर्त्तन की घोषणा करते हुए बताया कि साधु को भिक्षा माग कर नहीं, बल्कि मजदूरी कर के अपना पेट भरना चाहिये। कहने की आवश्यकता नही कि जिनविजय जी के इन विचारों को पढ कर जैन समाज मे काफी क्षोभ हुआ। इसी समय अहमदाबाद मे गुजरात विद्यापीठ की स्थापना हुई और जिनविजय जी को गुजरात पुरातत्व मन्दिर का आचार्य बना दिया गया।

देश मे अनेक राष्ट्रीय आन्दोलन चले। अनेक लोग जेल गये, बहुत लोगो की सम्पत्ति जब्त कर ली गई, स्वयसेवको को पुलिस के डडों की मार खानी पड़ी, बहुत से गोली के शिकार हुए। लेकिन कैसी भी परिस्थिति हो, गाधी जी ने सदैव अहिंसक बने रहने का आदेश दिया। उनका कहना था कि देश के लिये लडनेवाले को मन, वचन, और कर्म से अहिंसक होना चाहिये, तभी

देश को आजादी मिल सकेगी। उन्होंने राष्ट्रीय कार्यकर्त्ताओं से इस सबंध मे एक प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर करने के लिये कहा। लेकिन मुनि जी के अन्तस्तल मे तो क्राति की ज्वाला जाग्रत थी, फिर उनका विश्वास था कि अंग्रेज साम्राज्य-शाही अहिंसा से कभी वश मे आनेवाली नहीं है, इसलिये उन्होने हस्ताक्षर करने से इन्कार कर दिया।

गुजरात पुरातत्वमदिर मे मुनि जिनविजय जी को काम करते हुए आठ वर्ष हो गये थे। इधर रूस की क्राति और उसके बाद रूस मे होनेवाले परिवर्त्तनो ने मुनि जी को काफी प्रभावित किया था। जैन पुरातत्व के पडित जैकोबी और शूब्रिंग आदि जर्मन विद्वानों के सारगर्भित खोजपूर्ण ग्रथो का भी उन्होने अध्ययन किया था, इससे जर्मनभाषा सीखने की उनकी उत्कठा बढ़ गई थी। उन्होने सोचा, विदेशो मे भारत के संबध मे प्रचार करने का यह अच्छा अवसर है, इसलिये गाधी जी और डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद आदि के परिचय-पत्र लेकर सन् १६२८ मे वे जर्मनी के लिये रवाना हो गये।

उन दिनों बर्लिन सास्कृतिक प्रवृत्तियो का केन्द्र बना हुआ था। जिनविजय जी ने बर्लिन पहुँचकर 'हिन्दुस्तान हाउस' नाम का एक होटल खोल दिया, जहाँ चाय वगैरह वे स्वयं ही बनाते थे। यहॉ देश-विदेश के विद्वानो का जमघट लगा रहता था। राजा महेन्द्र प्रताप, सोमेन्द्र टैगोर, शिवप्रसाद-गुप्त आदि प्रसिद्ध क्रान्तिकारी यहॉ आते रहते थे। स्थानीय सभाओ के अतिरिक्त, बर्लिन के समाचारपत्रो के माध्यम से भी यूरोप के लोगो को हिन्दुस्तान की वास्तविक हालत बताने का प्रयत्न किया गया। मुनिजी लगभग दो वर्ष तक जर्मनी मे रहे और इस बीच मे अपने लक्ष्य को पूरा करने मे उन्हे सफलता भी मिली।

१६३० मे जब मुनिजी हिन्दुस्तान लौटे तो लाहौर काग्रेस के अधिवेशन मे स्वराज्य के प्रस्ताव पर बहस चल रही थी। वे लाहौर मे गाधी जी से मिले। अहमदाबाद लौटकर गाधी जी ने दाडीकूच का कार्यक्रम बनाया और जिनविजय जी को उसमे प्रमुख भाग लेने को कहा। मुनिजी केवल तीन महीने हिन्दुस्तान रह कर जर्मनी लौट जाने का कार्यक्रम बनाकर आये थे। लेकिन गाधी जी के आदेश को कैसे टाला जा सकता था? फिर यहॉ तो राष्ट्र के लिये आहूति देने का प्रश्न था। ऐसी हालत मे यूरोप वापिस लौटने का कार्यक्रम रद्द कर, अनेक स्वयसेवकों को साथ ले मुनि जिनविजय दाडीकूच के लिये निकल पडे। अग्रेज सरकार ने उन्हे फौरन ही गिरफतार कर जेल मे डाल दिया। जेल मे वे श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुशी और स्वर्गीय के० एफ०

नरीमन के सपर्क मे आये।

जेल से छूटने के बाद उन्हे गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर का आमन्त्रण मिला और मुनि जिनविजय अपने क्षुब्ध मन को शान्त करने के लिये शान्तिनिकेतन पहुँच कर फिर से सरस्वती की उपासना मे लग गये। इधर क्रातिकारियो का कोई सघटन नही बन सका, स्वराज्य पाने की उम्मीद भी जाती रही। लगभग चार वर्ष मुनिजी ने शातिनिकेतन मे व्यतीत किये। उसके बाद अस्वस्थ रहने के कारण उन्हे अहमदाबाद चले आना पडा। सिधी जैन ग्रथ-माला का कार्य आरभ हो चुका था। यहाँ से बम्बई जाकर, उस समय बम्बई सरकार के गृहमंत्री श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुशी के साथ उन्होने भारतीय विद्याभवन की योजना बनाई।

१६४२ मे स्वतंत्रता का आदोलन शुरू हो गया था। मुनिजी के विचारो मे फिर से अन्तर्द्वन्द्व होने लगा। एक ओर राष्ट्रसेवा का प्रश्न था, दूसरी ओर पुरातत्व के अध्ययन और भडारों मे पडे हुए सैकडो-हजारो ग्रथो के उद्धार का सवाल। ऐसी हालत मे जैसलमेर के एक साधु ने भडार खोलकर काम कराने का प्रस्ताव किया। मुनिजी कुछ विद्वानों के साथ वहाँ पहुँच गये, और पाँच महीने रह कर वहाँ ग्रथो की व्यवस्था की। जैसलमेर से लौटकर मुनिजी ने अपना सारा समय बम्बई के भारतीय विद्याभवन को अर्पित कर दिया, और यहाँ वे लगभग १३ वर्ष तक उन्होने समान्य सचालक के पद पर कार्य किया। इस बीच मे मुनि जी ने अनेक महत्वपूर्ण प्राचीन ग्रथो का सपादन कर उनका प्रकाशन किया और अनेक विद्वानों को सशोधन कार्य करने के लिये प्रोत्साहित किया।

भारतीय विद्याभवन की योजना बनाते समय मुनिजी ने किसी तपोवन के स्वप्न का साक्षात्कार किया था, लेकिन वह पूरा न हुआ। ऐसी हालत मे उन्होंने फिर दूसरा मार्ग ढूँढ़ना शुरू किया। वे ग्राम-जीवन की ओर झुके जिसके लिये चित्तौड के पास चदेरिया नामक स्थान को उन्होने अपना कार्य-क्षेत्र चुना। इसी समय राजस्थान सरकार ने राजस्थान के प्राचीन इतिहास और पुरातत्व आदि काम के सबध मे परामर्श देने के लिये मुनिजी को आमत्रित किया, और राजस्थान पुरातत्व मदिर की स्थापना कर मुनिजी को इस सस्था के संमान्य सचालक का पद ग्रहण करने का आग्रह किया, मुनिजी के प्रयत्न से यह पुरातत्व मदिर एक विशिष्ट प्रकार का सस्थान बन गया है, जहाँ खोज सम्बन्धी महत्वपूर्ण कार्य हो रहा है। पिछले आठ वर्षो मे यहाँ लगभग १२ हज़ार अलभ्य पाडुलिपियों का सग्रह किया जा चुका है।

सन् १९५० मे जब से मुनि जिनविजय जी ने चदेरिया मे अपने आश्रम की स्थापना की, तभी से उन्होने प्रतिज्ञा की है कि अपने खाने के लिये वे स्वय ही अन्न का उत्पादन करेंगे । मुनिजी ने अपनी गाढी कमाई द्वारा उपार्जित चालीस हजार रुपये की रकम भी इस आश्रम मे लगा दी है । उनका दृढ विश्वास है कि हिन्दुस्तान के गॉवों के विकास के बिना राष्ट्र का विकास नही हो सकता, इसलिये कुछ समय के लिये देश के अन्य सब कार्यों को बन्द कर के ग्राम-सुधार की ओर ध्यान दिया जाये तो गरीब जनता शोषण से मुक्त हो सकती है और भ्रष्टाचार बन्द हो सकता है । उनका कहना है कि मन भर अनाज पैदा करनेवाले व्यक्ति को सब से बडा राष्ट्र का सेवक समझा जाना चाहिये, देश की खाद्य-समस्या को हल करने का यह अमोघ उपाय है । सौभाग्य से राष्ट्रपति डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद का आशीर्वाद उन्हे प्राप्त हो गया है ।

मुनि जिनविजय जी अपने शोध कार्य से छुट्टी पाकर अक्सर चदेरिया मे आकर रहते है । यहॉ वे एक किसान बन कर रात-दिन अपने काम मे लगे रहते है । कभी खेतों मे बीज बोते हुए, कभी हल चलाते हुए, कभी बाग-बगीचो मे पानी देते हुए, कभी गाये को पानी पिलाते हुए, कभी गोबर उठाते हुए और कभी झाड़ु-बुहारी देते हुए आप उन्हे देखेंगे । आश्चर्य नहीं कि ग्राम-सुधार के इस अद्‌भुत काम मे उनके चित्त को अपूर्व सतोष प्राप्त होता है ।

★

अपभ्रंश साहित्य में नारी

(लगभग १०वीं से १४वी सदी तक)

ब्राह्मण, जैन तथा बौद्ध-ग्रन्थो मे नारी को प्रायः निंदात्मक वाक्यो से ही सम्बोधित किया गया है, फिर भी कुछ विद्वान् ऐसे हुए है, जिन्होंने निर्भीकता-पूर्वक नारी के गुणो की प्रशसा करते हुए उनका पक्ष लिया है। बृहत्सहिता के रचयिता बराहमिहिर ऐसे ही असाधारण विद्वानो मे से थे। उन्होने लिखा है—जो दोष स्त्रियो मे है वे पुरुषों मे भी मौजूद है। दोनों मे अन्तर इतना ही है कि स्त्रियाँ उन्हे दूर करने का प्रयत्न करती है जब कि पुरुष उनकी ओर अत्यन्त उपेक्षित रहते हैं। काम-वासना से कौन अधिक पीड़ित रहता है? पुरुष, जो वृद्धावस्था मे भी विवाह कर लेते है, या स्त्रियाँ, जो बालपने मे विधवा होने पर भी सच्चरित्रतापूर्वक जीवन-यापन करती है? पुरुष अपनी पत्नियो के जीते जी उनसे प्रेम की बातें करते हैं, लेकिन उनके दिवगत होते ही दूसरी शादी की बाते करने लगते हैं। जब कि स्त्रियाँ जब तक जिंदा रहती है अपने पतियों की विश्वास-पात्रा बनी रहती है और उनकी मृत्यु हो जाने पर उनके साथ चिता मे जलकर अपने प्राणों का उत्सर्ग कर देती है। इतना होने पर भी, पुरुष स्त्रियों पर अस्थिर-चित्त निर्बल और विश्वासघाती होने का दोषारोपण करते है। जिससे 'उल्टा चोर कोतवाल को डॉटे' वाली कहावत ही चरितार्थ होती है।

नारी घर का भूषण

नारी को घर का भूषण कहा है। शास्त्रकारो का कथन है—गृहिणी गृहमाहुः न कुड्यकटसहतिम्, अर्थात् गृहणी को घर कहा जाता है, घर की दीवाल आदि को नही। लेकिन घर को स्वर्ग बनाने के लिए नारी को गृह-

कार्य मे कुशल होना जरूरी है। और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि उसे मिष्टभाषिणी होना चाहिए। प्रबध-चिन्तामणि मे कहा है—

च्यारि बइल्ला धेनु दुइ, मिट्ठा बुल्ली नारि।
काहुं मुॅज कुडवियाह, गयवरबज्झइ वारि॥

अर्थात् घर मे चार बैल हों, दो गाएँ हों और मीठी बोलनेवाली नारी हो तो बस है, फिर द्वार पर यदि हाथी भी बॅधा हो तो कोई लाभ नहीं।

लेकिन दुर्भाग्य से यदि नारी कलहकारिणी है और दिन भर झगडा-टटा करती है तो फिर भगवान् ही मालिक है। ऐसी दशा मे घर-त्याग कर सन्यासी हो जाने का ही विधान नीति-विशारदो ने किया है—

राजा लुद्ध, समाज खल
बहु कलहारिणी, सेवक धुत्तउ
जीवण चाहसि सुक्ख जइ।
परिहर घर, जइ बहुगणजुतउ॥
(प्राकृत पैगल १--१६६)

अर्थात् यदि राजा लोभी है, समाज के लोग दुष्ट है, कलह करनेवाली स्त्री है, धूर्त सेवक है तो ऐसी हालत मे सुख से रहना चाहते हो तो घर को त्याग कर चले जाओ।

वीसलदेव रासो मे राजमती प्रवास की तैयारी करने मे सलग्न अपने पति को सबोधित करती हुई कहती है—

ऊलग जाण कहइ धणी कडण
घर माहे बारउ नही कुल्हडउ लूण
घरि अकुलिणीय रे कल करइ
रिण का चपिया घर न सुहाइ
कइ रे जोगी हुई नीसरइ
कइ मुहडउ नइ ऊलग जाइ॥३६॥

अर्थात् हे प्रिय! प्रवास को वही जाता है जिसके घर मे स्त्री नहीं, या जिसके कुल्हड मे नमक नहीं, या जिसके घर कलह करनेवाली अकुलीन स्त्री है, या जो ऋण के भार से दबा हुआ है—ऐसे ही आदमी को घर अच्छा नहीं लगता और वह अपना-सा मुँह लेकर प्रवास के लिए प्रस्थान कर

जाता है। †

नारी को केवल मिष्टभाषिणी ही नहीं, बल्कि उसे सुशीला, सदाचारिणी, सत्यवती, विनयशीला, विवेकशीला, शिष्टाचारी, लावण्यवती तथा पुत्रवती भी होना चाहिए। उसके चरण कोमल, और अलकार-सहित होने चाहिए। हाथ सुन्दर और रक्त अशोक वृक्ष के पत्तो के सदृश कोमल होने चाहिए, भुजाएँ विशाल और गोलाकार होनी चाहिए, वक्षस्थल विशाल होना चाहिए, ग्रीवा उन्नत और त्रिवली-सहित होनी चाहिए। उसके केश श्यामल और कोमल, मस्तक अष्टमी के चन्द्र के सदृश, मुखमण्डल पूर्ण चन्द्र के समान, कर्ण सोने के आभूषणो से विभूषित, दतपक्ति मौक्तिक माला के समान स्वच्छ और दीप्तिमान तथा लोचन दीर्घ और विस्तृत होने चाहिए (माणिक्य चन्द्र सूरि, पृथ्वी-चरित्र, पृ० १२६, ज्योतिरीश्वर, वर्ण रत्नाकर १६ ख)।

स्त्रियों की शिक्षा

हमारे यहाँ पुत्रियो के जन्म को अपशकुन माना गया है* और स्मृतिकारो ने जगह-जगह घोषित किया है कि अपुत्र को अच्छी गति प्राप्त नहीं होती (अपुत्रस्य गतिर्नास्ति), इसलिए पुत्र की उत्पत्ति आवश्यक है। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि उस समय के लोग स्त्रियों की शिक्षा के प्रति कितने उदासीन रहे होंगे। लेकिन इच्छा न होने पर भी स्त्रियाँ यदि उत्पन्न हो गई है

---

† सस्कृत मे भी एक श्लोक है—

यस्य नास्ति सती भार्या गृहेषु प्रिय वादिनी।
अरण्य तेन गतव्यं यथारण्य तथा गृह ॥

अर्थात् जिसके घर सती और प्रियवादिनी भार्या नही उसे जङ्गल मे जाकर रहना चाहिए। उसके लिए जैसा जगल है, वैसा ही घर है।

* कर्नल जेम्स टाड ने अपने सुप्रसिद्ध 'राजस्थान-इतिहास' (भाग १, पृ० ६८५) मे लिखा है—जिस प्रकार राजपूत स्त्रियाँ अपने पति के गौरव के रक्षार्थ प्रज्ज्वलित चिता की अग्नि मे अपने-आप को भस्म कर देती थी, उसी प्रकार राजपूत कन्याएँ अपने पिता के गौरव की रक्षा के निमित्त पृथ्वी-पर आते ही प्राण-त्याग कर देती थीं। यदि किसी कन्या ने ज्ञानहीना होने के कारण किसी प्रकार से पिता के क्रोध से गर्भ मे ही रक्षा पा ली, तो उसी समय से इसका दीर्घ जीवन माना जाता था। इसी समय से उसके जीवन के नाश के लिए अन्य उपाय किये जाते थे। नव प्रसूता कन्या को कोई भी प्रसन्न नही करता था मानो वह अयाचित रूप से स्वय ही आ गई हो।

और पाल-पोसकर उनका शादी-विवाह करना है, तो उन्हे गृह-कार्य की शिक्षा तो अवश्य दी जानी चाहिए—यह सोचकर ही सम्भवतः पुत्रियो को गीत, नृत्य, वाद्य, काव्य, नाटक, चित्रकर्म, मुखमण्डन, पुष्प-गुथन, आभरण-परिधान, केश-बन्धन, वशीकरण आदि कला विज्ञान की शिक्षा देने का आयोजन किया गया हो जिससे अपनी कला के द्वारा वे अपने श्वसुर-गृह के लोगों को मुग्ध कर सके।

पृथ्वीचन्द्रचरित्र (पृ० ९९-१००) मे उल्लेख है कि जब राजकुमारी रत्नमंजरी पढने योग्य हो गई तो उसके माता-पिता ने उसे एक पण्डित को सौप दिया और पण्डित जी ने उसे पढा-लिखाकर ७२ कला और ६४ विज्ञान मे निष्णात कर दिया। इससे मालूम होता है कि १५ वीं सदी के आसपास राज-कन्याओ को गीत, नृत्य आदि विषयो की शिक्षा दी जाती थी।

योग्य वर की खोज

आजकल की भाँति उस जमाने मे भी कन्या का विवाह करना एक बडी भारी समस्या थी। योग्य वर को पा लेना आसान काम नही था, फिर दहेज के लिए रुपए का प्रबन्ध करना आवश्यक था। प्रायः यौवन के लक्षण दिखाई देने के पहले ही कन्या का विवाह कर दिया जाता था। किसी षोडशी को देखकर ही सम्भवतः किसी कवि ने कहा है—

धणि मत्त मअंगजगामिणि
खंजणलोअणि चन्दमुही
चचलजुव्वण जातण जाणहि
छइल समप्पहि काइ णही
(प्राकृत पैंगल १-२२७)

अर्थात् हे मत्त गज की चाल चलनेवाली ! खजन के समान लोचनों-वाली ! चन्द्रमुखी बाले ! चचल यौवन को बीतते देर नहीं लगती, इसलिए तू अपने-आप को क्यों किसी छैल-बाँके को समर्पित नहीं कर देती ?

कभी ऐसा भी होता था कि वर और कन्या स्वय एक दूसरे को पसन्द कर लेते थे और उनका विवाह हो जाता था।

पउमसिरि हस्तिनापुर के शख नामक धनपति की कन्या थी। एक बार बसन्तोत्सव मनाने के लिए वह अपनी सखियों के साथ सज-धजकर नगर के बाहर किसी उद्यान मे क्रीडा करने गई। जब वह अपनी सखियो के साथ माधवी-मडप मे विश्राम कर रही थी, तो वहाँ साकेत का राजकुमार समुद्रदत्त आ पहुँचा। पउमसिरि की सखी बसन्त सेना ने समुद्रदत्त को अपनी सखी का

परिचय कराया और उसे बैठने के लिए आसन दिया। पउमसिरि ने राजकुमार का स्वागत करते हुए उसे अपने हाथ से ताबूल दिया और राजकुमार ने उसे अपने हाथो से गूँथी हुई बकुल की माला पहनाई। आगे चलकर वर और कन्या के माता-पिता की अनुमति से दोनो का विवाह हो गया। (धाहिल्ल, पउमसिरिचरिउ, दूसरी सन्धि)।

कितनी ही बार वर कन्या को विवाहने के लिए उसके घर नहीं जाता था, बल्कि कन्या को वर के घर लाया जाता था। एक बार कोई व्यापारी कनकपुर के राजा जयधर की सभा मे गिरिनगर की राजकुमारी पृथ्वी देवी का चित्र लेकर उपस्थित हुआ। राजकुमारी का चित्र देखकर राजा उस पर मोहित हो गया। तत्पश्चात् उसने अपने मन्त्री को बहुमूल्य आभूषण, वसन आदि देकर गिरिनगर भेजा और कन्या को कनकपुर ले आने को कहा। मन्त्री ने कन्या के पिता से राजा के आदेश का निवेदन किया और कन्या वस्त्राभूषणों से अलकृत हो हाथी, घोडा, रथ, पालकी, ध्वजा, छत्र और नौकर-चाकरो समेत कनकपुर पहुँची (पुष्पदन्त, णायकुमार चरिउ ११६-१७७ तथा जसहर चरिउ १०२५)।

विवाह की विधि

ज्योतिषी लोग विवाह के लिए शुभ दिन, शुभ जोग और शुभ मुहूर्त छाँटते थे। विवाह की तिथि पक्की होते ही घर की लिपाई-पुताई शुरू हो जाती थी तथा वर और कन्या पक्ष के लोग अपने घरो को तोरण, कलश, मालाओं आदि से सजाते थे। विवाह के लिए एक मडप बनाया जाता जिसमे कुलदेवता की स्थापना की जाती थी। मडप मे रग-बिरगी ध्वजाएँ लगाई जाती, स्तम्भ बनाए जाते, तोरण लगाए जाते, रत्न-जटित कलश रखे जाते तथा पटह आदि वाद्य बजाए जाते। विवाह के अवसर पर समस्त नगरी मे आनन्द छा जाता तथा धन-धान्य और सुवर्ण का दान दिया जाता था। वर को कलशो से स्नान कराकर और उसके अङ्ग को चन्दन से चर्चित कर वस्त्राभूषणों से उसे सज्जित किया जाता। तत्पश्चात् उसके हाथ मे ककण और सिर पर सेहरा बाँधकर उसे घोडे पर सवार कराया जाता और वह विविध वाद्यो के नाद-सहित कन्या के घर प्रस्थान करता। कन्या के घर पहुँचने पर वर और वधू को एक पट्ट पर बैठाकर पुरोहित-गण मन्त्र पाठ करते और अग्नि मे घी आदि पदार्थों का होम करते। फिर अग्नि की प्रदक्षिणा कर सात भाँवरे ली जाती। इसके बाद पाणिग्रहण सस्कार सम्पन्न होता, जब कि वर अपना हाथ वधू को पकड़ाता और उसका हाथ अपने हाथ मे लेता। इस अवसर पर दोनों पक्ष एक दूसरे

को धन, धान्य और सुवर्ण आदि प्रदान करते (देखो जसहरचरिउ १२५-२७; कनकामर, करकडुचरिउ ३, धनपाल, भविसयत्तकहा १,६; वर्णारत्नाकार, पृ० ६४; तथा धाहिल्ल, पउमसिरि चरिउ २)† ।

स्वयंवर-मंडप

राजपूतों के समय मे स्वयवर की प्रथा प्रचलित थी और स्वयवर के अवसर पर क्षत्रिय राजाओ मे कन्या की प्राप्ति के लिए तलवारे खटक जाया करती थी ।

राजकुमारी रत्नमजरी के स्वयवर के लिए जो मडप सजाया गया था वह कपूर और कस्तूरी की सुगन्धि से महक रहा था, मडप के ऊपर ध्वजाएँ फहरा रही थीं, उसमे रत्नमय तोरण लगे थे, पुतलियाँ बनी हुई थी और विविध पुष्पों से वह मडप अलकृत था । वहाँ वादित्र बज रहे थे, मगल गीत गाए जा रहे थे । दर्पण देदीप्यमान हो रहे थे और स्त्रियों के नूपुरो की ध्वनि सुनाई पड रही थी । मडप मे राजाओ के नामों से अकित सिंहासन विद्यमान थे जिन पर राजा लोग बैठे हुए थे । सधवा स्त्रियो के मङ्गल-गानपूर्वक रत्नमजरी को स्नान कराकर, किनारीदार श्वेत वस्त्र तथा आभरणो से अलकृत किया गया ।

कन्या के सिर मे सिंदूर की माँग भरी गई, और उसे ताबूल खिलाया गया । तत्पश्चात् वादित्रो की ध्वनि के साथ हाथ मे वरमाला लिए उसने मडप की ओर प्रस्थान किया । उसे देखकर उपस्थित राजा लोग उसके पाणि-ग्रहण की अभिलाषा करने लगे । कोई अपने गले के हारो को हिलाकर, कोई अपने हाथ की रत्नमयी गेंद को उछाल कर, कोई मित्रों के साथ वार्तालाप मे सलग्न होकर, कोई दृष्टि द्वारा विनोद उत्पन्न करके, तथा कोई कानो के कुडलो को सँभालकर, विविधि चेष्टाओं द्वारा कन्या का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने लगे । प्रतिहारी ने नाना देशो के राजाओ के रूप, गुण आदि का वर्णन किया, लेकिन कोई भी राजा रत्नमजरी के मन न भाया ।

अत मे रत्नमजरी अपनी प्रतिहारिणी के साथ उस स्थान पर पहुँची जहाँ राजा पृथ्वीचद्र अपने सिंहासन पर विराजमान थे । पृथ्वीचद्र के रूप-गुण की प्रशसा सुनकर राजकुमारी अत्यन्त प्रसन्न हुई और उसने उसके गले मे वर-माला पहना दी । यह देखकर राजा धूमकेतु ने अपनी तलवार म्यान मे से खींच ली और वह राजकुमारी को रथ पर बैठाकर भागने लगा । इस पर सामतो मे युद्ध मच गया और बहुत समय तक रत्नमंजरी कहीं दिखाई न दी

† इन ग्रथो मे देश और प्रान्तो के भेद से विवाह-विधि की विभिन्नताओ का उल्लेख किया गया है ।

(पृथ्वीचद्रचरित १११-११५)

संमिलित कुटुम्बों में कलह

बहु विवाह की प्रथा के कारण सपत्नियों मे एक-दूसरे की धन-सम्पत्ति आदि को देखकर ईर्ष्या होती थी। अतःपुर की रानियों को वश मे रखना राजा के लिए एक गभीर समस्या थी। सब रानियों की एक मात्र यही अभिलाषा रहती कि बडा होकर उनका पुत्र राज्य-सिंहासन पर आसीन हो। ऐसी हालत मे राजा का अतःपुर एक स्वतत्र राज्य से किसी भी प्रकार कम न था। फिर हिंदुओ की समिलित कुटुम्ब-प्रथा के कारण देवरानी-जेठानी और सास-बहुओ मे झगडे-टटे हुआ करते थे। धणसिरी के विधवा हो जाने पर जब वह प्राण त्यागने के लिए उतारू हो गई, तो उसके दोनों भाइयो ने अपनी बहन को आश्वासन दिया कि उनकी पत्नियाँ मन लगाकर उसकी सेवा करेंगी। कालातर मे पउमसिरि की दो भौजाइयाँ अपनी ननद की दानशीलता देखकर उससे ईर्ष्या करने लगी। धणसिरी को जब इस बात का पता लगा तो उसने उनकी चुगली कर अपने भाइयो का मन उनकी तरफ से फेर दिया जिससे दोनो अपनी पत्नियो से घृणा करने लगे। (पउमसिरिचरिउ १)।

पुत्र की इच्छा

जैसा पहले कहा जा चुका है। वृद्धावस्था मे माता-पिता की सेवा करने के लिए तथा उनकी मृत्यु के पश्चात् उनका श्राद्ध-कर्म करने के लिए पुत्र का होना अत्यत आवश्यक था। शत्रु से पितृ-भूमि की रक्षा वीर पुत्र ही कर सकते थे। किसी कवि ने कहा है—

पुत्ते जाएँ कवणु गुणु, अवगुणु कवणु मुएण।
जो बप्पी की भूँहडी चपिज्जइ अवरेण॥

(हेमचद्र, प्राकृतव्याकरण)

अर्थात् उस पुत्र के उत्पन्न होने से क्या लाभ अथवा मर जाने से क्या हानि जिसके जीते-जी शत्रु अपनी पितृ-भूमि पर अधिकार कर ले।

हिंदू स्त्रियो को जो 'दूधो नहाओ पूतो फलो' का आशीर्वाद दिया जाता है वह इसी पुत्रैषणा का द्योतक है। प्रवास-गमन के लिए उद्यत अपने पति को सबोधित करते हुए राजमती ने इस बात को बडे मार्मिक रूप मे प्रस्तुत किया है—

दुइ दुख सालइ हो सामीय साझ
जोवन मुरडीय मारिस्यइ
दोस किसउ जइ सापण बाझ।

(वीसलदेवरासो ४२)

अर्थात् हे स्वामिन् ! सध्या के समय मुझे दो चीजे दुःख-कष्ट पहुँचाती है, एक मेरी जवानी जो मुझे मरोड़-मरोड़कर मारे डाल रही है और दूसरी मेरा बाझ होना।

अनेक लोक गीतो मे स्त्रियों के बाझपन की भर्त्सना की गई है। इस सबध मे भोजपुरी भाषा के एक लोक गीत का साराश यहाँ दिया जाता है— कोई वध्या स्त्री अपनी सास, ननद और अपने पति-द्वारा बहिष्कृत होकर जगल मे जाकर खड़ी हो गई। उस समय वन मे से आती हुई एक बाघिनी ने उससे प्रश्न किया—हे स्त्री ! क्या घर मे तेरी सास-ननद बैरिन है, अथवा तेरा नैहर बहुत दूर है, तुझ पर ऐसी कौन-सी विपत्ति आई है जो तू इस बन मे मारी-मारी फिरती है। स्त्री ने उत्तर दिया—हे बाघिन ! न मेरी सास-ननद मेरी बैरिन है और न मेरा नैहर ही दूर है। अपनी कोख की मारी वैरागिन होकर मै इस बन मे आई हूँ। मेरी सास मुझे वध्या कहती है और ननद ब्रजवासिनी कहती है और जिनसे मेरा बाल्यकाल मे विवाह हुआ है उन्होंने मुझे घर से बाहर निकाल दिया है। ससार के सभी दुःख मैं सहन कर सकती हूँ लेकिन यह दुःख मुझसे नहीं सहा जाता है। हे बाघिन ! यदि तू मुझे खा लेती तो मैं सारी विपत्तियो से छूट जाती। बाघिन ने उत्तर दिया—हे स्त्री ! तुम जहाँ से आई हो, वही लौट जाओ। मैं तुम्हे नहीं खाऊँगी क्योकि ऐसा करने से मै भी वध्या हो जाऊँगी। तत्पश्चात् वह स्त्री नागिन के पास पहुँची। नागिन ने भी यही उत्तर दिया। वहाँ से चलकर वह अपनी माता के पास गई और उसके पास रहने के लिए शरण माँगी। लेकिन माता ने भी उसे यह कहकर अपने घर लौट जाने को कहा कि उसे शरण देने से उसकी पुत्र-वधू वध्या हो जाएगी।

(डॉक्टर उदयनारायण तिवारी, भोजपुरी भाषा और साहित्य पृष्ठ ३११-१३)

प्रोषितभर्तृका नारी

प्रोषितभतृका उन नारियो को कहते है जिनके पति परदेश गए हो। उन दिनो यातायात के साधनो की गति मद होने के कारण एक देश से दूसरे देश मे आने-जाने मे बहुत-समय लगता था। ऐसी दशा मे युवती स्त्रियो को विरह के कारण बहुत कष्ट होता और वे एक-एक दिन गिन-गिन कर बडी कठिनता से काटती थी। ढोला मारू रा दूहा, बीसलदेव रासो, मुसलमान कवि अब्दुर्रहमान का सदेशराशक तथा हेमचद्र के प्राकृत व्याकारण मे उद्धृत दोहे इसी प्रकार के विरह-काव्यो के सूचक है जिनमे विरहाग्नि से प्रज्ज्वलित

विरहिणी नारियों की प्रेमपूर्ण कोमल भावनाओं का मार्मिक चित्रण किया गया है। सेज पर अकेली सो-सो कर रात काटनेवाली दैव को मारी मारवणी अपनी मनोदशा का चित्रण करती हुई कहती है—

जब सोऊँ तब जागवइ, जब जागूँ तब जाइ।
मारू ढोलउ सम्भरइ, इणि परिरयण विहाइ॥
(ढोला मारू रा दूहा, ७६)

अर्थात् जब मैं सोती हूँ तब वह मुझे जगा देता है और जब मैं जागती हूँ वह चला जाता है। इस प्रकार ढोला की याद करते-करते रात्रि बीत जाती है।

मारवणी को जब और कोई नहीं मिला तो वह वायु से उस देश में बहने के लिए प्रार्थना करने लगी जहाँ उसका प्रीतम गया हुआ है। वह कहती है—

जिणि देसे सज्जण बसइ, तिणि दिसि वज्जउ वाउ।
उआँ लगे यो लग्ग सी, ऊही लाख पसाउ॥

अर्थात् हे वायु! जिस देश में मेरे साजन रहते हैं, तू वहाँ बह। मेरे लिये यही बड़ा भारी प्रसाद होगा कि मैं तेरा स्पर्श कर सकूँगी।

लेकिन उसकी प्रार्थना निष्फल हो जाती है और तब वह कौए को लक्ष्य करके कहती है—

कउआ, दिऊँ बधाइयाँ प्रीतम मेलई मुजझ।
काढि कलेजउ आपणउ, भोजन दिउँली तुज्झ॥

अर्थात् हे कौए! यदि तू मुझे मेरे प्रीतम से मिला दे तो मैं तुझे बधाइयाँ दूँगी और तुझे अपना कलेजा निकाल कर तेरे सामने रख दूँगी।

लेकिन कौआ बिचारा मारवणी की क्या मदद कर सकता था! ढोला के विरह में रात भर रोते-रोते उसकी आँखें सूज गईं और अपने आँसुओं से गीले हुए चीर को निचोडते-निचोडते उसके हाथों में छाले पड गए। दिनोंकी गिनती करते-करते उसकी उँगलियाँ घिस गईं। और कौओं को उड़ाते-उडाते बाँहें थक गईं। उसने गरम-गरम भात का खाना इसलिए छोड़ दिया कि कहीं हृदय में बैठे हुए नाजुक प्रीतम को आँच न लग जाए। अंत में वह कहती है कि देखो ठाकुर की दृष्टि मुझ पर पड गई है, इसलिए मेरी खैर चाहते हो तो जल्दी चले आओ—

लोभी ठाकुर आवि घरि, काई करइ विदेसि।
दिन दिन जोवण तन खिसइ, लाभ किसाकउ लेसि॥

अर्थात् ठाकुर मुझ पर लुब्ध हो गया है, विदेश मे तुम क्या कर रहे हो; शीघ्र घर आओ। दिन-दिन यौवन क्षीण हो रहा है, फिर यह किसके काम आएगा ?

अपनी विरहावस्था की भावी आशका से व्याकुल होकर राजमती भी विधाता को लक्ष्य करके कहती है—

हस गमणि मृंग लोचनी नारि
सीस समारइ दिन गणइ
ततषिणि ऊभी छइ राजदुवारि
नाहनइ जोवइ चिहुँ दिसइ
काइ सिरजी उलगाणारी नारि
जाइ. दिहाडउ रे भूरता

(बीसलदेवरासउ)

अर्थात् हस-गामिनी और मृग-लोचनी नारी अपने केशो को सँवारती-सँवारती दिन गिनती है। उस क्षण मे वह राज-द्वार पर खड़ी हुई चारों ओर अपने पति को निहारती है। हे विधाता ! तू ने प्रोषितभर्तृका नारी को क्यो सिरजा ? देखो न उसका सारा दिन पति की चिंता करते-करते बीत जाता है।

ध्यान रखने की बात है कि ये ही बालाएँ अपने कोमल शरीर पर लोहे का बख्तर धारण कर, हाथ मे धनुष-बाण ले और घोडे पर सवार होकर शत्रु-सेना के दाँत खट्टे किया करती थीं जिसका विस्तृत वर्णन कर्नल टाड के राजस्थान-इतिहास मे किया गया है।

पति-विहीना नारियाँ

पति-द्वारा परित्यक्ता होने पर अथवा पति के मर जाने पर नारियो को अनेक दारुण कष्टों का सामना करना पडता था। कतविहीना नारी की दशा का वर्णन करते हुए किसी कवि ने कहा है कि—

कत से रहित नारि निर्दोष नहीं मानी जाती, जन-जन उसके दुःशीला होने की आशका करते है। ऐसी नारी चिंता मे क्षीण होती है और उसके बधु-बाँधव उसकी परवा नही करते। वह कुल-कलक के गुरुतर भार का वहन करती हुई जीवन-यापन करती है। परदार गमन करनेवाले लपट-जनो के द्वारा वह सविकार दृष्टि से देखी जाती है। जैसे सूर्य कभी अपने ताप को नहीं छोडता वैसे ही कत-विमुक्त नारी सताप को नहीं छोडती। उससे उसके बंधु-बाँधव लज्जित होते है और उसे अपनी इच्छा-विरुद्ध कार्य करने पडते हैं।

पति-विहीना नारी अन्तः पीडा से व्याकुल रहती है। और उसे नाना प्रकार के दुख भोगने पड़ते है।

निराश्रित होने के कारण स्त्रियो को वेश्या, नर्तकी, कुट्टिनी, देवदासी तथा दासी होने के लिए बाध्य होना पड़ता था। वेश्याएँ बडे-बडे नगरो मे अपने मुहल्ले बनाकर निवास करती थीं और उनकी कुट्टिनियाँ कामुक जनों को तथा कुल-वधुओ को फँसाकर उनके पास लाती थी। ज्योतिरीश्वर ने अपने वर्णरत्नाकर (पृ० २६-२७) मे वेश्याओ और कुट्टिनियो का सुन्दर वर्णन किया है।

सती-प्रथा के अनुसार हिन्दू-रमणियाँ अपने पति के मर जाने पर चिता मे जलकर भस्म हो जाती थीं। विशेष कर राजपूत रमणियाँ विजयी शत्रुओ के हाथ से अपने सतीत्व की रक्षा करने के लिए 'जुहारव्रत' (जौहर) करती थीं और वे प्रज्वलित अग्नि-कुड मे अपने प्राणो को उत्सर्ग कर देती थीं। कर्नल जेम्स टाड ने अपने 'राजस्थान-इतिहास' मे इस प्रकार प्राणो का उत्सर्ग करनेवाली राजपूत रमणियो की अनेक वीर-गाथाओ का वर्णन किया है।

अनेक बार निराश्रित नारियाँ सामाजिक उपेक्षाओ से तग आकर व्रत-नियम और जप-तप आदि धर्म-ध्यान मे अपना समय बिताने लगती थी अथवा साध्वी हो जाती थीं। अपने पति द्वारा परित्यक्त होने पर साध्वीव्रत धारण करनेवाली नारियो के अनेक उल्लेख तत्कालीन साहित्य मे मिलते है।

तांत्रिकों का प्रभाव

जैसे पहले कहा गया है ब्राह्मण, जैन और बौद्ध-साहित्य मे स्त्रियो की जी खोलकर निंदा की गई है। मनु महाराज ने स्त्रियो को किसी भी अवस्था मे स्वतत्रतापूर्वक रहने का निषेध किया है। जैन तथा बौद्ध साधुओ को स्त्री के साथ रहना वर्जित कहा गया है। अपने पुत्र के विदेश जाते समय कमलश्री ने यही उपदेश दिया कि बेटा! स्त्रियो से अलग रहना और जब वे बातें करती हो उनकी ओर मत देखना (भविसयत्तकहा ३—१६)। उनके चित्त की अस्थिरता का वर्णन करते हुए किसी ने लिखा है—

सउ चित्तह सट्ठी मणह, बत्तीसडा हियाह।
अम्मी ते नर ढड्ढसी जो बीस सइ तियाह॥

(प्रबंधचितामणि)

अर्थात् स्त्रियो के सौ चित्त होते है, साठ मन होते हैं और बत्तीस हृदय होते हैं। जो लोग उनका विश्वास करते है वे दग्ध हो जाते है।

करकडुचरिउ (४) मे भी स्त्रियो को ससार बढ़ानेवाली कहा गया है—

जणे महिल होइ दुहणिवहगेहु
जा कीरइ णारी णरयवासु।
भवबल्ली बड्ढइ जाहे सगि
रामा लायइ दुह मणुय अंगि।

अर्थात् महिला दुखो की खान है, उसके संसर्ग से नरक मे वास करना पड़ता है, उसकी संगति से संसार की बेल बढ़ती है तथा वह मनुष्यों के दुःख मे अभिवृद्धि करती है।

लेकिन ध्यान रखने की बात है कि मद्य, मास और महिला-सेवन को परम धर्म माननेवाले कौल मार्गियों का प्रभाव बढ़ने से स्त्री-निंदा का स्थान स्त्री-पूजा ने ग्रहण कर लिया। बौद्ध-धर्म तो तान्त्रिकों का धर्म ही कहा जाने लगा। त्याग और ब्रह्मचर्य का प्रारूपण करनेवाले जैन लोग अलबत्ता इसके प्रभाव से बहुत कुछ अश मे बचे रहे। लेकिन इतना तो उन्होने भी किया कि निर्वाण को रमणी या रामा के रूप मे स्वीकार कर उसके साथ विलास करने या उसका आलिंगन प्राप्तकर शाश्वत सुख का उपभोग करने के लिए लालायित रहने लगे।

प्राचीन जैन साहित्य में दंड-विधान

प्राचीन जैन-परम्परा के अनुसार, पूर्वकाल मे लोग अपने-अपने धर्म का पालन करते हुए समय-यापन करते थे, इसलिए उनमे किसी प्रकार का वैमनस्य अथवा लडाई-झगडा नही होता था। लडाई-झगडा न होने से दड की भी कोई आवश्यकता नहीं थी। लेकिन तीसरे काल के अन्त मे, जब यति-गण धर्म से भ्रष्ट हुए और कल्पवृक्षो का प्रभाव घटा, तथा युगल-सतान की उत्पत्ति होने पर सन्तान को लेकर प्रजा मे वाद-विवाद पैदा हुआ, तब लोग मिलकर प्रथम कुलकर सुमति के पास पहुँचे। इस रामर्य नीति शास्त्र के पडितो ने सबसे पहले हाकार (हा! तुमने ऐसा किया?) दड-नीति का प्रतिपादन किया, जिससे लोग लज्जित और भयभीत होकर शात हो गए। आगे चलकर माकार (ऐसा मत करो), और तत्पश्चात् प्रथम तीर्थकर ऋषभदेव के काल मे धिक्कर (तुम्हे धिक्कार है) दंड-नीति का प्रयोग किया गया। इसके बाद ऋषभ-देव के पुत्र भरत ने परिभाषण (कोप से दुर्वचन कहना), परीमडलबध (अपराधियों को किसी खास क्षेत्र से बाहर न जाने देना), चारग (जेल मे डाल देना) और छविच्छेद (हाथ, पैर, नाक आदि काट देना) नामक दड-नीतियो को प्रचलित किया।†

---

† महाभारत (शाति पर्व ५९-५ आदि) मे कहा है कि कृतयुग मे न राज्य था, न राजा, न दंड और न कोई दड देनेवाला। समस्त प्रजा धर्म द्वारा एक दूसरे की रक्षा करती थी। तत्पश्चात् प्रजा मे, खेद व्याप्त होने से, मोह का आविर्भाव हुआ और मोह से धर्म का नाश हुआ। इससे, लोभ काम और राग उत्पन्न हुआ, जिससे लोगों मे गम्य-अगम्य, वाच्य-अवाच्य, भक्ष्य-

न्यायपरता

प्राचीन ग्रथों मे कहा गया है कि न्यायकर्त्ता को निष्पक्ष होना चाहिये तथा जॉच-पड़ताल के बाद ही निर्णय देना चाहिए।* इसी तरह राजा को भी चाहिये कि वह सुनी-सुनाई बात पर विश्वास न करे।‡ जैन-ग्रन्थो मे कहा है कि न्यायाधीश (रूपजक्ख, पालि-साहित्य मे रूपदक्ख) को अभीय (ललित-विस्तर मे आभीर्य) और आसरुक्ख (ललितविस्तर मे आसुर्य), माठर के नीति-शास्त्र के कौडिन्य की दड-नीति मे कुशल होना चाहिये और उसे लॉच नही लेना चाहिये और निर्णय देते समय निष्पक्ष रहना चाहिये (व्यवहार भाष्य १, पृष्ठ १३२)† लेकिन न्याय करने वाले राजा आदि बडे निरकुश होते थे और उनके निर्णय प्रायः दोषपूर्ण और क्रूर होते थे। साधारण-सा अपराध हो जाने पर वे कठोर-से-कठोर दड देने मे भी नही हिचकते थे। कितनी ही बार तो निरपराधी लोग दड के भागी होते और अपराधी साफ छूट जाते थे। (उत्तराध्ययन सूत्र ६-३०) आजकल की भॉति उस जमाने मे भी झूठी गवाही देना और झूठे दस्तावेज बनाने आदि की चलन थी।

अभक्ष्य और गुण-दोष का विचार न रहा। ऐसी दशा मे जब देवता-गण प्रजा को कष्ट देने लगे, तब सब लोग मिलकर स्वयंभू की शरण मे पहुँचे। स्वयभू ने शत-शहस्त्र अध्यायवाले ग्रथ की रचना की, जिसमे धर्म, अर्थ और काम का प्ररूपण किया गया था। दड-नीति का निरूपण भी इसी समय हुआ।

* शास्त्रज्ञः कपटानुसारकुशलो वक्ता न च क्रोधन-
स्तुल्यो मित्रपरस्वकेषु चरित दृष्ट्वैव दत्तोत्तरः।
क्लीबान्पालयिता शठान्व्यथयिता धर्म्यो न लोभान्वितो
द्वार्भावे परतत्वबद्धहृदयो राज्ञश्च कोपापहः॥

—मृच्छकटिक ६ पृष्ठ २५६।

‡ तस्या पडितजात्तियो सुणेय्य इतरस्सपि।
उभिन वचनं सुत्वा यथाधम्मो तथा करे॥
निसम्मकारिनो रञ्ञो यसो कित्ति च वड्ढति।

—रथलट्ठिजातक (३३२ पृ० १०५)।

† दीघनिकाय की अट्ठकथा (भाग २ पृ० ५१६) मे वैशाली की न्याय-व्यवस्था का उल्लेख है। जब वैशाली के शासक वज्जियों के पास अपराधी को लाया जाता, तब पहले उसे विनिश्चय-आमात्य के पास भेजा जाता था।

दंडों के प्रकार

जैन सूत्रों मे विविध प्रकार के दडों का विधान किया गया है—

लोहे या लकड़ी से हाथ-पैर बॉध देना (अडुबद्धग), लोहे की जजीर से पैर बाँध देना, खोड़ मे पैर बॉध कर ताला लगा देना (हडिबद्धग), जेल मे डाल देना, हाथ-पैर, कान, नाक, होठ, जीभ, सिर गले की घटी और उदर को छेद देना, कलेजे का मास खीच लेना, ऑख-दॉत और अडकोश को खीच लेना, शरीर के छोटे-छोटे टुकडे करके अपराधी को खिलाना, रस्सी बॉधकर गड्ढे मे लटका देना, वृक्ष की शाखा मे हाथ बॉधकर लटका देना, हाथ-पॉव बॉधकर पर्वत से गिरा देना, हाथी के पैर के नीचे रौदवा देना, निर्वासित कर देना, जीवन-पर्यन्त बंधन मे रखना, चाडालों के मुहल्लो मे रख देना; चदन की भॉति पत्थर पर रगडना, दही की भॉति मथना, कपडे की भॉति पछाडना, गन्ने की भॉति पेरना, शूली पर चढ़ा देना, शूली से मस्तक को भेद देना, खार मे फेंक देना, चमडे से खाल उधेड देना; लिंग को तोड़-मरोड कर सिंह की पूँछ के समान बना देना, अग्नि मे जला देना, कीचड मे धँसा देना, गरम शलाका को शरीर मे घुसेड़ देना, मर्मस्थान का पीड़न करना, क्षार-कटु-तिक्त आदि पदार्थों को पिलाना; छाती के ऊपर भारी पत्थर रखकर हड्डियों को तोड़ना, लोहे के डंडे से वक्षस्थल, उदर, गुह्य अगो को भेदना, लोहे की मुग्दर से कूटना तथा कोड़ों, बेतों, दडों, लाठियों, घूसो, ठोकरो आदि से मारना-पीटना (औपपातिकसूत्र ३८, पृ० १६२-३, प्रश्नव्याकरण १२, पृ० ५०-४७; उत्तराध्ययनटीका, पृ० १६० अ)।

चोरों को दंड

चोरी के अपराध मे भयंकर दड दिए जाते थे। राजा लोग चोरो के हाथ कटवा देते थे। शूली पर चढा देना तो साधारण बात थी। एक बार किसी ब्राह्मण ने एक बनिए के रुपयों की थैली चुरा ली। राजा ने आज्ञा दी कि अपराधी को १०० कोड़े लगाए जायँ या विष्ठा खाने को कहा जाय। ब्राह्मण

यदि वह निर्दोष हुआ तो उसे छोड़ दिया जाता, नहीं तो व्यावहारिक के पास भेज दिया जाता। व्यावहारिक उसे सूत्रधार के पास, सूत्रधार अष्ठकुल के पास, अष्टकुल सेनापति के पास, सेनापति उपराजा के पास और उपराजा उसे राजा के पास भेज देता था। तत्पश्चात् राजा उसके मामले की जाँच-पड़ताल करता और निर्दोष होने पर उसे छोड़ देता था। अन्यथा प्रवेणी-पुस्तक के आधार पर उसके लिए दंड व्यवस्था करता।

ने कोडे खाना मजूर कर लिया, लेकिन बीच मे ही उसने विष्ठा-भक्षण करने की इच्छा व्यक्त की (आचारागचूर्णि २, पृ० ६५)। राजकर्मचारी चोरो को नगर के बीच घुमाते हुए, चौराहों पर तीक्ष्ण कोडों से मारते-पीटते वध्य-स्थान को ले जाते थे। मैले-कुचैले वस्त्र, गले मे लाल फूलो की माला, तेल-सिक्त शरीर धूल से व्याप्त, केशो मे धूल लगी हुई, तिल-तिल करके उनके शरीर के अवयवो को काटा जाता और फिर खून से लथपथ अपने मास के टुकडो को वे भक्षण करते (प्रश्नव्याकरण १२, पृ० ५४, विपाकसूत्र २, १३, ३, २१)।

स्त्रियॉ भी दड की भागी होती थीं, यद्यपि गर्भवती स्त्रियों को दड नही दिया जाता था। किसी पुरोहित ने अपनी गर्भवती लडकी को घर से निकाल दिया। वह किसी गधी के घर नौकरी करने लगी। लड़की गधी के बहुमूल्य बर्तन और कपडे चुराकर चुपचाप बेच लेती। पकडे जाने पर राजा ने प्रसव के बाद उसे मृत्यु-दड की आज्ञा दी (गच्छाचारवृत्ति ३६)।

परदार-गामियों को दंड

चोरो की भॉति दुश्शील मनुष्यो को भी शिरोमुन्डन, तर्जन, ताड़न, लिंगच्छेदन,† हस्त-पादच्छेदन, कर्ण-नासिकाकंट-छेदन आदि कठोर दड दिए जाते थे (सूत्रकृताग ४,१,२२)। जैन-सूत्रो मे वणिकपुत्र उज्झिय की कथा आती है। वह कालज्झया वैश्या के घर जाया करता था। राजा भी उस वैश्या से प्रेम करता था। एक दिन उज्झिय कामज्झया के घर पकडा गया। राजकर्मचारियों ने उसकी खूब मरम्मत की। उसके दोनो हाथो को उसकी पीठ के पीछे बॉध, उसके नाक-कान काटकर, उसके शरीर को तेल से सिक्त कर, मैले-कुचैले दो वस्त्र पहना, कणवीर के फूलों की माला गले मे डाल, अपने शरीर के मॉस के टुकडो को उसे खिलाते हुए खोखले बॉस से आवाज करते हुए, स्थान-स्थान पर उसके अपराध की घोषणा करते हुए उसे वध्य-स्थान को ले गये (विपाकसूत्र २,२३)। सगड़ और सुदर्शना वैश्या को भी इसी प्रकार दड दिया गया। सगड ने आग से तपती हुई स्त्री की मूर्त्ति का आलिंगन करते हुए प्राणो का त्याग किया (विपाकसूत्र ४,३१)। परदार-गमन के कारण कमठ को मिट्टी के कसोरों की माला गले मे पहना, गधे पर बिठाकर सारे नगर मे घुमाते हुए नगर से निर्वासित कर दिया गया (उत्तरा-

† तुलना करो—आचार्यपत्नीं स्वसुतागच्छस्तु गुरुतल्पगः।
लिंग छित्त्वा वधस्तत्रसकामायाः स्त्रिया अपि ॥
—याज्ञवल्क्यस्मृति ३-५-२३२

ध्ययन २३, पृ० २८५) ।

जान पड़ता है कि कचुकी, वर्षधर, महत्तर, दडधर, दडारक्षिक, द्वोवारिक आदि राज-कर्मचारियों के विद्यमान रहते हुए भी राजा का अतःपुर सुरक्षित नही रहता था और यार लोग किसी तरह अदर पहुँच जाते थे । राज-मत्री बृहस्पति और श्रीविजयनगर के किसी व्यापारी को इसी अपराध के कारण प्राण-वध की आज्ञा दी गई थी (विपाकसूत्र ५,३५; पिंडनिर्युक्ति १२७) ।*

हॉ, ब्राह्मण के सर्वश्रेष्ठ माने जाने से† सभवतः उन्हे कठोर दड का भागी नहीं होना पडता था । यदि कोई ब्राह्मण दुश्चरित्रता के कारण पकड़ा जाता तो वेदो का स्पर्श करने मात्र से उसका प्रायश्चित पूरा हुआ समझा जाता था (व्यवहारभाष्य पीठिका ११७, पृ० १०) ‡

हत्यारों को दंड

हत्या करनेवालो को जुर्माना (अर्थदड) देना पडता तथा वे मृत्यु-दड के भी भागी होते थे । मथुरा मे नदिसेण नामक राजकुमार रहता था । उसने राजा के नाई के साथ मिलकर राजा को मारने का षड्यत्र रचा । लेकिन षड्यंत्र का भेद खुल गया और राजकुमार को मृत्युदड दिया गया । राज-कर्मचारियो ने उसे लोहे के गरम सिंहासन पर बैठाया; ताबे, जस्ते, शीशा, चूना और खारे तेल से तप्त लोहे के हार को लोहे की सॅडसी से पकड उसके गले मे पहनाया गया । इसी तरह उसे कटिसूत्र, अर्धहार, मुकुट आदि पहनाये गए । (विपाक ६,३८-६) । हत्या करनेवाली स्त्रियो को भी दंड से मुक्त नही समझा जाता था । राजा पुरुनदि की रानी देवदत्ता ने अपनी सास को तप्त लोहे के दड से दाग कर मार डाला था । इस पर राजा ने उसके हाथ पीठ-पीछे बॅधवा और उसके नाक-कान कटवा कर शूली पर चढवा दिया (विपाक, पृ० ४६,५५) ।

राजाज्ञा का उल्लंघन

महाभारत (शातिपर्व ५६-१०) मे कहा है कि राजा की प्रसन्नता से

---

*. मनुस्मृति (८-३७२) मे व्यभिचारिणी स्त्री को कुत्तो से भक्षण कराने का विधान है ।

†. (महाभारत मे शाति पर्व ५६-६७), मे ब्राह्मण को दण्ड-बाह्य कहा है ।

‡. गोतमसूत्र (सेक्रेड बुक्स आव द ईस्ट, १२-१ मे विधान है कि शूद्र शरीर के जिस अवयव से अपमान करे उस अवयव को कटवा देना चाहिये, तथा देखो ८. १२ आदि ।

समस्त प्रजा प्रसन्न होती है और उसके व्याकुल होने से सब लोग दुखी होते है। प्राचीन भारत मे राजा एकछत्र शासक था और उसकी आज्ञा उल्लघन करने पर कठोर दंड दिया जाता था। राजाज्ञा उल्लघन करनेवाले व्यक्तियो को तेज खार मे डाल दिया जाता था† और जितना समय गाय दुहने मे लगता है, उतने समय मे उनका ककाल मात्र अवशेष रह जाता था (आचारागचूर्णि ७, ३८) जैन-सूत्रो मे कहा है कि ऋषि-परिषद् का अपमान करनेवाले को केवल अमनोज्ञ वचन कह देना, ब्राह्मण-परिषद् का अपमान करनेवाले को कुडी या कुत्ते का चित्र बनाकर निर्वासित कर देना तथा गृहपति-परिषद् का अपमान करनेवाले को तृण-पुआल से लपेट कर जला देना पर्याप्त है, लेकिन क्षत्रिय-परिषद् का अपमान करनेवाले को, उसके हाथ, पैर, और सिर काट, उसे सूली पर चढा कर एक झटके से मार देना चाहिये (रायपसेणियसुत्त १८४, पृ० ३२२)।

राजा लोग बडे शक्की होते थे और किसी पर जरा सदेह भी हो जाने पर वे उसके प्राण लेकर ही छोडते थे। नद राजा का मत्री कल्पक अपने पुत्र-विवाह का उत्सव मना रहा था। नद का पहला मत्री कल्पक से द्वेष रखता था उसने राजा के पास दासी को भेजकर झूठ-मूठ कहलवा दिया कि कल्पक अपने पुत्र को आपकी गद्दी पर बैठाना चाहता है। इतना सुनते ही नद ने कल्पक को कुटुम्ब-सहित कुएँ मे डलवा दिया (आवश्यकचूर्णि २, पृ० १८२)। नौवे नद राजा के मत्री शकटाल के विषय मे भी यह प्रसिद्ध है कि जब पुत्र-विवाह के समय उसने राजा के नौकरों चाकरों को सज्जित किया, तब वररूचि ने राजा के पास पहुँचकर चुगली लगाई कि शकटाल राजा को मारकर अपने पुत्र को राजगद्दी देना चाहता है। राजा मत्री से नाराज हो गया। यह देखकर शकटाल ने अपने कुल की रक्षा के लिये अपने पुत्र को अपनी (शकटाल की) ही हत्या करने के लिए बाध्य किया (आवश्यकचूर्णि पृ० १८४)। नद का सुबधु नामक मन्त्री किसी चाणक्य से द्वेष रखता था। एक बार उसने राजा के पास झूठ-मूठ कह दिया कि चाणक्य ने आपकी माँ को मार दिया है। राजा को विश्वास हो गया। अगले दिन चाणक्य जब राजा के पादवदन के लिए आया, तब राजा ने उसकी ओर ध्यान न दिया। यह देखकर चाणक्य ने जगल मे पहुँच अग्नि मे जलकर प्राण त्याग दिया (दशवैकालिकचूर्णि, पृ० ८१ आदि)। इसी प्रकार बनारस के राजा शख ने, कोई मामूली-

† तुलना करो अर्थशास्त्र पृ० २५० से।

सा अपराध हो जाने पर, अपने मत्री नमुचि को गुप्त रूप से प्राणवध की आज्ञा दी (उत्तराध्ययन-टीका, १३,१८५) ।* चद्रगुप्त जब पाटलिपुत्र का राजा हुआ, तब कुछ क्षत्रिय चद्रगुप्त को मयूर-पोषको का पुत्र समझकर उसकी अवहेलना करने लगे। इस पर क्रोध मे आकर राजा ने क्षत्रियो के सारे गाँव का जलवा दिया (बृहत्कल्पभाष्य, १,२४८६) ।

एक बार इद्रमहोत्सव आने पर राजा ने घोषणा कराई कि सब लोग नगर के बाहर जाकर उत्सव मनाएँ। किसी पुरोहित का पुत्र वैश्या के घर छिप गया। पुरोहित अपने पुत्र की रक्षा के लिये अपना समस्त धन देने को तैयार था, लेकिन राजा ने एक न सुनी और उसे सूली पर चढा दिया। उत्तराध्ययनटीका ४ पृष्ठ ८२) । इसी प्रकार कौमुदी-महोत्सव के आने पर, राजा के घोषणा करने पर भी, जब किसी गृहस्थ का पुत्र सूर्यास्त के बाद नगर के बाहर नही गया, तब राजा ने उसे प्राणदड की आज्ञा दी। बहुत अनुनय-विनय करने पर भी गृहस्थ केवल एक ही पुत्र की रक्षा कर सका (सूत्रकृतागटीका, २,७ पृष्ठ ४१३) । ऐसे भी उदाहरण मिलते है, जब कि राजा ने, कानो के कुन्डल ठीक न कर सकने के कारण सुवर्णकारो की श्रेणी को नगर से निकाल दिया (नायाधम्मकहा ८, १०५), बिना कारण ही एक चित्रकार को मरवा डाला (वही ७,१०७), तथा राजकुमार को स्वस्थ न कर सकने के कारण एक वैद्य को प्राणदड दे दिया (बृहत्कल्पभाष्य ३,३२५६) ।

जेलखाना

जेलखानो की स्थिति अत्यत शोचनीय थी और जेलो मे कैदियो को भयंकर कष्ट दिए जाते थे। कैदियो का सर्वस्व अपहरण करके उन्हे जेलखाने मे डाल दिया जाता था यहाँ कैदी क्षुधा से पीडित, शीत-उष्ण-वेदना से अभिभूत, खाँसी-कोढ आदि रोगों से ग्रस्त, नख-केश बढे हुए वे अपने ही मल-मूत्र मे पडे सडते रहते थे। जब वे जेल मे सड़-सड़कर मर जाते, तब उनके पैरो मे रस्सी बाँध उन्हे खाई मे फेंक दिया जाता, जहाँ उन्हे भेड़िए, गीदड़ आदि जीव-जतु भक्षण कर जाते थे। बहुत से कैदियों के शरीर मे तो कीडे पड़ जाते थे (प्रश्नव्याकरणसूत्र १२, पृष्ठ ५५) ।

---

*. महाबोधिजातक (पृष्ठ २२६ आदि) मे कहा है कि एक राजा ने अपने पाँच मन्त्रियो का सर्वस्व अपहरण करके उनके बालो को पाँच चोटियो (पच-चूलक) मे बाँधकर, उनके हाथो-पाँवों मे बेड़ी डाल, गोबर से सिंचन करते हुए, उन्हे देश से निर्वासित कर दिया।

जेल मे ताँबे, जस्ते, शीशे, चूने और क्षार तेल से भरी हुई लोहे की कुडियाँ गरम करने के लिये आग पर रखी रहतीं, तथा बहुत-से मटके हाथी, घोडे, गाय, भैस, ऊँट, भेड और बकरी के मूत्र से भरे रहते थे। हाथ-पाँव बाँधने के लिए अनेक काष्ठमय बधन, खोड, बेडी और श्रृङ्खला, मारने के लिए अनेक बाँस-बेंते तथा बल्कल और चमडे के कोडे, कूटने के लिए अनेक पत्थर की शिलाएँ और मुद्गर, बाँधने के लिए अनेक रस्से, चीरने के लिए अनेक तलवार, आरे और छुरे, ठोकने के लिए लोहे की कीलें और बाँस की खपच्चें, चुभाने के लिए सूई और लौह-शलाकाएँ तथा काटने के लिए छुरी, कुठार, नखच्छेदक आदि उपकरण यहाँ सदा तैयार रहते थे।

सिंहपुर नगर मे दुर्योधन नामक एक दुष्ट जेलर रहता था। वह अनेक चोरो, परस्त्री-गामियो, गँठकतरो, राजद्रोहियो, ऋण-ग्रस्तों, बाल-घातको—विश्वास-घातको, जुआरियों और धूर्तों को अपने-अपने आदमियो से पकडवा कर उन्हे सीधा लिटाता और लौहदड से उनके मुँह खुलवाकर उनमे तप्त ताँबा, खारा तेल तथा हाथी-घोडे आदि का मूत्र डालता, अनेक कैदियो को उल्टा लिटा-कर, वह उन्हे खूब पिटवाता, किसी के हाथ-पैर मे काष्ठ अथवा सकल बाँध देता, किसी के हाथ, पैर, नाक आदि काट लेता, किसी को वेणु, लता आदि से मारता, किन्हीं को सीधा लिटाकर, उनकी छाती पर शिला रखता और दोनो ओर से दो पुरुषो से एक लाठी पकडवाकर, उसे जोर से हिलवाता, किन्हीं के सिर नीचे और पैर ऊपर करके, उन्हे गड्ढे मे से पानी पिलवाता, असिपत्र आदि से उन्हे कष्ट देता, क्षार-तेल को उनके शरीर पर चुपडता; उनके, मस्तक, गले की घटी, हथेली, घुटने और पैरो के जोड़ मे लोहे की कीलें ठुकवाता, बिच्छू-जैसे काँटो को शरीर मे घुसवाता, सुई आदि को हाथों-पाँवों की उँगलियों मे ठुकवाता, नखो से जमीन खुदवाता तथा नखच्छेदक आदि द्वारा अग को पीड़ा पहुँचाता, घायल हुए स्थानो पर गीले दर्भ-कुश बाँधता और सूख जाने पर तड़-तड़ की आवाज से उन्हे उखाड लेता (विपाक-सूत्र ६,३६-८)।

राजगृह का एक कारागार

राजगृह मे धन्य नाम का एक सार्थवाह रहता था। एक बार राजा का कोई अपराध होने पर नगर रक्षकों ने पकड कर उसे कारागार मे डाल दिया। उसी कारागार मे धन्य के पुत्र का घातक विजय नाम का चोर भी सजा काट रहा था। दोनों को एक खोड मे बाँध दिया गया। जिससे दोनों को साथ-साथ रहना पडता था।

धन्य की स्त्री अपने पति के लिए रोज अपने दासचेट के हाथ भोजन का डिब्बा कारागार मे भेजा करती थी। एक दिन विजय चोर ने धन्य से भोजन माँगा। धन्य ने उत्तर दिया कि मैं भोजन को कौओ और कुत्तो को खिला दूँगा, कूडी पर फेक दूँगा, लेकिन तुम-जैसे पुत्रघातक को एक कण भी न दूँगा।

एक दिन भोजन के उपरात धन्य को शौच जाने की हाजत हुई, धन्य ने विजय से एकात स्थान मे चलने को कहा। विजय ने उत्तर दिया कि तुम तो खूब खाते-पीते और मौज करते हो, इसलिए तुम्हे शौच जाना स्वाभाविक है, लेकिन मुझे तो रोज कोडे खाने पडते है और मैं सदा ही क्षुधा-तृषा से पीडित रहता हूँ। यह कहकर विजय ने धन्य के साथ जाने से इन्कार कर दिया। लेकिन धन्य के लिए देर तक ठहरना मुश्किल था। उसने फिर विजय से चलने का अनुरोध किया। अत मे, विजय इस शर्त पर चलने के लिए राजी हुआ कि वह उसे अपना भोजन खिलायेगा।

कुछ दिनो के बाद, अपने मित्रो के प्रभाव से और बहुत-सा खर्च कर धन्य कारागार से छूट गया। वह आलकारिक सभा (नाई की दूकान) मे क्षौर-कर्म कराकर और पोखरिणी मे स्नान कर अपने घर चला गया।

प्राचीन जैन साहित्य में चोर-कर्म

[भारतीय पुरातत्व की खोज मे जैन आगम-ग्रन्थो का महत्वपूर्ण स्थान है, और इनके अध्ययन के बिना भारतीय इतिहास और सस्कृति का अध्ययन पूर्ण नहीं कहा जा सकता। मोटे तौर पर इनका रचनाकाल ई० स० की पहली सदी से छटी सदी तक माना जाता है। जैन आगम-काल मे खेती-बारी और बनिज-व्यापार मे वृद्धि होने से क्षत्रिय राजाओ का प्रभुत्व बढ रहा था, जिससे सामन्तो के अत्याचार और लूट-खसोट मे वृद्धि हो रही थी। धन-सम्पत्ति और माल-खजाने के कारण गण-सघो मे जगह-जगह युद्ध और लडाई-झगडे हुआ करते थे, जिससे देश मे शाति और समाज-व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गयी थी। चोर, डाकू, बटमार और जुआरियो आदि के उपद्रव बढ़ते जा रहे थे। चोरी, द्यूत और छल-कपट आदि की बढती हुई आवश्यकता देख कर ही सभवतः इन सब कर्मो को विद्याओं और कलाओ मे परिगणित कर राज-कुमारो के लिए इनका अध्ययन आवश्यक बताया जाने लगा था। चोरी, डकैती आदि को रोकने के लिए कठोरतम कानून बनाये जाते थे, फिर भी वे कारगर नही होते थे। ऐसी विषम परिस्थिति मे भक्तगण श्रमण-धर्म को स्वी-कार कर अपने दुख-दारिद्रय का अन्त करने मे लगे हुए थे। प्रस्तुत लेख मे जैन आगमों मे उल्लिखित चोर-कर्म का वर्णन किया गया है।—लेखक]

प्राचीनकाल मे चोर-विद्या एक महत्वपूर्ण विद्या मानी जाती थी तथा द्यूत और कपट-कला की भॉति राजकुमार इस विद्या मे सिद्धहस्त होते थे† । चोर-विद्या को 'तस्करमार्ग' भी कहा गया है। चोर-शास्त्र, स्तेयशास्त्र, अथवा स्तेयसूत्र इस विषय के प्रमुख ग्रन्थ थे, जिनमे चोरी करने की विधि का उल्लेख

---

† देखो दशकुमारचरित, पृ० २२।

था। मूलदेव, जिसे मूलभद्र, मूलश्री, कलाकुर, कर्णिसुत, गोणिपुत्र आदि नामो से उल्लिखित किया गया है, स्तेयशास्त्र का प्रवर्तक था। वह लोक-विख्यात, वैभवशाली, समस्त कलाओ मे निपुण और धूर्त-शिरोमणि था तथा कन्दलि आदि शिष्यो से घिरा रहता था। कडरीक, एलाषाढ, शश और खडपाणा उसकी मडली के मुख्य सदस्य थे, जो एक जगह बैठकर अनेक आख्यान सुनाते और गप्पाष्टके लडाया करते थे।*

चोरों के देवता : स्कंद (कुमार कार्तिकेय) चोरो का देवता है और चोरो को स्कदपुत्र कहा गया है। मृच्छकटिक (३, पृ० ७३) मे शर्विलक ने अपने आपको कनकशक्ति, भास्करनन्दि और योगाचार्य का प्रथम शिष्य कहा है। इससे चोरशास्त्र मे निष्णात आचार्यों की परम्परा का पता चलता है। इन आचार्यों की कृपा से ही शर्विलक ने योगरोचना-नामक सिद्ध-अजन प्राप्त किया था, जिसे आँखो मे लगाने से वह अदृश्य हो जाता था। जब चोर रात्रि के समय चोरी करने जाते, तो वे अपने इष्टदेवता कुमार कार्तिकेय, खरपट§, प्रजापति, सर्वसिद्ध, बलि, शबर, महाकाल और कात्यायनी (कुमार कार्तिकेय की माता) का स्मरण करते थे।†

चोर-विद्या का अध्ययन : विद्यार्थी गुरुओ के चरणो मे बैठ कर चोर-विद्या सीखते थे। पचतत्र मे कहा है कि सुकुमार ने अपने पिता के गुरु अति-वरुण के समीप जाकर तस्कर-मार्ग का अध्ययन किया। यह विद्या चुने हुए शिष्यों को ही पढ़ायी जाती थी। कभी-कभी तो गुरु गुड़ रह जाते और चेला शक्कर बन जाते थे। कहते हैं, लोक-विख्यात चोर मूलदेव का पुत्र चोर-विद्या मे कुशलता प्राप्त करने पर अपने पिता के भी कान काटने लगा था। एक बार मूलदेव सोया हुआ था। उसके पुत्र ने अपने पिता के नीचे बिछी हुई चादर को इस सफ़ाई से उड़ाया कि मूलदेव कपास के एक ढेर के ऊपर आ गया और उसे बिलकुल पता न चला (कथासरित्सागर, २४)।

बाप-दादों का पेशा : बौद्ध ग्रन्थों के अगुलिमाल की भाँति जैन ग्रन्थो मे रौहिणेय नामक एक चोर का उल्लेख प्रसिद्ध है। जब रौहिणेय के पिता का

---

* देखिए हरिभद्रसूरि, धूर्ताख्यान, क्षेमेन्द्र, कलाविलास। § मत्तविलास प्रहसन (पृ० १५) खरपट को चोर-शास्त्र का प्रणेता कहा है (**नमः खरपटायेति वक्तव्यं येन चोरशास्त्रं प्रणीतम्**)। † देखिए भास, चारुदत्त (३, पृ० ५६, भास, अविमारक ३, पृ० ४६); ब्लूमफील्ड, द आर्ट ऑव स्टीलिंग, अमेरिकन जर्नल ऑव फ़ाइलोलोजी, जिल्द ४४, पृ०९८-९।

देहान्त हुआ तो रौहिरोय की माँ ने पीढी-दर-पीढी से चले आते चोरी के पेशे को स्वीकार करने के लिए अपने पुत्र से अनुरोध किया। तत्पश्चात् प्रथम चोरी के अवसर पर उसके सिर को दबा कर (न्युछनानि विधाय ?) उसने सात बत्तियो का दीपक जलाया और अपने पुत्र के मस्तक पर तिलक कर उसे आशीर्वाद दिया‡। बहुत सभव है कि चौर्य-सबधी इस प्रकार के विधि-विधानो का उल्लेख स्तेयसूत्र आदि ग्रन्थो मे किया हो।

जैन ग्रन्थो में चौर्य-सम्बन्धी उल्लेख : जैन ग्रन्थों मे सात प्रकार के चोर गिनाये गये हैं—चोर चोरी कराने वाला, चोरी की सलाह देनेवाला, चोरी का भेद जानने वाला, चुराई हुई बहुमूल्य वस्तु को कम मूल्य मे खरीदने वाला, चोर को अन्न देने वाला और चोर का आश्रयदाता *। निम्नलिखित अठारह प्रकार से चोरो का हौसला बढाया जाता था—चोर मे विश्वास की भावना पैदा कर उसे प्रोत्साहित करना, कुशल-क्षेम पूछना, इशारा करना, राज-कर न देना, चोर की उपेक्षा करना, चोर जिस मार्ग से गया हो, पूछे जाने पर उस मार्ग को उलटा बता देना, चोर को सोने के लिए स्थान देना, चोर के पदचिह्नो का पता न लगने देना, चोर को विश्राम के लिए स्थान देना, प्रणाम करना, आसन देना, उसे छिपा देना, भोजन खिलाना, चोरी के धन को अन्यत्र बेच देना, चोर को गरम पानी, तेल आदि देना, अग्नि देना, जल देना और रस्सी देना†। आश्चर्य नहीं कि चौर्य-सम्बन्धी ये उल्लेख चौर-शास्त्र के किसी महत्वपूर्ण ग्रन्थ से लिये गये हो।

---

‡ न्युंछनानि विधायाशु प्रदीपं सप्तवर्तिभिः।
विधाय तिलक माता पुत्रायत्याशिषं ददौ ॥
(रौहिरोयचरित, १२२)

* चौरश्चौरापको मत्री भेदज्ञः काणकक्रयी।
अन्नदः स्थानदश्चैव चौरः सप्तविधः स्मृतः ॥
(प्रश्नव्याकरण टीका ३, १२, पृ० ५३)

† भलन कुशल तर्जा राजभागोऽवलोकन।
अमार्गदर्शन शय्या पदभंगस्तथैव च ॥
विश्रामः पादपतनमासन गोपन तथा।
खण्डस्य खादन चैव तथाऽन्यन्माहराजिकम् ॥
पाद्याग्न्युदकरज्जूना प्रदान ज्ञानपूर्वकम्।
एताः प्रसूतयो ज्ञेया अष्टादश मनोषिभिः ॥ (वही)

चोरों के प्रकार : जातक ग्रन्थो से पता लगता है कि बहुत से चोर चोरी का धन गरीबो मे बॉट देते थे और लोगो का कर्ज चुका देते थे । पेसनक (प्रेषणक = सदेशा भेजने वाले) चोर पिता-पुत्र दोनो को बन्दी बना कर रखते थे तथा पिता से धन प्राप्त होने के पश्चात् ही पुत्र को छोडते थे (पानीय जातक ४६६) । उद्यान-मोषक चोर श्रावस्ती के उद्यान मे घूमते-फिरते थे । उद्यान मे किसी सोते हुए व्यक्ति को देखकर वे उसे ठोकर मार कर उठा देते । यदि ठोकर लगने पर भी वह व्यक्ति गाढी निद्रा मे सोया रहता तो वे उसे लूट लेते थे (दिव्यावदान, पृ० १७५) । चोर बडे साहसी और निर्भीक होते थे तथा जो सामने आ जाए उसे मार डालते थे । वे राजा के अपकारी, जगल-गॉव-नगर-पथ और गृह आदि को नष्ट कर देने वाले, यात्रियो का धन अपहरण करने वाले, जुआरी, कर वसूल करने वाले, स्त्री बन कर चोरी करने वाले सेंध लगाने वाले, गॉठ कतरने वाले, बलपूर्वक धन छीन लेने वाले तथा गाय-घोडा और दासी आदि का अपहरण करने वाले होते थे (नायाधम्मकहा ११, पृ० ४२-४३) ।

सेंध लगाना : प्राचीन ग्रन्थो मे सेंध के विविध प्रकार बताये गये है* । सेंध इस प्रकार लगानी चाहिए, जिससे बिना किसी रुकावट के घर के भीतर प्रवेश किया जा सके । चोर को शीलवान नही होना चाहिए बल्कि चोरी करते समय उसे यथासभव निर्दयता से ही काम लेना चाहिए । चोरी का माल उठाते समय घर का कोई आदमी पकड न ले, इसलिए ऐसे आदमियों को पहले ही खतम कर देना चाहिए (देखिए महिलामुख जातक २६) । सेंध लगाते समय कभी सर्प द्वारा काटे जाने का भी भय रहता था† । घर मे प्रवेश

---

* उत्तराध्ययन (४, पृ० ८०) मे कपिशीर्ष, कलश, नन्दावर्त, कमल और मनुष्य के आकार की सेंध का उल्लेख है । मृच्छकटिक (३. १४) मे पद्मव्याकोश, भास्कर, बालचन्द्र, वापी, विस्तीर्ण, स्वस्तिक और पूर्णकुभ नामक सेंधो का उल्लेख है । भगवान् कनकशक्ति के आदेशानुसार यदि पक्की ईंटों का मकान हो तो ईंटो को खींच कर, कच्ची ईंटो का हो तो ईंटो को छेद कर, मिट्टी की ईंटो का हो तो ईंटो को भिगोकर तथा लकडी का मकान हो तो लकडी को चीर कर सेंध लगानी चाहिए (वही पृ० ७२, ७३) । भास के चारुदत्त नाटक (३. ६. पृ० ५६) मे सिंहाक्रान्त, पूर्णचन्द्र, झषास्य, चन्द्रार्थ, व्याघ्रवक्त्र और त्रिकोण आकार की सेंधे बतायी गयी है । दशकुमारचरित (२, पृ० ७७, १३४) के अनुसार फणिमुख और उरगास्य नामक औजारो से सेंध लगायी जाती थी ।

† देखिए मृच्छकटिक (३. १६, पृ० ७४) ।

करने से पहले चोर काकली (एक बाजा) बजा कर देखते थे कि कोई आदमी जाग तो नहीं रहा है। इसके सिवाय चोर सँडसी (संदशक), लकड़ी का बना पुरुष-शिर (पुरुष-शीर्षक), मापने की रस्सी (मानसूत्र), रस्सी बँधी हुई केकड़ों के समान कोई वस्तु—सभवतः ऊपर चढने के लिए—(कर्कटकरज्जु), दीपक का ढक्कन (दीपभाजन), दीपक बुझाने के लिए पतगों की डिबिया (भ्रमर-करडक) तथा अदृश्य होने के लिए गुटिका और अजन आदि अनेक साज-सामान ले कर चोरी करने जाते थे*।

मंडित चोर : जैन सूत्रो मे अनेक सुप्रसिद्ध चोरों के नाम आते है। वेन्यातट नगर मे मडित नाम का एक चोर रहता था। रात को वह चोरी करता तथा दिन मे दरजी का काम करके अपनी आजीविका चलाता था। मंडित अपनी बहन के साथ किसी उद्यान के तहखाने मे रहता था। इस तहखाने में एक कुआँ था। जो कोई व्यक्ति चोरी का माल ढो कर जाता, मडित की बहन उस व्यक्ति को पहले तो आसन पर बैठा कर उसके पाद-प्रक्षालन करती और बाद मे उसे कुएँ मे ढकेल कर मार डालती।

मूलदेव (प्रसिद्ध चोर) ने राज्य-पद पर अभिषिक्त हो जाने पर मडित चोर को पकडने का बहुत प्रयत्न किया, किन्तु सफलता न मिली। अन्त मे एक दिन मूलदेव स्वय नीले कपडे पहन रात को चोर की खोज करने निकला। वह एक जगह छिप कर बैठ गया। जब वहाँ चोर आया तो मूलदेव ने अपने आप को कापालिक भिक्षु बताया। मडित ने कहा—चल, तुझे आदमी बना दूँगा। मूलदेव उसके पीछे-पीछे चल दिया। मडित ने किसी घर मे सेंध लगा कर चोरी की और चोरी का माल मूलदेव के सिर पर रख कर अपने घर लाया। मडित ने अपनी बहन से कहा—देख, अतिथि के पाद-प्रक्षालन कर। लेकिन मडित की बहन ने अतिथि को कुएँ मे न ढकेल कर उसे भाग जाने का इशारा किया। मूलदेव भाग गया। मडित भी उसके पीछे-पीछे भागा, लेकिन मूलदेव का पता न चला। प्रातःकाल होने पर मडित राजमार्ग पर बैठ कर अपना वही दरजी का काम करने लगा। राजा मूलदेव ने मडित को बुलवाया। मडित समझ गया कि रात वाला भिक्षु राजा ही था। अन्त मे मूलदेव ने मडित का सारा धन लेकर उसे शूली पर चढ़वा दिया। (उत्तराध्ययनटीका ४, ६५)।

भुजंगम चोर : एक बार बनारस की प्रजा ने राजा से शिकायत की कि महाराज, सेंध लगाने मे निपुण किसी चोर ने समस्त नगरवासियों को परेशान

* देखिए दशकुमारचरित २, पृ० ७७, चारुदत्त ३, पृ० ५८।

कर रखा है और वह अभी तक पकडा नही गया। राजा ने नगर के आरक्षको को बुला कर बहुत डॉटा। सयोग से इस समय वहॉ शखपुर का निवासी कुमार अगडदत्त मौजूद था। उसने कहा—सात दिन के अन्दर-अन्दर मै चोर का पता लगा दूँगा।

अगडदत्त वेश्यालयो, मद्यशालाओ, द्यूतगृहो, बाजारों, उद्यानो, मठों, मदिरो और चौराहो आदि मे चोर की खोज करता फिरने लगा लेकिन कहीं पता न चला। एक दिन अगडदत्त निराश भाव से बैठा हुआ था कि इतने मे उसे एक परिव्राजक दिखाई दिया। परिव्राजक ने गेरुए रग के वस्त्र पहने थे, सिर उसका मुँडा हुआ था तथा त्रिदड, कुडी, चमर और माला उसके हाथ मे थी। अगडदत्त ने सोचा, हो न हो, यही चोर होना चाहिए। परिव्राजक के प्रश्न करने पर कुमार ने दरिद्र पुरुष कह कर अपना परिचय दिया। परिव्राजक ने कहा—चल, तेरा दारिद्रय दूर करूँ।

रात्रि हो जाने पर परिव्राजक अपनी तलवार निकाल कर नगर की ओर चल दिया। उसने एक धनी वणिक के घर सेंध लगायी। मकान के अन्दर प्रवेश कर उसने टोकरियॉ भर कर धन प्राप्त किया। फिर इस धन को उठवा कर वह अपने घर ले चला। इस बीच मे अवसर पाकर अगडदत्त ने अपनी तलवार से उसे मार दिया। मरते समय चोर ने बताया कि वह प्रसिद्ध भुजगम चोर है तथा श्मशान के पास वट वृक्ष के नीचे एक तहखाने मे उसका घर है, जहॉ उसकी बहन रहती है। इतना कह कर भुजगम ने प्राण त्याग दिये। अगडदत्त ने राजा के पास पहुँच कर भुजगम की मृत्यु के समाचार सुनाये, जिसे सुन कर सब लोग बहुत प्रसन्न हुए (उत्तराध्ययन, ४, पृ० ८७)।

चोरों के गॉव : पेशेवर पक्के चोर अपने दल-बल-सहित चोर-पल्लियो मे रहा करते थे। रोहिणेय चोर राजगृह के पास वैभार पर्वत की गुफा मे निवास करता था। पुरिमताल नगर के उत्तर-पूर्व की चोर-पल्ली एक पर्वत की गुफा मे थी, जो बॉसो की बाड और गड्ढों से घिरी हुई थी। इसके आसपास पानी का मिलना दुर्लभ था। बाहर जाने के लिए इसमें अनेक मार्ग थे, जिनका पता हर किसी को नहीं चलता था। यहाँ विजय नाम का चोर-सेनापति ५०० चोरो के साथ निवास करता था। वह गायो को पकड कर, लोगो को बन्दी कर तथा पथिको को रास्ता भुला कर परेशान किया करता था। चोर-सेनापति अपने चिह्नपट्टो से दूर से पहचाने जा सकते थे। ये असमय मे विहार करते तथा आपत्काल में ईषत् दग्ध मृत कलेवर तथा जगली पशुओ का मॉस और कंदमूल आदि भक्षण करके जीवन-निर्वाह करते थे। (विपाकसूत्र ३,

पृ० २०-१७, प्रश्न व्याकरण ११, पृ० ४६-६)।

बालक की चोरी : राजगृह के पास सीहगुहा नामक चोर-पल्ली मे एक चोर-सेनापति रहता था। वह बडा पापी, निर्दयी और भयंकर था। उसकी आँखे लाल और दाढे कुरूप थी। दॉत बडे होने से उसके होंठ खुले रहते थे, लबे उसके केश थे जो हवा से इधर-उधर उड़ते थे और रंग उसका काला था। वह सर्प के समान एकात दृष्टि, क्षुर के समान एकात धार, गृध्र के समान मास-लोलुप, अग्नि के समान सर्वभक्षी और जल के समान सर्वग्राही था। वचना, माया और कूट-कपट मे कुशल तथा द्यूत, मद्य और मास-भक्षण मे वह आसक्त रहता था। वह राजगृह के आने-जाने के मार्ग, गोपुर, द्यूतगृह, मद्यगृह, वेश्यालय, चौराहे, देवकुल, प्याऊ आदि स्थानो मे चक्कर लगाता रहता था। राज्योपद्रव होने पर अथवा किसी उत्सव या पर्व आदि के अवसर पर वह नगर के उद्यान, बावडी, तालाब आदि सार्वजनिक स्थानो मे घूमता हुआ लोगों को लूटने-खसोटने की ताक मे रहा करता था (नायाधम्मकहा २, सूत्र ३५, पृ० ७८-६)।

राजगृह मे धन्य नाम का एक सार्थवाह रहता था। उसके देवदत्त नाम का एक शिशु था। इस शिशु को एक दासचेट खिलाया करता था। एक दिन चोर-सेनापति ने सर्वालकार-विभूषित देवदत्त को किसी उद्यान मे खेलते हुए देखा। दासचेट का ध्यान इधर-उधर होते ही उसने देवदत्त को उठा कर अपनी बगल मे दबा लिया और उसे अपने उत्तरीय वस्त्र से ढँक कर नगर के पिछले द्वार से निकल भागा। जीर्णोद्यान मे एक भग्नकूप के पास पहुँच कर उसने शिशु को मार डाला और उसके आभूषण उतार लिये। तत्पश्चात् वह एक वृक्षकुज मे छिप कर रहने लगा।

उधर दासचेट ने जब देवदत्त को वहॉ न देखा, तो वह चीखने-चिल्लाने लगा। बहुत तलाश करने पर भी जब शिशु कहीं न मिला, तो वह अकेला ही घर लौटा। घर पहुँच कर वह अपने मालिक के पैरो मे गिर पडा और रोते-रोते उसने सब हाल कहा। पुत्र के अपहरण का समाचार सुन कर धन्य शोक से अभिभूत हो पृथ्वी पर गिर पडा। कुछ समय बाद होश मे आने पर उसने इधर-उधर अपने पुत्र की खोज की। जब कहीं पता न लगा, तो धन्य बहुत-सी भेंट ले कर नगर-रक्षको के पास पहुँचा और उनसे अपने पुत्र के पता लगाने का अनुरोध किया।

नगर-रक्षक कवच पहन, अपनी बाहुओं मे चमडे की पट्टियॉ बाँध और अस्त्र-शस्त्रों से सज्जित हो धन्य को साथ लेकर बालक को ढूँढते हुए नगर के

जीर्णोद्यान मे भग्न कूप के पास पहुँचे। इस कूप में से मरे हुए बालक की लाश निकाल कर उन्होंने उसे धन्य के सुपुर्द कर दिया। इसके बाद चोर के पद-चिह्नो का अनुगमन करते हुए वे लोग वृक्ष-कुज मे आये, जहाँ चोर-सेनापति छिपा हुआ बैठा था। नगर-रक्षको ने उसे ग्रीवा-बधन से पकड लिया तथा हड्डी, घूँसो और लातों से खूब मारा और उसकी मुश्के बाँध ली। उसके पास से उन्होने गहने ले लिये।

नगर-रक्षक चोर को नगर मे ले आये तथा चौराहों और महापथों पर उसे कोडे आदि से मारते हुए और उसके ऊपर खार, धूल और कूडा-कचरा फेकते हुए घोषणा करने लगे—यह चोर गृध्र की भाँति माँसभक्षी और बालघातक है, यदि कोई अन्य व्यक्ति इस प्रकार का अपराध करेगा, तो वह दण्ड का भागी होगा। इसके बाद चोर को कारागृह मे डाल दिया गया (वही २, पृ० ८३-८५)।

धन्य के घर डाका : एक दिन धन्य सार्थवाह का दासचेट चिलात अपने मालिक को छोड़ कर चला गया और राजगृह की सीहगुहा नामक चोरपल्ली मे पहुँच कर विजय चोर-सेनापति का अगरक्षक बन गया। चिलात हाथ मे तलवार लिये विजय की रक्षा किया करता, तथा जब विजय लूट-पाट के लिए बाहर जाता, तो वह चोर-पल्ली की देखभाल करता था। विजय ने चिलात से प्रसन्न हो कर उसे अनेक चोर-मत्र, चोर-माया और चोर-निकृति की शिक्षा दे कर चोर-विद्या मे निष्णात कर दिया था।

कालान्तर मे विजय की मृत्यु हो जाने के पश्चात् सब चोरो ने एकत्रित होकर बडी धूमधाम से चिलात को सेनापति के पद पर अभिषिक्त किया। चिलात राजगृह के आसपास के प्रदेशों को लूटता-पाटता समय-यापन करने लगा।

एक दिन चिलात ने चोर-पल्ली के ५०० चोरों को विपुल अशन, पान, सुरा आदि दे सत्कार कर उनके सामने धन्य सार्थवाह के घर डाका डालने का प्रस्ताव रखा। सेनापति की आज्ञा पाकर चोर गोमुखी, तलवार और धनुष-बाण आदि से सज्जित हो, अपनी जघाओ मे घटियाँ बाँध, बाजे-गाजे के साथ चोर-पल्ली से रवाना हुए। कुछ दूर चल कर वे एक जगल मे छिप कर बैठ गये। आधी रात के समय उन्होंने राजगृह पर धावा बोल दिया। धन्य के घर पहुँच कर पानी की मशक (उदकबस्ति) में से पानी ले कर उन्होंने किवाड़ों पर छींटे दिये और फिर तालोद्घाटिनी विद्या का आह्वान किया जिससे किवाड़ खुल गये। चिलात ने घोषणा कि वह धन्य के घर डाका डालने आया

है, जो नयी माँ का दूध पीने की इच्छा रखता हो सामने आए। डाकुओं की यह घोषणा सुन कर धन्य अपने पाँच पुत्रों समेत घर से निकल भागा उसकी कन्या सूसुमा वही छूट गयी। डाकू प्रचुर धन और संसुमा को लेकर चले गये।

धन्य ने नगर-रक्षको के पास पहुँच कर उनसे चोरों का पता लगाने का अनुरोध किया। नगर-रक्षक अपने दल-बल और अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित हो चोर-पल्ली की ओर रवाना हुए। चोर-पल्ली को उन्होंने घेर लिया। चोर सब धन वही छोड कर भाग गये और चिलात सूसुमा को ले कर जंगल की ओर भागा। धन्य और उसके पुत्रों ने चिलात का पीछा किया। चिलात जब संसुमा को अधिक दूर न ले जा सका, तो उसने अपनी तलवार से उसका सिर धड से अलग कर दिया। इसके बाद प्यास से व्याकुल हो वह मार्ग भूल गया और अपने स्थान पर पहुँचने के पूर्व ही उसने प्राण त्याग दिये (वही १८, पृ० २३७-६)।

चोरों को धोखे से पकड़ना: चोर साधुओं तक से उनके बहुमूल्य कबल आदि छीन लेते थे। वे आसानी से पकड मे नहीं आते थे और राजा की सेना तक को मार भगाते थे। पुरिमताल नगर के उत्तर-पूर्व मे अभग्गसेण नाम का चोर-सेनापति रहता था, जो बहुत लूट मार किया करता था। एक दिन पुरिमताल की प्रजा ने राजा महाबल की सेवा मे उपस्थित हो कर अभग्गसेण के अत्याचारों का वर्णन किया। राजा ने तुरन्त ही अपने दण्डनायक को बुलाया और अभग्गसेण को जीवित पकड़ लाने की आज्ञा दी।

दण्डनायक राजा की आज्ञा पा कर अपनी सेना ले चोर-पल्ली के लिए रवाना हो गया। लेकिन अभग्गसेण को अपने गुप्तचरों द्वारा पहले ही इस अभियान का पता चल गया। चोर-सेनापति अपने चोरों को ले कर जंगल में छिप कर राजसैन्य के आगमन की प्रतीक्षा करने लगा। दोनों सेनाओं मे मुठ-भेड़ हुई और राजा की सेना हार कर भाग गयी।

एक बार राजा ने अपने राज्य मे दस दिन तक उत्सव मनाने की घोषणा की। इस अवसर पर उसने अभग्गसेण को भी निमन्त्रित किया। अभग्गसेण राजा के लिए बहुमूल्य भेंट ले कर उपस्थित हुआ। राजा ने सम्मानपूर्वक उसे अपने कूटागार मे ठहराया और जब वह विपुल अशन, पान और सुरा आदि का सेवन करता हुआ प्रमत्तभाव से समय-यापन करने लगा, तो राजा ने उसे पकड कर शूली पर चढ़ा दिया।

चोरों का उपद्रव शान्त करने के लिए उन्हे अनेक प्रकार की लोमहर्षक सजाएँ दी जाती थीं। उनका वर्णन आगे के लेख मे पढ़िये।

वैशाली का महत्व

रात भर पानी बरसने के बाद वर्षा बन्द हो गई थी। चारो तरफ दिखाई देने वाली हरियाली का रूप निखर आया था। जान पडता था वृक्षपक्ति को किसी ने धो-पोछ कर स्वच्छ कर दिया है। लहलहाते हुए धानो के खेत दूर तक चले गये थे। घनी छायावाले पीपल और वट वृक्ष जहाँ-तहॉ दिखाई पड जाते थे। आमो की पक्ति दूर तक फैली हुई थी। ताड़ के वृक्ष सिर उठाये मानों प्रकृति का निरीक्षण कर रहे थे। बाँसों के झुरमुट मे चिड़ियों की चहक सुनाई दे रही थी। मार्ग मे आनेवाले गॉवों की झोपडियाँ, कुमुदों से आच्छादित पोखर, लताओ से वेष्टित वृक्ष, ताड़ के बने खूटो पर आधारित पशुओ की नादे, मिमियाते हुए बकरियों के मेमने, पालतू कबूतरों के दड़वे, शिशुओं को स्तन-पान कराती हुई माताएँ, धूल मे क्रीड़ा करते हुए बालक—ये सब बडे आकर्षक जान पड़ते थे। और हमलोग महावीर और बुद्ध की विहार-भूमि लिच्छवियों की राजधानी के दर्शन के लिये उत्कठित भाव से आगे बढ रहे थे।

वैशाली मुजफ्फरपुर से दक्षिण-पश्चिम की ओर २३ मील के फासले पर गडक नदी के किनारे बसी हुई है। इस पवित्र भूमि पर पैर रखते ही मन आनन्दोल्लास से भर गया। महावीर और बुद्ध ने यहॉ लाखों नर-नारियों को मानवता का उपदेश दिया था। अनेक उद्यान, बाग-बगीचे, तालाब और पुष्करिणियो से यह नगरी शोभित थी। दूर-दूर के कारीगर यहाँ आकर बसते और व्यापारी बनिज-व्यापार करते थे। बुद्ध ने यहाँ के एक से एक सुन्दर चैत्यों (देव स्थानो) की मुक्तकठ से प्रशसा की थी। अम्बापाली वेश्या इस नगरी की परम शोभा मानी जाती थी। उसने भगवान् बुद्ध और उनके शिष्यों

का भोजन से तृप्त कर अपना आम्रवन भेंट किया था । इसी पावन स्थान पर बुद्ध ने स्त्रियों को भिक्षुणी हो सकने का अधिकार दिया था ।

वैशाली लिच्छवियों की प्रमुख नगरी थी । लिच्छवी लोग जैसे परिश्रमी और अध्यवसायी थे वैसे ही सुन्दर भी । आभूषणों से सज्जित हो, रंग-बिरंगे सुन्दर वस्त्र पहन, जब वे अपनी पालकियों, रथो और हाथियों पर सवार होकर निकलते तो देवता भी उनके सामने तुच्छ जान पडते थे । इनकी शासन-व्यवस्था गणतत्र-प्रधान थी, और वह निर्वाचित किये हुए सदस्यो द्वारा की जाती थी । भेरी का शब्द सुनते ही अनुशासनप्रिय लिच्छवी अपने संथागार (पार्लियामेण्ट हाउस) मे एकत्रित हो जाते और राजनैतिक, सामाजिक, और धार्मिक विषयो की चर्चा करने मे जुट जाते । लिच्छवियो मे शलाका (सलाई या सीक) द्वारा मतदान (पालि भाषा मे 'वोट' के लिये छद शब्द का प्रयोग है) होता, और किसी प्रस्ताव को पास करने के पहले उसके सबध मे तीन बार बोलने का अवसर दिया जाता । बुद्ध लिच्छवियो की इस शासन-प्रणालि से अत्यत प्रभावित थे और अपने भिक्षुसघ के समक्ष उन्होंने इनके, गणतत्र को आदर्श रूप मे उपस्थित किया था ।

जैन परम्परा के अनुसार वैशाली महावीर की जन्मभूमि थी । ज्ञातृकुल (बिहार के भूमिहारों को जथरिया जाति) के क्षत्रिय घराने मे उन्होंने जन्म लिया था । दीक्षा लेने के पश्चात् महावीर ने वैशाली मे १२ चौमासे व्यतीत किये । चेटक वैशाली का प्रभावशाली राजा था, वह काशी-कोसल के नौ लिच्छवी और नौ मल्ल राजाओ का मुखिया था । चेटक की कन्याओ के विवाह कौशाबी, उज्जैनी और राजगृह आदि के राजघरानो मे हुए थे । चेटक और अजातशत्रु के भीषण युद्ध का जैन ग्रन्थों मे विस्तृत वर्णन है जिसमे चेटक की हार हुई और अजातशत्रु ने वैशाली को तहस-नहस कर डाला ।

प्राचीन वैशाली की पहचान आधुनिक बसाढ से की जाती है । आजकल यह स्थान एक साधारण-सा गॉव है जिसकी जन सख्या बहुत अधिक नहीं है । वैशाली-सघ नामक सस्था ने यहॉ के ध्वसावशेषों को प्रकाश मे लाने और ग्रामीण जनता मे सास्कृतिक चेतना जाग्रत करने की दिशा मे सराहनीय काम किया है । इस सस्था के प्रयत्न से इस गॉव मे हाई स्कूल, पुस्तकालय और औषधालय आदि खुल गये हैं ।

वैशाली के खंडहर अतीत काल के वैभव की याद दिलाते हैं । जगह-जगह ईंटो और मिट्टी के बर्त्तनो के ठींकडे बिखरे पडे है । कितने ही अमूल्य कंकड-पत्थर यहॉ की मिट्टी मे घुल-मिल गये है, और सम्भवतः वे अब हमसे

सदा के लिये छिन गये है । बिखरी हुई ईटे राजा विशाल के गढ़ की बताई जाती है जो मनुष्य और प्रकृति के कोप के कारण अपने स्थान पर कायम न रह सकीं । ईंटों से आच्छादित इस गढ़ की परिधि लगभग १ मील होगी । इसके चारो ओर एक खाई है । कहा जाता है कि लिच्छवियो के शासनकाल मे यह गढ़ उनका सथागार (सभा-भवन) था जहाँ निर्वाचित प्रतिनिधि एकत्रित होकर विविध विषयो पर विचार-विमर्श किया करते थे ।

राजा विशाल के गढ़ से कुछ फासले पर दक्षिण-पश्चिम की ओर बुद्ध का एक स्तूप बना हुआ है जिसमे बुद्ध के भस्मावशेष का कुछ भाग ताम्रघट मे रक्खा गया है । चौबीस फुट ऊँचे इस स्तूप के ऊपरी भाग को चौरस कर दिया गया है । इसके दूसरो ओर १५ वी शताब्दी के मुसलिम सन्त शेख मुहम्मद काजिन का मजार है । इसी प्रकार एक सस्कृति के विस्मृत कर दिये जाने पर दूसरी सस्कृति का आविर्भाव होता आया है ।

आगे चलकर हरिकटोरा मन्दिर मे काले पाषाण की कार्तिकेय की मूर्त्ति है जिसका वाहन मयूर है । दीर्घकाल से जल-चन्दन आदि चढ़ते रहने के कारण मूर्त्ति का पाषाण घिस गया है । यह मूर्ति पाल राजाओ के काल की बताई जाती है । प्राचीन जैन ग्रन्थों मे इन्द्र, रूद्र, शिव, नाग, यक्ष आदि के देवस्थानो के साथ कार्तिकेय के देवस्थान का भी उल्लेख है । आषाढ़ी प्रतिपदा के दिन कार्तिकेय की पूजा की जाती थी जब कि लोग खूब खा-पी और नाचगाकर समय यापन करते थे ।

खडहर अवस्था मे भी वैशाली उतनी ही रमणीय मालूम होती है जितनी कभी प्राचीन काल मे रही होगी । ताड़ के वृक्षो के ऊपर सूर्य की किरणो से दैदीप्यमान क्षण-क्षण मे रूप बदलती हुई मेघराशि बड़ी ही आकर्षक प्रतीत होती थी । धान के हरे-भरे खेत और आने-जाने के मार्ग पानी से भरे हुए थे । पोखरों मे लगी हुई डोगरियों द्वारा रास्ता पार करना पडता था । इसीलिये तो श्रमण सम्प्रदाय के साधुओं को वर्षाकाल मे गमन करने का निषेध है ।

बावन मन्दिर मे जैन, बौद्ध और शिव-पार्वती की मूर्त्तियाँ विराजमान है । पास के एक मन्दिर मे काले पाषाण की महावीर की मूर्ति है । यहाँ से बनिया गाँव साफ दिखाई देता है । इसे जैन ग्रन्थो मे वाणियगाम कहा गया है और महावीर भगवान ने यहाँ विहार किया था । प्राचीन काल मे यहाँ अनेक प्रभावशाली जैन उपासक बसते थे ।

प्रियदर्शी अशोक की कीर्ति की घोषणा करनेवाला अशोक-स्तम्भ दूर से ही दिखाई देता है । २२ फुट यह लम्बा है और बहुत सा हिस्सा इसका नीचे

जमीन मे गड़ा हुआ है। बुद्ध की जन्मभूमि लुंबिनी के दर्शनार्थ जाते समय सम्राट् अशोक मार्ग मे वैशाली ठहरे थे और उस समय यह स्तम्भ उन्होने बनवाया था। इस स्तम्भ का शीर्ष घटे के आकार का है, और इसके ऊपर उत्तर की ओर मुँह किये हुए समूचे आकार की सिंह की मूर्ति बनी हुई है। इस पर अशोक का कोई शिल्पलेख नही, लेकिन चीनी यात्री श्यूवेनच्वाग ने अपनी यात्रा के विवरण मे इसका उल्लेख किया है। यहाँ के लोग अशोक की इस लाट को "भीम की लाठी" कह कर पुकारते है। इतनी बडी लाठी (लाट) और हो भी किस की सकती है ?

वैशाली-सग्रहालय मे वैशाली के भग्नावशेषो मे प्राप्त अनेक ऐतिहासिक वस्तुओ का सग्रह है जिनमे बुद्ध की चतुर्मुखा मूर्त्ति, विभिन्न सिक्के, कानो के आभूषण, मिट्टी के बर्तन और खिलौने आदि मुख्य है। सग्रहालय बहुत छोटा है और वैशाली जैसे स्थान मे एक अच्छे सग्रहालय की आवश्यकता है।

वैशाली अनेक पुष्करिणियो से घिरी हुई है। जैन और बौद्ध ग्रन्थो मे इन पुष्करिणियो के वर्णन मिलते है। उन दिनो चैत्य (देवस्थान) के साथ कोई उद्यान और पुष्करिणी भी जुडी हुई रहती थी। जहाँ नगरवासी पूजा-अर्चना और आमोद-प्रमोद के लिये एकत्रित होते थे। वैशाली की अभिषेक-पुष्करिणी आजकल खडौना तालाब के नाम से प्रसिद्ध है। इसके जल से लिच्छवी राजाओ का अभिषेक किया जाता था। कोई व्यक्ति इसके जल को छू भी न सकता था, जिसके वास्ते कडा पहरा रहता था। ऊपर लोहे की जाली लगी थी जिससे पक्षी तक जल मे चोंच नही डुबो सके। घोघा और चित्रा नाम की पुष्करिणिया आजकल शोभाविहीन हो चुकी हैं और प्रायः मछली पकड़ने के काम मे ही आती है।

कुछ लोग मुगेर जिले के लच्छुआड गाँव को, और कुछ नालदा के पास कुण्डलपुर गाँव को महावीर की जन्मभूमि स्वीकार करते हैं। लेकिन ये दोनो ही मान्यतायें ठीक नहीं। वैशाली का वासुकुण्ड नामक स्थान ही महावीर की असली जन्मभूमि है। जैन ग्रथो के अनुसार कुण्डलपुर वैशाली के पास था जो दो मुहल्लो मे बटा हुआ था—एक भाग क्षत्रियकुड ग्राम और दूसरा भाग ब्राह्मणकुड ग्राम नाम से प्रसिद्ध था। कुडपुर मे नायखड (ज्ञातृखड) नामका एक सुदर उद्यान था जहाँ महावीर ने दीक्षा ग्रहण की थी। जैन शास्त्रों और पुराणो मे भी विदेह जनपद को महावीर का जन्मस्थान बताया गया है, और यह प्रदेश गगा के उत्तर का तिरहुत (तीरभुक्ति) जनपद ही हो सकता है, गगा का कोई दक्षिणवर्ती प्रदेश नहीं। बुद्ध-निर्वाण के

एक हजार वर्ष पश्चात् भी वैशाली गुप्त साम्राज्य के तीरभुक्ति नामक प्रात की राजधानी रही । फिर, महावीर की माता त्रिशला को विदेह की रहनेवाली (विदेहदत्ता) कहा गया है । महावीर तो वैशाली के रहनेवाले (वेसालिय) कहे ही जाते थे । इससे वासुकुण्ड ही महावीर का जन्मस्थान सिद्ध होता है ।

आधुनिक बासुकुण्ड गॉव मे सैकडो वर्षो से लगभग दो एकड जमीन जोतने के काम मे नही ली जाती । इस स्थान को महावीर का जन्म-स्थान मानकर अत्यन्त पवित्र समझा जाता है । महावीर जयती के अवसर पर हर साल यहॉ बडा मेला लगता है जिसमे हजारो की सख्या मे लोग आते है । यहॉ की ग्रामीण जातियॉ महावीर को लड्डू, मेवा आदि चढाती है । गोप आदि जातियो मे गौतम आदि गोत्र होते है और ये लोग मॉस-भक्षण से परहेज करते है । २३ अप्रैल, १९५६ के दिन इस पवित्र भूमि पर हमारे राष्ट्रपति डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने शिलान्यास करके महावीर-स्मारक को स्थायीरूप दे दिया है । वासुकुण्ड के पास ही प्राकृत जैन विद्यापीठ के भवन की नीव रक्खी जा चुकी है । यहॉ के किसानो ने अपनी बहुत सी भूमि दान देकर इस योजना मे उत्साह दिखाया है । बिहार राज्य की सरकार द्वारा सचालित यह विद्यापीठ आजकल मुजफ्फरपुर मे है और प्राकृत भाषा तथा जैन पुरातत्व सबधी महत्वपूर्ण कार्य कर रही है ।

घूमते-घूमते थकान महसूस होने लगी थी । सूर्य अस्ताचल की ओट मे जा रहा था । पश्चिम दिशा लालिमा से रग गई थी । काले-काले विभिन्न आकृतियोंवाले मेघों मे से लाली फूट रही थी । चारों ओर निस्तब्धता छा गई थी जो बुद्ध और महावीर की असीम शान्ति को याद दिला रही थी । वैशाली के खडहरो मे से आवाज सुनाई पड़ रही थी—हे मानवो ! सहारकारी युद्धो को बन्द करो, विश्व मे शान्ति स्थापित करो । गडक नदी का ज़ल तीव्र वेग से बह रहा था !

कुरु जनपद की यात्रा

सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, मेरठ जिले तथा बुलन्दशहर और बिजनौर जिलो के कुछ हिस्से को प्राचीन कुरु जनपद माना जाता है। कुरु की गणना मध्यदेश के पॉच जनपदो मे की गई है। आर्यो की सभ्यता और सस्कृति का यह केन्द्र था। गगा घाटी पार करके आर्य लोग ब्रह्मर्षि देश—कुरु, मत्स्य, पचाल और शूरसेन-मे फैल रहे थे, और यहाँ से काशी, कोसल अ र विदेह आदि जनपदो की अ र ब रहे थे। आर्यो को अपनी सस्कृति, का बडा अभिमान था, और जो उसे स्वीकार नही करते थे, उन्हे अनार्य (अपभ्रशरूप अनाडी) के नाम से सबोधित किया जाता था।

कुरु जनपद कौरवो की जन्मभूमि थी। यही पर कौरवो ने अपने भाई पाडवों को ललकारा था कि बिना युद्ध के हम तुम्हे सुई की नोक जितनी जगह भी नहीं दे सकते। आगे चलकर कुरुक्षेत्र के मैदान मे कौरवो और पाडवों मे घनघोर युद्ध मचा जो महाभारत के नाम से प्रसिद्ध है। हस्तिनापुर कुरु जनपद की राजधानी थी जो गगा के किनारे बसी हुई थी। बाद मे यमुना के किनारे इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली) को राजधानी बनाया गया। बौद्ध जातकों के अनुसार यहाँ राजा युधिष्ठिर का राज्य था। बौद्ध काल मे भगवान् बुद्ध का उपदेश सुनकर इस जनपद के बहुत से लोग उनके अनुयायी बने थे। जैन आगमों के अनुसार हस्तिनापुर कुरु की राजधानी थी। हस्तिनापुर की गणना जैनों के अतिशय क्षेत्रों मे की गई है। कार्तिक के महीने मे यहाँ आजकल भी जैनो का बडा मेला लगता है जिसमे दूर-दूर से लोग आते हैं।

आजकल का हथनापुर (हस्तिनापुर) उजाड़ पडा हुआ है। बूढी गगा यहाँ से कुछ दूर हट गई है। कहते है कि गगा मे बाढ आने के कारण यह

नगर ध्वस्त हो गया। यहाँ के टीलो की दूर तक फैली हुई राशि इस नगर की प्राचीनता को सूचित करती है। हस्तिनापुर के अलावा देवबद (स्थानीय उच्चारण देब्बरण अर्थात् देवो का वन महाभारत का द्वैतवन, जिला सहारनपुर), सुक्करताल (यहाँ अब भी बहुत बडा मेला भरता है, जिला मुजफ्फरनगर), परीच्छित गढ, गढ-मुक्तेश्वर (यहाँ भी मेला भरता है), बागपत (व्याघ्रप्रस्थ, जिला मेरठ), मर्डावर (जिला बिजनौर) आदि प्राचीन स्थान कुरु जनपद की शोभा बढा रहे है।

आगे चल कर पृथ्वीराज चौहान का इन्द्रप्रस्थ पर शासन हुआ। राजपूतो जाटो और गूजरो का आधिपत्य हो गया। १३ वी सदी मे दिल्ली की सल्तनत कायम हुई। फिर शेख, सैयद और पठान सत्तारूढ हुए। सन् १३९९ मे तैमूर ने मुजफ्फरनगर जिले पर आक्रमण किया। तुगलकपुर (आजकल का तुगलपुर) मे घमासान युद्ध हुआ जब कि तैमूर के घुड़सवारो ने आक्रमण-विरोधी प्रजा को मौत के घाट उतार दिया। बादशाह अकबर के जमाने मे मुजफ्फरनगर सहारनपुर की सरकार के मातहत था और यहाँ बहुत से लोगो को जागीरे ईनाम मे बाँटी गई थीं।

मुजफ्फरनगर मे सैयदों का जोर बढ़ा और उनके बहुत से लोगों को सरकारी अदालत मे अफसर बना दिया गया। इनके पुरखे सन् १३५० से ही यहाँ आकर बस गये थे। १८ वी सदी मे यहाँ सिखो का हमला हुआ जिसमे गूजरों ने उन की मदद की। सन् १७८८ मे मराठों का अधिकार हो गया। फिर १८०३ मे अलीगढ के पतन के बाद सारा दोआब अंग्रेजों के अधिकार मे चला गया। १८५७ के स्वातन्त्र्य-युद्ध का श्रीगणेश मेरठ से ही हुआ था। गाँवों के बडे-बूढे इस युद्ध की कहानियाँ बडी तन्मयता से सुनाते है—किस प्रकार आतक पैदा करने के लिये अग्रेज सरकार ने हिन्दुस्तानियों की लाशें पेडों से लटका कर छोड दी थी, और लोगों ने भय के मारे मदिरों की मूर्तियों और कीमती गहनो आदि को तहखानो मे छिपा दिया था। मुजफ्फरनगर के अग्रेज कलक्टर ने शासन की बागडोर सम्हालने मे असमर्थता प्रकट की। शामली और थानाभवन आदि की जनता ने अंग्रेजी सेनाओं से डटकर मोर्चा लिया।

गगा-यमुना के बीच का यह प्रदेश हमेशा से बहुत उपजाऊ रहा है। पहले जमाने मे यहाँ के लोग बुद्धिमान और स्वस्थ माने जाते थे। यहाँ खादर का बहुत बडा जगल है जिसे आजकल खेती करने लायक बनाने का उद्योग किया जा रहा है। अनेक स्थानो पर विस्थापितो को बसा दिया गया है। इस

प्रदेश मे गेहूँ, चना, और गन्ना बहुतायत से पैदा होता है। दिल्ली-मुजफ्फर-नगर रेलवे लाइन पर कितने ही शक्कर के मिल खुल गये है। किसानो को गन्ने के अच्छे दाम मिल जाते है और ईख पेलने आदि के झझट से छुट्टी मिल जाती है, इसलिये वे अपने खेतो मे ज्यादातर गन्ना ही बोने लगे हैं। हिन्दुस्तान मे मुजफ्फरनगर गुड की बहुत बडी मडी है। जहाँ से गुड, मिंझा, राब और शक्कर दूर-दूर तक भेजे जाते हैं।

साधारणतया इस प्रदेश के लोग तगडे और खुशहाल है। खेतों मे किसानों को बहुत मेहनत नहीं करनी पडती, नहरों के कारण खेतो की सिचाई होती रहती है। नहरो की झाल से बिजली भी निकाली जा रही है। किसानो के अलावा, मध्यम स्थिति के लोग भी गाय, भैंस, पालते है। उडद की दाल खाने और सोते समय दूध पीने के शौकीन है। वैश्यो के घर शाम को प्रायः पूरी-परावठे बनते है। कच्ची रोटी को रोट्टी और पक्के खाने को खाणा (खाना) कहा जाता है। यहाँ भूमिया माई, शाकुभरी देवी, बूढा बाबू, गोगापीर, पीर बहराम आदि के मेले भरते है। लोग माता, सती, देवता, पीपल, सिवजी और पीरो को पूजते है, होली, दिवाली, तिज्जो, सलूनो, बर-सैत, होई, करवाचौथ, सक्रायत, सकट, भईयादूज, दसहरा आदि त्योहार मनाते हैं। रामलीला, सॉग, तमाशे आदि देखते है। बरसात के दिनो मे आल्हा गाते है।

देहातों की दशा मे विशेष परिवर्तन हुआ नही जान पडता। ग्राम्य सस्कृति पहले जैसी सुदृढ़ मालूम होती है। लालाजी, वैद्य, हकीम, पसारी, पाधा, पुरोहित, स्याने, पटवारी, बढई, लुहार, चमार, धोबी आदि का स्थान सुनिश्चित है। हिन्दू-मुसलमानों मे भाई चारे के सबंध है। जैराम जी की, राम-राम, बदगी, पालागन आदि से एक दूसरे का अभिवादन किया जाता है। जैन लोग पर-स्पर जयजिनेन्द्र या जुहार करते है। छोटे लोग बडों को बाबा जी, ताऊजी, चाची जी बोब्बो (बहन), भाईसाहब आदि शब्दों से सबोधित करते है। व्याहकाज और मरने-जीने मे सब इकट्ठे होते हैं। गाँव मे कोई भूत-प्रेत उता-रने, कोई बच्चों के डुड्ढी और पसली चढ़ाने, कोई डगर-ढोरो का इलाज करने, कोई खाट-पलग बुनने और कोई चिट्ठीपत्तरी लिखने पढने आदि के कामों मे होशियार होते हैं। मेहनताने मे सेर भर गुड या डेढ़ सेर अनाज काफी होता है। लोग जरा तेज मिजाज के होते है। साधारण सी बात को भी जोर-जोर से बोलकर कहते है। तू-तडाक और री-अरी की बोली बहुत है। मुकदमेबाजी खूब चलती है। इलाहाबाद हाई-कोर्ट मे मेरठ और

मुजफ्फरनगर नगर जिलो के ही अधिक मुकदमे पहुँचते है।

विवाह आदि सामाजिक समस्याये पहले जैसी बनी हुई हैं। लडकी वाले को दहेज देना पड़ता है। वैवाहिक जीवन मे पुरुष और स्त्री का क्षेत्र जुदा है, दोनो की चर्चाओ के विषय भी अलग-अलग है। बहू सब से पहले उठती है, झाड़ू बुहारी देने, गोबरी-पोता फेरने, तूबने, कातने, सीने-पिरोने, खाना पकाने, और बाल-बच्चो के सम्हालने आदि का काम करती है। परदा घट रहा है। साधारण जनता आर्थिक विषमता की शिकार है। शहरी जीवन मे बहुत से परिवर्तन हो गये है। स्कूल, कालेजों मे पढनेवाली लड़कियाँ बिना परदे आने-जाने लगी है, ढाबो (भोजानालयों) मे खाने के लिये मेज-कुर्सियाँ लग गई है। बिजली आ गई है, डाक्टरो और वकीलो की सख्या बढ गई है, रिक्शो की भरमार हो गई है।

कुरु जनपद मे आर्य सस्कृति, जाट-गूजर संस्कृति और मुसलिम सस्कृति की प्रधानता रही है। मुझेडा (जिला मुजफ्फरनगर) आदि स्थानो मे १६वीं-१७वी सदी की मुसलमानो की मसजिदे मौजूद है। तिस्सा, तिसग, जौली, शाहपुर आदि मे तो अभी तक सैयदों का दबदबा रहा है। हिन्दू लोग मुसलिम पीरो की पूजा-उपासना करते है। उल्फतराय, हुकुमचन्द उमराव सिंह, मुसद्दीलाल, हजारीमल, गुलशनराय, हसमत, आदि हिन्दुओ के नामों से पता लगता है कि इस प्रदेश मे हिन्दू-मुसलिम सस्कृति कितनी घुल मिल गई थी। छज्जू, घसीटा, सुक्कन, रोड्ढा आदि नाम हिन्दू मुसलमान दोनो के साधारण है। लाम (फौज फारसी लार्म), रिजक (रोज के निर्वाह के लिये भोजन-सामग्री अरबी रिज्क), इमामजिस्ता (फारसी हावनदस्ता), भारकस (फारसी भारकश), लिहाफ (अरबी), गबरून (चारखाने की तरह का मोटा कपड़ा फारसी), बुगचा (अरबी रुकचा), कम्मच (तुर्की कमची), पासग (फारसी), गुल्लक (फारसी), असामी (अरबी आसामी), बिगान्ना (फारसी बेगाना) आदि कितने ही सैकडों अरबी-फारसी के शब्द यहाँ की बोली के अनिवार्य अङ्ग बन गये है। उर्दू यहाँ के लोगों की प्रायः आम जबान है और उर्दू लिपि का प्रचार है। यहाँ की जबान को हिन्दुस्तानी नाम दिया गया है। इस प्रदेश की भाषा को शुद्ध खड़ी बोली माना जाता है जो हमारे आधुनिक हिन्दी साहित्य की मूलभाषा है।

यहा की भाषा के अनेक शब्द सस्कृत-प्राकृत भाषाओं से होकर आये हैं जिनको उनके असली रूप मे पहचानना कठिन है। उदाहरण के लिये, जद (यदा), क्यन्न (किंतु) करसी (कडा, करीष), पाधा (उपाध्याय), शिवाल्ला

(शिवालय), आला (ताख आलय), बैयर (वधूवर), तिरिया (स्त्री), चिल्ह-तर (चरित्र), सथा (पाठ सहिता?), घी (लडकी दुहिता), ऊत (अपुत्र, जिसके पुत्र न हो), उड (तरफ), स्याऊ (होई), नेट्ठम (बिलकुल, न इष्टम्), पच्छेता (बाद मे होनेवाला; पश्चात्) जाक्कत (बालक, जातक), सोण (शकुन), मदूकडी (मधुकरी), सुद्दा (सार्ध), बेसवा (वेश्या), तत्ता (तप्त), तिरखा (तृष्णा), सोब्बा (दहेज, शोभा), कूंड (कुड), गौना (गमन), बिरता (वीरता), ओनामासी ध (ओ नमः सिद्ध), भबूत (विभूति), चाल्ला (चाल), नेडे (निकट), कनागत (कन्यागत), नौरते (नवरात्र), धण (जहा गायें चरने जाती है, धन), अदवायन (खाट या चारपाई की रस्सियो को खींचे रखने के लिये पैताने की ओर छेदो मे पड़ी हुई रस्सी अधः + बान), अणसणपट्टी (अनशनपाटी), पौ (प्रभा), पैड़ (पीढ़ी), बटा (वटक), ल्हीक (लीख, रेखा), बोद्दा (कमजोर अबोध), चकचाल (चकचक करनेवाली चक्रचाल), धोरे (पास घर), छकडा (शकट), गाड्डा (गन्ना; काड), डहर (पानी का स्थान, डगर), मनियार (चूड़ी पहनानेवाला मणिकार), बगढ़ (आगन, प्रघण), परात (पात्र), टाड (स्थाणु), टेवा (टिप्पड़), बढ़िहार (वर आहार), जोस्ती (ज्योतिषी), नाड (गर्दन-नाल), तबिया (एक वर्त्तन ताम्र शब्द से), पोत्ता (पोत्ता फेरना; पवित्र, देववद मे पोच्चा बोला जाता है), आदि शब्दों को लिया जा सकता है।

जाट-गूजरो की सस्कृति का प्रभाव कुरु जनपद पर काफी मात्रा मे रहा। जिला मुजफ्फरनगर मे बसेडा (लेखक की जन्मभूमि) की रानी, जो लढौंरा (जिला सहारनपुर) मे रहती थी, गूजर ही थी। इसो रानी के नाम से आज भी यह गॉव रानी का बसेडा प्रख्यात है। इसके अलावा मुजफ्फरनगर जिले के तेज्झलेड़ा, भोवकरेडी, सम्भलेडा, तेवड़ा, विटावड़ा, मुझेडा, नन्हेडा, खाईखेडी आदि गॉवो मे प्रायःजाटो का ही आधिपत्य है। शामली और बडौत के आसपास जाटो के बहुत से गॉव है जहॉ से कुरु जनपद की प्राचीन बोली सम्बन्धी महत्वपूर्ण सामग्री एकत्रित की जा सकती है। इस क्षेत्र की अनेक कथा-कहानियॉ, कहावते, और चुटकुले लोगो मे सुप्रसिद्ध है। यहॉ की जाटू बोली बडी जोरदार है और धडल्ले के साथ बोली जाती है, मानो लठमार दिया हो। इस बोली मे अक (कि), मका (मैंने कहा), नू (यू), कफा (कहॉ का),कधी (कभी),जद (जब),व्हासिक (वहॉ),झटदेसी (झट से) अतेक सा (इतना सा), इबजा (अब), किरेक सा (जरा सा), क्युक्कर अथवा किक्कर (क्योकर), पाणी (पानी), दाल (दाल), चोक्खा

(अच्छा), केल्ला (बिजनौर जिले मे इकल्ला), बटिया (बाट), दुल्हैंडो (धूल + उडना), धौला (धवल) गुठा (अँगूठा), कट्ठा (इक्ट्ठा), एल्लेले (यह ले लो) मेट गया, नासपिट्टा, जनमैदा, घरसी, वरबसी, घर गई, वारो, बिरकी, भणेल्ली (सहेली), ठाल्ली (निठल्ला)(ठाड्डा (बडा), ठोस्सा (ठेंगा), लौडा (लहड़ा), सेत्ती (से), इभी (अभी), होर (और), खात्तर (लिये), हाम्बी (स्वीकृति), बिदून (बिना), ढब (तरफ), जौणसी (जो), बोल्ला-बोल्ला (चुपचाप), हौलू (बेवकूफ, हाली), क्लसैडिया (बहुत काला), लिकाड्डू (प्रसिद्ध), कमीण (नीच काम करने वाले), मुधा (औंधा), ओड्डा (बहाना), रड़का (झाड्डू), कल्लर (बजर जमीन), खब्बा (बॉया), खवा (कधा), "धियाने (सम्बन्धी), सातल (जॉघ), दडाक (तमाचा), तावला (जल्दी), खटोल्ला (छोटी खाट) सिवाल (तुझ सिवाल-तुझ जैसा) आदि अनेक शब्द प्रचलित है जो भाषाशास्त्र की दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी है।

बहुत से शब्द बनावट की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। उदाहरण के लिये, गोबरी (गोबर से), भाज्जड (भगदड), बोएनी (जो सीको से बुनकर बनाई गई हो), सुकाला (जो सुख से किया गया हो, आसान), बूरा (भूरा), भाज्जी (जो पकवान तलकर (भर्जन करके) बनाया जाता हो), अलसेट (अलस से), गोसा (उपला, गूसा) हड़या (जो फाड खाने के लिये दौडती हो), गलहैंडी (जिससे हण्डी का गला पकड़ा जाता हो), घडौन्ची (घड़ा रखने की ऊँची जगह), दीवट (जिस पर दीपक रक्खा जाता है, दीपयष्टि), पोतपुरा (जिसका पोत (फारसी फोतह-लगान) पूरा कर दिया हो; काम पूरा पाडना), मोतीछ्डा (बढिया किस्म के चावल जो छडने से मोती जैसे हो जाते हैं), जोहड़ (पहलवी मे आबे जोहर-पवित्र जल, छोटा तालाब), गूल्ही (बसेड़े के एक जोहड़ का नाम जहॉ लोग आबदस्त लेते हैं), रुगनात (रघुनाथ), कानजी हौस (अँग्रेजी मे काइन हाउस), मारकीन (अँग्रेजी मे नैनकिन), कचौड़ी (तमिल मे कच्चदाल, जिसके अन्दर उडद की दाल की पिट्ठी भरी जाती हो), पलोत्थद्दण (परथन) आदि।

कुछ शब्द मिलते-जुलते शब्द जोडकर बनाये जाते हैं, जैसे अडग-बडग, आल-बिलाल, इमका-ठिमका, चट्टे-बट्टे, डगर-ढोर, लौडी-लारे, अणाप-शणाप, (अणाप-अनाप्त), अजल-नजल (मजिल), चमार-चट्टे, चग्घे-मग्घे आण-विणाण (टोटका), उतारा-पुतारा, ढुनढुने-मुनमुने, इघै-उघै, और घौरे, न्याम-स्याम, (मुफ्त), अबेर-सबेर बीर-बान्नी (औरते), गैल्लोगैल

(साथ-साथ), अन भी पन भी (ऐसे भी वैसे भी), छडी छटाक (अकेली), अडभीड़, औडबडा (इतना बडा) आदि। इसके अतिरिक्त बोंत (दॉव) रेहडू, (छोटी बैलगाडी), गडूलना (छोटी गाड़ी), लवारू (गाय का छोटा बछडा), भुंडा (भोडा, खराब), भसरा (मुँह), चूहडा (भगी, बाहरवाला भी), टूंडा (जिसके एक हाथ हो), डला (प्राकृत मे डगलक शब्द है), वहली (बहिलय शब्द प्राकृत मे मिलता है), जसोट्टन (दसूठन = दस + उठना, बच्चा पैदा होने के दस दिन बाद मनाया जानेवाला उत्सव), नेज्जू (रज्जू ? कुएँ से पानी भरने की रस्सी), पसर (रात का चौथा पहर), डाडा (रेतीला प्रदेश), घुड (रेतीला प्रदेश), भुब्बल (गरम राख), कुतार (खराब), डिसोटा (कठिनाई), कलोड़ (घमड), न्यामतुल्ली (गैरत) लाड्डो (लाडली), गोड्डा (घुटना), निवाच (गरमाई), पलहडी (वह स्थान जहॉ पानी के घडे आदि रक्खे जाते है), करैंडी (भारी पतीली), चामचिरड़ (चाम की चिडिया चमगीदड,), बूर (आटे का छानस), छोतरे (छिलके), मण्ए (मैड), बिजार (साड), पठे (पटिया), भिरड़ (ततैया), रुगा (लुभाव), टडीरा (माल-असबाब), खडौजा (पक्की ईंटो का बनाया हुआ), पजियार (साग-भाजी), खोडी (कोरी, बिना कपड़ा बिछाई खाट आदि). गोहरे (गॉव के बाहर का प्रदेश), टेहले (अरबी मे टेहले फैलना, विवाह से पहले जो नून-हल्दी छुआने आदि की विधि की जाती है), तियल (माता पिता की ओर से कन्या को दिया जानेवाला साडी वगैरह सामान), गौले (गन्नो के ऊपर का छोत जिसकी कुट्टी काटकर पशुओं को खिलायी जाती है). कुचा लगाना (आग लगाना), भेक्कल (भ्रष्टा-चार), खोडिया (क्रीडा ? वर जब कन्या को ब्याहने जाता है तो उसकी अनुपस्थिति मे यह उत्सव मनाया जाता है), होलर (छोटा बच्चा), तौणी (छोटी हंडिया), धास (विघ्न-बाधा), सिंदारा (सिंदारे मे विवाहिता कन्या को साड़ी चूडियों का जोडा आदि सामान भेजा जाता है), बरी (वर पक्ष की ओर से दिखाया जानेवाला सामान), बोहिया (बोहिये मे मिठाई आदि रखकर भेजी जाती है), टौरा (गेंद का बल्ला), चिट्टा (सफेद), टिक्कड (मोटी रोटी), जोक्खो (डर, खतरा), सुत्तण (स्वस्थान, लडकियो का पायजामा), गौ (चाह), कौद्दा पीटना (जाघो पर हाथ मार कर ललकारना), पिन्नस (फारसी फीनस, डोली जिसमे वधू बैठकर जाती है), माड़ा (कम-जोर), खुसखल्ला, चुकडायत, साढसती, कजरी, गडदल्लो, ताज्जो, तेरह-ताली, फिड्डा, फिसड्डी, तोवडा, ढीगडा, बजरबट्टू, बुक्कल, बन्ना (या बनड़ा),

बिहाई (माता), बैंडा, ढोबरा, दोगडा (वर्षा), आदि सैकडों शब्द ऐसे है जो कुरु जनपद मे बोले जाते है और भाषाशास्त्र का अध्ययन करने के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण है। शब्दो की भॉति अनेक मुहावरे, कहावते, और पहेलिया भी यहॉ से एकत्रित की जा सकती है। लोकगीतो का तो यहॉ भडार है। जनम दिन, विवाह-शादी, तिज्जो, होली आदि के अवसरों पर गाये जाने वाले गीतो के अलावा यहॉ की स्त्रियो ने भगतसिह जैसे क्रातिकारियो की वीरता के भी गीत जोडे है।

निम्नलिखित गीत मुजफ्फरनगर मे बहुत प्रचलित है। चौसर खेलते हुए राजा-रानी मे कुछ कहा-सुनी हो जाती है। राजा दूसरा ब्याह करने चल पडता है और हसाराव की बेटी को व्याह कर लाता है। इसी भाव को इस गीत मे मार्मिकता से व्यक्त किया गया है—

राजा रानी चौसर खेलें जी
एक बाजी खेली दोय चार।
तीजे पासे मे राजा लड पडे जी।
रानी— राजाजी जो तुम बडे हो खिलाड़
बेटी तो ब्याओ हसाराव की।
राजा— रानी ए, ऐसे तो बोल न बोलू,
रानी ए, जाऊँगा देश-विदेश
बेटी तो लाऊँ हसाराव की।
रानी— राजा जी एक लाते दोय चार
म्हारी तो डरै है बलाय जी।
वहॉ से तो उठे राजा घर गये जी
"बादी ए, लाओ म्हारे पॉचो हथियार
खूंटी से लाओ कपडे जी।"
बादी— राजा जी, क्यारे करोगे हथियार
कोई क्या करोगे कपडे जी।
राजा— बादी ए, रानी ने बोले है बोल
बेटी तो ब्याऊँ हसाराव की।
बादी— राजा जी, बाली थी नादान
नीद मे सुन्दर गाफिल जी।
वे चले कोस पचास

डेरा तो डाला चपे बाग मे
पूछूँ ता हसा जी के बाग
कोई बाग बताओ हसाराव के।
चलते मुसाफिर यूँ कहा जी
वे दीखे हसा जी के बाग
नीबू नारगी जामुन रस भरे जी।
पूछूँ ता हसा जी के ताल
कोई ताल बताओ हसाराव के।
चलते मुसाफिर यूँ कहा
वो दीखे हसा जी के। ताल
धोबी तो धोवें कपडे डेढ़ सौ जी।
पूछूँ ता हसा जी की डौढी
डौढी बताओ हसाराव की।
वो दीखे हसा जी की डौढ़ी
नौकर-चाकर पूरे डेढ़ सौ जी।
पूछूँ ता हसा जी की रसोई
रसोई बताओ हंसाराव की।
दे दीखे हसा जी की रसोई
बामन तो पूरे डेढ़ सौ जी
पूछूँ ता हसा जी की बेटी
बेटी बताओ हसाराव की।
बेटी हसाराव की बन मे
गउएँ चुगावैं बन मे एकलो जी।
पतली कमर गोरा रङ्ग
फूलो की सटी उनके हाथ जी।
राजा जी गये हैं बनो मे
जाय मिले हसा जी की बेटी से।
"हसाजी ऐसी तो रूप सरूप
अजलौ तो क्वारी क्यूँ रही जी?"
"राजाजी ढूढे है चारों ही देस
म्हारी जोडी का वर ना मिला जी।"
"राजाजी, ऐसे तो रूप सरूप

तुम क्वारे क्यूँ रहे जी ?"
"रानी ए, मर गये भाई और बाप
भाइयो भरोसे अजलौ क्वारे जी
रानी ए, अपनी अम्मा से कहियौ जाय
'म्हारी जोड़ी के बर बाग मे जी।"
व्हासे तो गई हसा
अम्मा जी के पास जी।
"अम्मा म्हारी जोडी के बर बाग मे जी।"
एक फेरा फिरा दोय चार
तीजे फेरे मे राजा रो पडे जी।

हंसा— राजाजी, क्या याद आये माई बाप
कोई याद आया क्या अपना देसडा जी ?
कोई क्या याद आया यारो बैठना जी ?

राजा— रानी, मेरी ना याद आयो माई बाप
न याद आया म्हारा देसड़ा जी
म्हारी याद आई म्हारी नार।
सेज्जो पै छोड्डी सुन्दर एकलीजी।

हंसा— अम्मा मेरी मरूँगी जहर बिस खाय
राजा के कहियै रानी दूसरी जी।

अम्मा— बेटी मरूँ बरजू थी दिन और रात
चलते मुसाफिर मत दोसती जी
मेरी बेटी की मरेगी बलाय
राजा की मरियो रानी दूसरी जी
अपनी का बीरा दूगी साथ
अजल-मजल पहुँचावे जी।

वहाँ से तो चले राजा
महलों मे पहुँचेजी
खोलो ना रानी चन्दन किवाड
बेटी तो लाया हसाराव की।
"वगड बखेरो राजा दहेज
कूडे पै उतारो रानी दूसरी जी।"

★

चीनी भाषा और लिपि

चीनी भापा ससार की एक प्राचीनतम भाषाओं मे गिनी जाती है। चीन की एक पौराणिक कथा के अनुसार साग चीह नामक किसी व्यक्ति ने रेती पर पक्षियो के पद-चिह्न देख कर चीनी भाषा का आविष्कार किया था। कहते है जब लिपि का आविष्कार हो चुका तो आकाश से अन्न की वर्षा होने लगी और पिशाच आदि रुदन करने लगे।

पुरातत्ववेत्ताओ के अनुसार चीनी लिपि एक अत्यन्त प्राचीन लिपि है। पीली नदी की घाटी मे होनान प्रान्त के अनयाग नामक स्थान की खुदाई करते समय जो कछुओं की अस्थियाँ निकली है उनसे इस विषय पर काफ़ी प्रकाश पडता है। ईस्वी सन् के पूर्व १३वीं सदी से ११वीं सदी तक यह स्थान यिन राजवशों की राजधानी रहा। यहाँ के निवासियों का विश्वास था कि इन अस्थियों मे जादू की शक्ति है। अस्थियों को आग पर रखने से इन पर दरारें पड़ती थीं और इनकी सहायता से भविष्य का बखान किया जाता था। इन अस्थियों पर जो लेख मिले है उनसे पता लगता है कि ईसा से पूर्व १३वीं सदी से भी पहले, यानी आज से ३ हजार वर्ष पूर्व चीनी लोग लिखने की कला से अभिज्ञ थे।

आगे चल कर काँसे के बर्तन और बाँस की पट्टियो पर किसी नुकीली लकडी या काँसे की कलम से लाख की स्याही द्वारा लिखा जाने लगा। बाल के बने ब्रुश और स्याही का आविष्कार हो जाने पर रेशम, तथा ईसवी सन् की दूसरी सदी मे कागज का आविष्कार होने तक बाँस, वृक्ष की छाल और सन आदि को लिखने के काम मे लाते थे।

चीनी लपि चित्रलिपि का ही रूपान्तर है जिससे मानवी मस्तिष्क के

अद्भुत चमत्कार का पता लगता है। चित्रो के सकेतो द्वारा किस प्रकार प्राचीन मानव अपने मन के विचारो को अभिव्यक्त करता था और उसने इन चित्रो को किस प्रकार लिपि का रूप दिया, यह मानव इतिहास की बडी मनोरजक कहानी है। निम्नलिखित चीनी वर्णों की लिखावट को जरा ध्यान से देखिये—

१ आदमी—रेन (आदमी की दो टॉगे मालूम होती है)

२ जमीन—थु (सम्भवतः मिट्टी की दो सतहो मे से एक वृक्ष उगता हुआ दिखाई पड़ता है)

३ मुँह—खौ (मुँह जैसा लगता है)

४ लकडी—मु (वृक्ष की शाखाये मालूम दे रही है)

५ दरवाजा—मन (दरवाजो के दो किवाड मालूम दे रहे है)

६ गाडी—छ (दो पहियों के बीच मे बैठने की जगह दिखाई दे रही है)

७ सूर्य—पुराना रूप

वर्तमान रूप —रि (सूर्य जैसा लगता है)

८ चन्द्र—पुराना रूप

वर्तमान रूप —यूवे (चन्द्र जैसा लगता है)

चीन की जनसख्या ६० करोड है जिसमे ५० करोड़ से अधिक हान जाति के लोग है जिनकी मातृभाषा चीनी है। चीन के भिन्न-भिन्न प्रान्तो मे अलग-अलग बोलियॉ बोली जाती हैं, यद्यपि सारे चीन की लिपि एक ही है। उदाहरण के लिए कैण्टन, स्वातो, अमोय, फूचो, वेन च, निंगपो, हक्का और मैण्डरिन (पीकिंग) की बोलियॉ परस्पर इतनी भिन्न है कि यदि कैण्टन का कोई आदमी पीकिंग चला जाय तो वह वहॉ के निवासियो को अपनी बात समझाने मे असमर्थ ही रहेगा, हाँ यदि वह अपनी बात लिख कर दे दे तो बात दूसरी है। इसके अलावा चीन मे लगभग ६० भिन्न प्रकार की अल्प-संख्यक जातियाँ बसती हैं जो म्याव्, मगोल, वीवर, कजाक आदि भाषाएँ बोलती है।

चीनी भाषा एक वर्ण-विशिष्ट [मोनो-सिलेबिक] भाषा मानी जाती है, यद्यपि उसके एक बार मे उच्चारित किए जानेवाले शब्द मे एक या एक से अधिक वर्ण या अक्षर हो सकते हैं। चीनी भाषा हिन्दी या अग्रेजी आदि भाषाओं की भॉति ध्वन्यात्मक [फौनेटिक] नही है। इसलिये किसी चीनी शब्द का उच्चारण जान लेने मात्र से उसका लिखना आसान नहीं हो जाता। चीनी भाषा मे कोई वर्णमाला न होने से इसमे प्रत्येक शब्द के लिये एक

वर्ण लिखना पडता है और यह वर्ण अपने आप मे पूर्ण होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि जितने भी शब्द हो सकते है उन सबके लिये भिन्न-भिन्न वर्ण लिखे जाते है। इन वर्णो को लिखते समय उनके उच्चारण, उनकी लिखावट और उनके अर्थ का अलग-अलग तौर पर ध्यान रखना आवश्यक है।

सन् १७१६ मे प्रकाशित चीनी भाषा के सबसे बडे कोष मे ४० हजार वर्ण दिये गये हैं, यद्यपि इनमे से केवल छः-सात हजार ही पिछले कई वर्षों से चीनी साहित्य मे काम मे आ रहे है। जिन वर्णों मे ऊपर-नीचे बहुत से संकेत-चिह्न बनाने पडते है वे लिखने मे अधिक कठिन होते है। एक वर्ण मे अधिक से अधिक ३३ चिह्न बनाये जाते है, अर्थात् ३३ वार ब्रुश उठा कर आपको वह वर्ण लिखना होगा, और यदि कोई सकेत-चिह्न इधर-उधर लग गया तो सम्भव है कोई दूसरा ही वर्ण बन जाय।

चीनी भाषा की पुस्तकें उर्दू की भॉति दाहिनी ओर से बाई ओर को खुलती हैं तथा ऊपर से नीचे की ओर को पढी जाती है। चीनी भाषा मे विभिन्न उपसर्ग और प्रत्यय का अभाव होने से वर्ण के मूलरूप मे परिवर्तन नहीं होता। काल, वचन और पुरुष भेद भी इस भाषा मे नहीं है। इसलिये चीनी का एक वर्ण दूसरे वर्ण के साथ सयुक्तरूप मे प्रयुक्त हो सकता है। चीनी भाषा की व्याकरण सम्बन्धी इस सरलता के कारण इस भाषा का बोलना अपेक्षाकृत कठिन नही है, जबकि चीनी विद्यार्थियों को व्याकरण की जटिलता के कारण हिन्दी आदि भाषाएँ सीखने मे काफी कठिनाई का अनुभव होता है। हॉ, एक बात जरूर है कि ऊँचे-नीचे स्वर भेद के कारण चीनी बोलने और समझने मे कठिनाई होती है। उदाहरण के लिये, येन चिंग के तीन अर्थ होते हैं—ऑख, चश्मा, और अबाबील चिड़िया। लेकिन स्वर भेद के साथ ठीक-ठीक उच्चारण न करने से आप अपना ठीक अभिप्राय दूसरों को नहीं समझा सकते।

अपनी लिपि को विकसित और व्यवस्थित बनाने के लिये चीन के लोगों ने बहुत परिश्रम किया है। हान राजाओं के समकालीन चीन के प्रसिद्ध भाषा-शास्त्री शू शेन ने सन् १२१ मे चीनी लिपि के इतिहास और विकास का विस्तृत अध्ययन करके एक व्युत्पत्ति कोष का निर्माण किया है जो ससार का सर्वप्रथम कोष माना जाता है। इस कोष मे चीनी के ६,००० वर्णों को अनेक रूप, ध्वनि और अर्थ के अनुसार विश्लेषण कर उन्हे छः भागो मे विभक्त किया गया है।

पहले कहा जा चुका है कि चीनी लिपि मूल मे चित्र-लिपि थी, लेकिन आगे जब चित्रो के सकेतो द्वारा नये विचारो की अभिव्यक्ति न हो सकी तो स्वरभेद की विभिन्नता से एक ही वर्ण के कई-कई अर्थ किये जाने लगे। उदाहरण के लिये, प्राचीनकाल मे 'वो' का अर्थ 'एक प्राचीन अस्त्र था' अब इसका अर्थ 'मैं' किया जाता है। आगे चलकर दो वर्णों के सयोग से सयुक्त वर्ण बना कर शब्द कोष मे वृद्धि की जाने लगी।

चीनी इतिहास के अध्ययन से विदित होता है कि सम्राट् वू तिग के शासन काल से लेकर यिन राजवशो के राजकाल तक पुरानी लिपि मे बहुत कम परिवर्तन हुए। पश्चिमी चाऊ राजवशो (१०२७-७७१ ई० पू०) के काल मे बहुत से नये वर्णो का समावेश किया गया, यद्यपि लिखने का तरीका प्रायः पुराना ही रखा गया। इस काल मे, उत्तर मे चीन की बडी दीवार से लेकर दक्षिण की ओर हुआई नदी की घाटी तक चीनी लिपि का प्रचार हो गया। छिन राज्यकाल (२२१ ई० पू०) मे सम्राट् श्ह ह्वाग ने चीनी लिपि को एक रूप देने के लिये चीन भर मे छिन लिपि का प्रचार किया। लेकिन इस लिपि के कठिन होने के कारण सरकारी फर्मानो के लिखने-पढने मे बहुत दिक्कत होती थी, इसलिये इस समय लि लिपि का प्रचार किया गया जिसमे वक्र रेखाओ और गोलाकार कोणो के स्थान पर विना कोण की सीधी रेखाये बनाई जाने लगी। पूर्वीय हान राजवशो के समय (ईसवी सन् की दूसरी सदी) से सरकारी कर्मचारियो द्वारा लिखी जानेवाली लिपि का प्रचार बढा। इस लिपि मे अधिक क्रमबद्ध, सुडौल और चौकोर अक्षर लिखे जाने लगे। यही लिपि आज भी चीन मे प्रचलित है।

इस प्रकार यिन राजवशो से लगा कर छिन और हान राजवशो तक लिपि को उत्तरोत्तर व्यवस्थित, एकरूप और सरल बनाने के प्रयत्न किये जाते रहे। इसी प्रकार वेइ, त्सिन तथा उत्तरीय और दक्षिणी राजवशो के काल मे ईसवी सन् की तीसरी सदी से लेकर छठी सदी तक, तथा आगे चलकर थाग राजवशो के समय के बाद तक लेख आदि सक्षिप्त और सरल लिपि मे ही लिखे जाते रहे। सुग, युवान और मिंग राजाओ के काल मे चीनी पुस्तके छपने भी लगी थी।

चीनी भाषा की समृद्ध और बहुरूपता के द्योतक यहाँ कुछ चीनी 'शब्द' दिये जाते हैं—

(क) प्राचीन प्रान्त तथा शहरो के नाम जो किसी दिशा, समुद्र अथवा पहाड़ के नाम से बने है—

पै(उत्तर) + चिंग(राजधानी) = पैचिंग (पीकिंग)
नान(दक्षिण) + चिंग(राजधानी) = नानचिंग (नानकिंग)
शान(पहाड़) + तुंग(पूर्व) = शान्तुंग
हू(समुद्र) + नान(दक्षिण) = हूनान (हूनान)
हू(समुद्र) + पै(उत्तर) = हूपै (हूपै)
शांग(ऊपर) + हाय(समुद्र) = शांगहाय (शंघाई)

(ख) विभिन्न अर्थ वाले दो वर्णों के संयोग से बननेवाले 'शब्द' जिनका अर्थ ही बदल जाता है—
ट्येन(आकाश) + च(पुत्र) = आकाश-पुत्र = राजा
फै(उडना) + ची(मशीन) = उडनेवाली मशीन = हवाई जहाज
छिंग(हरा) + न्येन(वर्ष) = हरा वर्ष = युवावस्था
श्वे(पढना) + वन(लिखना) = पढना-लिखना = साहित्य
मिंग(चमकीला) + ट्येन(आकाश) = जब आकाश फिर से चमकीला हो = कल।
युंग(लगाना) + शिन(दिल) = दिल लगाना = ध्यान

(ग) अन्य मनोरंजक शब्द—
त्र(अपने आप) + लाय(लाना) + श्वे = जिसमे से अपने आप पानी बहता हो = नल
च(अपने आप) + लाय(आना) + श्वे(पानी) + पी(कलम) = ऐसी कलम जिसमे से अपने आप पानी बहता हो = फ़ाउंटेन पेन
आय(चाहना) + क्वो(देश) + कुंग(जनता) + यूवे(समझौता) = देश की जनता के लिये समझौता चाहना = संधि
चुंग(मध्य) + ह्वा(पुष्प) + रेन(आदमी) + मिन(जनता) + कुंग (साधारण) + हू(एकता) + क्वो (देश) = चीनी लोक जनतंत्र

(घ) विदेशी भाषाओं के शब्दो का रूप परिवर्तन—
मार्क्स = मारखस
शाक्य मुनि = श्र जा मो नि
जैन = चा एन।

भावो को व्यक्त करने की शक्ति, प्रवाह, व्याकरण पद्धति और शब्दकोष की दृष्टि से चीनी भाषा संसार की विकसित भाषाओ मे गिनी जाती है। मैण्डरिन (पीकिंग बोली) तो सुनने मे बहुत मीठी लगती है। लेकिन कम्पोजिंग, टाइपिंग, कोष निर्माण आदि की दृष्टि से चीनी बहुत दुरूह सिद्ध हुई

है। इसलिये पिछले ६० वर्षों मे इस भाषा की ध्वन्यात्मक रूप देने के लिये समय-समय पर अनेक प्रयोग होते आये है। अभी जनमुक्ति सेना के चीनी शिक्षक छी च्येन ह्वा ने अपने देश के अपढ मजदूरो, किसानो और सैनिकों को अल्प समय मे चीनी सिखाने के लिये नई पद्धति का आविष्कार किया था। लेकिन भाषा को सरल बनाने के लिये जिन ध्वन्यात्मक सकेतो का छी ने आविष्कार किया था, वे केवल चीनी वर्णों का उच्चारण करने मे ही सहायक हो सकते थे, चीनी वर्णों के लिखने मे नही। अभी ५ फरवरी १९५२ को चीनी लिपि मे सुधार करने के लिये चीन मे एक सशोधन कमेटी की स्थापना की गई है। यह कमेटी केवल २,००० चुने हुए वर्णों की सहायता से किसान और मजदूर के लिये पाठ्य पुस्तकें तैयार कर रही है, तथा पीकिंग बोली के उच्चारण का आदर्श मान कर क्रमशः चीनी लिपि का ध्वन्यात्मक रूप देने के लिये उसकी वर्ण माला बना रही है। अवश्य ही इससे विदेशियो को चीनी सीखने मे और साक्षरता प्रचार मे सुविधा होगी।

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ७

人 土 口 木 門 車 日 日

月 月

८ ८

★

चीन के गोर्की लू-शुन

"जब कभी मैं कोई चीनी पुस्तक पढता, तो मुझे बडा सताप होता और ऐसा लगता है कि मैं मानवीय अस्तित्व का अश नही हूँ। परन्तु जब कभी मै कोई विदेशी पुस्तक—भारतीय पुस्तको को छोडकर (यहाँ सभवतः बौद्ध धर्म सम्बन्धी साहित्य से अभिप्राय है—लेखक)—उठाता, तो मेरे शरीर मे बिजली-सी दौड जाती और ऐसा लगता है कि मैं मानवीय अस्तित्व के सम्पर्क मे आ गया हूँ। साथ ही मुझे कुछ करने की, क्रियाशील होने की, प्रेरणा मिल रही है"—यह कथन है चीन के यथार्थवादी लेखक लू-शुन का जिससे तत्कालीन चीनी साहित्य और समाज पर प्रकाश पडता है। दर-असल उस समय चीनी भाषा मे रचनात्मक साहित्य नहीं के बराबर था और शिक्षित लोग विदेशी पुस्तकें पढकर ही अपनी ज्ञान-पिपासा शान्त करते थे। इन्हीं परिस्थितियों मे, आगे चल कर सामती रीति-रिवाज, आचार-विचार, भाषा और साहित्य के विरुद्ध ४ मई १६१६ का महत्वपूर्ण आन्दोलन चीन मे शुरू हुआ।

लू-शुन का जन्म सन् १८८१ मे चेकिचाग प्रात के साओशिग नगर मे एक सामन्ती परिवार मे हुआ था। इनके पिता एक अनुशासन-प्रिय विद्वान् थे, इसी वातावरण मे लू-शुन का पालन-पोषण हुआ था। नानकिंग मे शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् १६०२ मे वे डाक्टरी का अध्ययन करने के लिये जापान गये जहाँ उन्होंने पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान और साहित्य का गम्भीर अध्ययन किया। इस अध्ययन के फलस्वरूप लू-शुन डारविन के विकासवाद तथा बायरन, शैली, पुश्किन और लारमेतोफ आदि कवियो की रचनाओ से विशेष प्रभावित हुए। उस समय रूस और जापान मे युद्ध छिड़ा हुआ था। लू-शुन ने देखा कि जापानी सैनिको ने, रूसी सेना के लिये गुप्तचर का काम करने

के कारण कुछ चीनीओ को फाँसी पर लटका दिया। यह देखकर लू-शुन के स्वाभिमानी हृदय को बहुत आघात पहुँचा और डाक्टरी करने के विचार को उन्होंने त्याग दिया। आठ वर्ष जापान मे रह कर जब वे स्वदेश लौटे तो उनका विचार ही बदल गया—"चीनी जनता के औदासीन्य की चिकित्सा करना उसकी शारीरिक चिकित्सा करने की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है, और साहित्य से बढ़कर अन्य कोई अस्त्र उसके मस्तिष्क की चिकित्सा करने और उसे क्रियाशील बनाने मे सफल नही हो सकता।" कहने की आवश्यकता नहीं कि चीन लौटने पर लू-शुन ने डाक्टरी छोड़कर एक स्कूल का अध्यापक बनना पसद किया।

आगे चलकर लू-शुन पीकिंग चले आये और सरकार के शिक्षा विभाग मे उन्होंने नौकरी कर ली। सन् १९२० मे वे पीकिंग विश्वविद्यालय मे अध्यापक हो गये और 'नवयुवक' नामके एक दैनिक पत्र का सम्पादन करने लगे। उस समय पीकिग विश्वविद्यालय विद्यार्थी-आन्दोलन का केन्द्र बना हुआ था। १९२६ मे इस आन्दोलन का तीव्र दमन किया गया जिसके फलस्वरूप उन्हे सरकारी शिक्षा-विभाग से पृथक होना पडा।

लू-शुन आधुनिक चीनी साहित्य मे मौलिक कहानियो के जन्मदाता माने जाते है। वे अपने देश की राजनैनिक और सामाजिक समस्याओ से पूर्णतया अवगत थे। अपनी लेखनी द्वारा उन्होने सामती व्यवस्था पर करारे प्रहार किये हैं। कला के लिये कला के सिद्धान्त को स्वीकार न कर कला और जीवन का वे घनिष्ठ सम्बन्ध मानते है। इसीलिए मानवता मे उनका अटूट विश्वास है। लू-शुन समाज के नग्न और वीभत्स चित्रण से ही सन्तोष नही कर लेते, वे समाजवादी यथार्थवाद के ऊपर आधारित जीवन के वास्तविक लेकिन आस्थापूर्ण चित्र उपस्थित करते है, यही उनकी विशेषता है।

चीन के कनफ्यूशियस धर्म मे पितृभक्ति और परिवार-अवस्था पर बहुत जोर दिया गया है। प्राचीनकाल मे शिक्षित लोग अशिक्षितो से, और जमींदार कर्मकरो से मिलना अपनी शान के खिलाफ समझते थे, ऐसा करने से उनकी 'लाज' नहीं रहती थी। यह एक बडा सामाजिक अपराध समझा जाता था। इसलिये अपना सब कुछ गवा कर के भी चीनी लोग अपनी लाज की रक्षा करते थे। लू-शुन ने मिथ्याभिमान की इस प्रवृत्ति पर अपने साहित्य मे घातक प्रहार किये हैं।

"पागल की डायरी" नामक कहानी लू-शुन की सर्वप्रथम रचना है जो १९१८ मे 'नवयुवक' मे प्रकाशित हुई थी। लेखक ने इस कहानो मे तत्कालीन

सामन्ती समाजव्यवस्था के प्रति अपने ही विद्रोह को व्यंग्यात्मकरूप मे व्यक्त किया है। धार्मिक नैतिकता का भूत 'विक्षिप्त' लेखक के मन पर इतना अधिक रहता है कि उसे सब जगह अपनी कमजोरी-ही कमजोरी दिखाई देती है। वह सोचता है कि उसे और अधिक सावधानी के साथ रहना चाहिये, "नहीं तो फिर चाओ का कुत्ता उसे बार-बार क्यो देख रहा है? सडक पर चलने वाले लोग उसे घूर कर क्यो देख रहे है? और इन बच्चो को क्या हुआ? ये क्यो आँख फाड कर घूर रहे है? ये तो उस समय पैदा भी नही हुए थे! और-तो-और मेरा सगा भाई तक मेरे विरुद्ध साजिश करके मुझे हडप जाने को तैयार है! किताब के सारे शब्द मेरी ओर देखकर हँस रहे है! पिता और पुत्र, भाई और बहने, पति और पत्नियाँ, दोस्त और दुश्मन, शिक्षक और विद्यार्थी और हर चीज सब साजिश मे शामिल है! बडा चाओ और उसका कुत्ता भी इस भीड़ मे शामिल है! अपने आपको सुधारने की बजाय इन सब ने मुझ पर 'पागल' होने की मोहर लगा दी है।" इस प्रकार लू-शुन ने 'पागल की डॉयरी' के माध्यम से सामन्ती विचार-धारा के पोषक कनफ्यूशियस धर्म को मनुष्य-भक्षी धर्म के रूप मे चित्रित किया है।

सन् १९१८ से लगाकर १९२५ तक लू-शुन ने और भी बहुत सी सुन्दर कहानियाँ लिखीं। 'साबुन की टिकिया' नामक कहानी उनकी एक श्रेष्ठतम कृतियो मे गिनी जाती है। इस कहानी मे पितृभक्ति पर तीव्र प्रहार किया गया है। कहानी का नायक सूमिंग नई तहजीब को एक ढकोसला समझता है। उसका कहना है कि विद्यार्थी लोग बिगडते जा रहे हैं और समाज रसातल को पहुँच रहा है, और यदि पुरानी परम्पराएँ इस प्रकार नष्ट होती चली गईं तो चीन की तबाही आ जायेगी। यह सोचकर वह माता-पिता की आज्ञा का पालन न करने के कारण 'भ्रष्ट हुए' विद्यार्थियो और 'सडेगले' समाज के विरुद्ध जिहाद करना चाहता है ताकि धार्मिक परम्परायें सुरक्षित रह सकें।

'आह क्यू की सच्ची कहानी' लू-शुन की दूसरी महत्वपूर्ण रचना है। यह सन् १९११ के किसानो और जमींदारो के संघर्ष की कहानी है जिसमे अपनी लाज को बचाने की वृत्ति पर व्यंग किया गया है। आह क्यू अपनी जमीन और घर-बार आदि खोकर बडी विपन्न अवस्था को प्राप्त होता है। एक दिन शराब के नशे मे मस्त होकर वह इधर-उधर घूमने लगता है। वह अपना नाम चाओ (वहाँ के एक जमीदार का नाम) घोषित करता है, इस पर वहाँ का जमींदार क्रोध मे आकर उसका बहुत अपमान करता है। आह क्यू वहाँ की एक तरुण विधवा से प्रेम करने लगता है, लेकिन इस बात को समाज मे

बहुत बुरा माना जाता है । अब आह क्यू को एक बहुत खतरनाक व्यक्ति समझा जाने लगा है, उसे कही नौकरी नही मिलती। वह चोरी करना शुरू कर देता है। वह देश की क्रान्ति मे शामिल होना चाहता है। लोग उसे रोकते है और गुण्डा समझ कर उसके सीने मे गोली दाग दी जाती है। यही इस कहानी का साराश है। कहानी का नायक नैतिकता पर विजय प्राप्त करने के लिये अपमानो की घूँट को पी जाने और जीवन के कष्टप्रद अनुभवो को भुलाने का प्रयत्न करता है, लेकिन इन सब बातो से दमन और शोषण का प्रतिकार नही होता, उल्टे हीन भावना और अकर्मण्यता की वृद्धि ही होती है। इसी बात का कहानीकार ने बड़ी कुशलता से लक्ष्य किया है।

'मनुष्य द्वेषी' कहानी मे बुद्धिजीवियो के स्वप्नो पर कठोर व्यग्य किया गया है। १६११ की क्रान्ति के पश्चात् चीन के बुद्धिजीवियो मे एक नये जीवन का सचार हुआ, लेकिन समाज की विषम परिस्थितियो के कारण उन्हे जीवन मे निराशा ही मिली। अध्यापन से पेट भरना तक कठिन हो गया, पुस्तको की नकल करने तक का काम विद्वानो को न मिलता और एक भिखारी से भी बदतर जीवन उन्हे बिताना पडता। वेई अध्यापन के धधे से मुक्ति पाकर किसी सरकारी अफसर का सलाहकार बन गया, फिर देखिये नये मेहमान, नई रिश्वत, नई चापलूसी, नई तरक्की, नये अभिवादन, नये खेल-तमाशे, सब चीजे नई-ही-नई मालूम होती थी फिर गर्व, अहकार, निराशा और अनिद्रा की भी कमी नही थी। इतना भयकर परिवर्तन देखकर वेई के मित्र की तो कुछ समझ मे ही न आता था कि वह सब हो क्या रहा है। उसे तो समस्त जीवन अरण्यरोदन के समान मालूम होता था जहाँ क्रोध और दुख अपनी पीडा के साथ एकमेक हो गये थे। 'भूतकाल के लिये पश्चात्ताप' कहानी मे तो लेखक का व्यग्य और तीव्र हो उठा है। कोई सुरक्षित व्यक्ति बहुत ही किफायतशारी के साथ अपनी पत्नी के साथ जीवन यापन करना चाहता है, लेकिन सफल नहीं होता। अनुवाद आदि काम के लिये भी वह व्यर्थ ही प्रयास करता है। वह सोचता है कि जब आजीविका का कोई साधन ही नही तो अपनी पत्नी से वह किस प्रकार प्रेम कर सकता है। एक दिन वह यह बात अपनी पत्नी से कह देता है। पत्नी को यह सुनकर बडा दुख होता है और वह अपने पति के पास से चली जाती है। कुछ दिनो बाद जब पति अपनी पत्नी की मृत्यु की खबर सुनता है तो वह अवाक् रह जाता है और उसकी आँखो के सामने शून्यता छा जाती है। वह फिर से नया जीवन प्रारम्भ करने का प्रण करता है। वह निश्चय करता है कि अब की बार वह अपने घायल

हृदय मे सत्य को छिपाकर चुपचाप आगे बढेगा, तथा विस्मृति और असत्य को ही अपना मार्गदर्शक बनायेगा।

'मेरा पुराना घर' और 'नये वर्ष का बलिदान' इन कहानियों मे ग्रामीण किसानो का हृदय द्रावक चित्रण है। पहली कहानी मे एक किसान लगान के दुख के कारण मूर्च्छित अवस्था को प्राप्त होता है। दूसरी कहानी मे एक विधवा की करुण कहानी है जिसे प्रचलित आचार-विचारों के कारण एक भिखारिन का जीवन व्यतीत करने के लिये बाध्य होना पडता है। इसके अलावा लू-शुन ने अपनी तीव्र लेखनी द्वारा 'और भी अनेक व्यग्यपूर्ण एक-से-एक बढकर कहानियाँ लिखी है जिनमे सामाजिक तत्वों का विश्लेषण करते हुए बडी कुशलता -से चीन की 'प्राचीन समाज-पद्धति पर आघात किया गया है।

लू-शुन की रचनाओ का दूसरा काल १६२८ से आरम्भ होकर १६३६ तक चलता है। इसी बीच मे उन्होने अनेक आलोचनात्मक निबन्ध, ऐतिहासिक कहानियाँ और रूसी पुस्तको के अनुवाद प्रकाशित किये। इनके निबन्ध २५ जिल्दो मे छपे हैं जिनमे क्रान्ति की समस्याओ से लेकर बच्चो के खिलौनो तक विविध विषयों की चर्चा है। व्यग्य और विनोद इन निबन्धो की विशेषता है। इनके निबन्धो के नाम है 'गिड गिडाने वाली बिल्ली,' 'कुत्ते अपने मालिको से अधिक भयानक होते है,' 'मच्छर काटने के पहले गाते है'— इनमे प्रतिक्रियावादी लेखको के ऊपर करारे व्यग्य किये गये है। इनके उत्तरकालवर्ती निबन्धो मे 'झूठी आजादी की पुस्तक', 'अलकार-प्रधान साहित्य,' 'मृत्यु', 'फासी पर लटक कर खुदकशी करने वाली 'औरत का भूत' आदि उल्लेखनीय है।

अपने जीवन के पिछले दस वर्ष लू-शुन ने बडी कठिनाई मे व्यतीत किये। पीकिंग से वे अमोय विश्वविद्यालय मे चले आये, और १६२७ मे कैटन मे आकर सनयात सेन विश्वविद्यालय मे चीनी भाषा और साहित्य के प्रमुख पद पर कार्य करने लगे। १६३० मे उन्होने वामपन्थी लेखको की समिति का सगठन किया और अब उन्हे दृढ निश्चय हो गया कि समाजवादी सिद्वान्तो पर आधारित सामाजिक परिवर्तनो के बिना केवल बुर्जुआ क्रान्ति से देश का कल्याण नहीं हो सकता। लू-शुन का अन्तिम लेख जुलाई-अगस्त, १६३६ मे, उनकी मृत्यु से केवल दो मास पूर्व प्रकाशित हुआ था जिसमे उन्होने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की जापान के विरुद्ध राष्ट्रीय सयुक्त मोर्चा कायम करने की नीति का समर्थन किया था।

लू-शुन चीन के एक महान लेखक थे। वे चीन के गोर्की कहे जाते है। समाजवादी यथार्थवाद से उनकी रचनायें ओतप्रोत है। उनकी रचनाओ मे कनफ्यूशियस धर्म, जनता मे फैले हुए अन्धविश्वास, मजदूर किसानों की अनिच्छापूर्वक सेना मे भरती, समाचार-पत्रो पर अकुश, बुद्धिजीवियों की बेकारी आदि बातो की कटु आलोचना की गई है। वे कहा करते थे—"सोचो और समाज के आर्थिक प्रश्नो का अध्ययन करो। सैकड़ो निर्जीव पडे हुए गॉवो मे भ्रमण करो। सेनापतियो की ओर दृष्टिपात करो और फिर उनके शिकारो को देखो। ऑख खोलकर साफ दिमाग से अपने समय की वास्तविकताओ की ओर नजर डालो। प्रबुद्ध समाज की स्थापना के कार्य मे जुट पडो। परन्तु हमेशा सोचते और अध्ययन करते रहो।" लू-शुन की इसी महानता को लक्ष्य करते हुए चीन के राष्ट्रपति माओत्से-तुग ने कहा था—"लू-शुन इस नई सास्कृतिक सेना के अलमबरदार एक महान् और बडे वीर सैनिक थे। वे चीनी सास्कृतिक क्रान्ति के एक मुख्य सेनापति थे। वे केवल लेखक ही नही, एक महान् विचारक और महान क्रातिकारी भी थे। वे असाधारण रूप से तपे हुए साहसी, दृढप्रतिज्ञ, कर्तव्यपरायण और एक उत्साही राष्ट्रीय वीर थे, जो शत्रु के विरुद्ध आक्रमण के लिये जूझ पडे थे।"

'पूर्व देश की लजीली लड़की

पीकिंग मे परीक्षाएँ देने के लिये चीन के हजारो विद्यार्थी एकत्रित हुआ करते थे। इनमे चेकियाग के शाओ शिंग फू-का निवासी लिच्या नामका एक विद्यार्थी भी था। उसके पिता कागसू प्रान्त मे जज थे। पीकिंग मे रहते हुए लिच्या नाटकगृहो और संगीतालयो मे आया-जाया करता था। यहाँ वह प्रसिद्ध गायिका तू मेई के सम्पर्क मे आया। नाट्य-जगत् मे यह गायिका शिह-निआग के नाम से विख्यात थी। शिह निआग अत्यन्त रूपवती थी। उसकी आँखे शरदकालीन सरोवर के समान गहरी और चमकीली थी, उसका मुख कमल की भाँति खिला हुआ और उसके होठ जवा कुसुम की भाँति रक्त के थे। मालूम नहीं विधाता ने कौन सी भूल की कि अनमोल मणिका यह बहु-मूल्य टुकडा पृथ्वी पर आ गिरा! शिह निआग उन्नीस वर्ष को थी। न जाने कितने सरदारो और राजकुमारो के हृदयो को उसने उन्मत्त बना दिया था, उनके मनोभावो को क्षुब्ध कर दिया था और उनके बाप-दादाओ के खजाने को बिना किसी पश्चात्ताप के खाली करा दिया था। लोगो ने उसके बारे मे एक छोटी-सी कविता लिखी थी—

"जब तू शिह निआग दावत मे आती है
अतिथि हजारो बडे-बडे प्याले गटक जाते है
एक छोटे प्याले की जगह।
जब तू मेई रगमच पर उपस्थित होती है
बाकी सब अभिनेत्रियाँ पिशाचिनियो के
समान प्रतीत होती है।"

लिच्या ने अपने जीवन मे कभी सौन्दर्य की पीडा का अनुभव नही किया

था। किन्तु जबसे उसे शिह-निश्राग का साक्षात्कार हुआ उसका चित्त वक्षुब्ध हो उठा। लि-ने भी अनुपम सौदर्य पाया था और स्वभाव से वह मधुर और कोमल था। वह अपने धनको बेपरवाही से खर्च करता और बडे उन्मुक्त भाव से अपनी प्रेमिका को उपहार देता। जिससे एक तो शिह-निश्राग असत्यता और लालसा को सदाचार से विपरीत मानने लगी और दूसरे उसने सम्मान के साथ जीवन व्यतीत करने की ठान ली। वह लिच्या की कोमलता और उदारता से प्रभावित होकर उसकी ओर आकर्षित होती गयी। किन्तु शिह-निश्राग उसके पिता से घबराती थी, इसलिये, जैसा वह चाहती थी, उसके साथ विवाह करने का साहस न कर सकी।

लेकिन इससे उन दोनो के प्रेम मे कोई बाधा उपस्थित नहीं हुयी। ऊषा के आनन्द और गोधूलि के हर्ष से विभोर हो वे पति-पत्नी की भाँति जीवन व्यतीत करने लगे। अपने सकल्पो मे उन्होने अपने प्रेमकी समुद्र और पर्वत से तुलना की। वास्तव मे :

"उनकी कोमलता समुद्र से भी गहरी थी
क्योकि समुद्र की गहरायी के मापको यह
उल्लघन कर गयी थी,
उनका प्रेम पर्वत के समान था
बल्कि उससे भी ऊँचा।"

जब से शिह-निश्राग लिच्या से प्रेम करने लगी, धनिक सरदारो तथा समर्थ मन्त्रियो को उसके सौन्दर्य रसपान से वचित ही रहना पड़ा। शुरू मे लि अपनी प्रेमिका को प्रचुर धन दिया करता था जिससे शिह-निश्राग की मालकिन उसे देखकर खिल उठती। लेकिन समय गुजरता गया। लि-का खजाना खाली होता गया और अब वह अपनी अभिलाषाओ को पूरी न कर सका। फिर भी बुढ़िया मालकिन ने धैर्य न छोड़ा।

इस बीच मे जब लि के पिता को पता चला कि उसका लडका नाटक-गृहो मे पडा रहता है, उसने उसे वापिस बुलाने के लिये बार-बार आदेश भेजे। लेकिन लि का विवेक नष्ट हो चुका था। वह घर लौटने मे विलब करता रहा और उसे मालूम हुआ कि पिताजी सचमुच रुष्ट हो गये है तो उसकी लौटने की हिम्मत न हुयी। बडे लोगो ने कहा है—

"जब तक समभाव है तब तक एकता है, जब समभाव नष्ट हो जाता है एकता भी नहीं रहती।"

शिह निश्राग का प्रेम सच्चा प्रेम था। जब उसने देखा कि उसके प्रेमीका

कोष खाली हो गया है तो उसके हृदय में बड़ा क्षोभ हुआ। बुढ़िया मालकिन अक्सर शिह निश्राग से कहती कि वह अपने प्रेमी से सम्बन्ध विच्छिन्न कर ले, तथा जब उसने देखा कि शिह निश्राग उसके आदेशों का पालन नहीं करती तो वह मर्मभेदी वाक्यों से लि को क्षुब्ध करती। लेकिन लि का स्वभाव इतना कोमल था कि वह कभी उत्तेजित न होता। बुढ़िया मालकिन के प्रति वह और अधिक सद्व्यवहार दिखाता जिससे निरुपाय होकर मालकिन ने शिह-निश्रागपर व्यग कसने शुरू किये :—

"हम लोग जो अपने द्वार खुले रखती हैं, हमे चाहिये कि अपने अतिथियो, अभ्यागतों को हम खूब लूटें जिससे हमारे भोजन-वस्त्र की व्यवस्था हो सके। हम लोग एक अभ्यागत को एक द्वार से बाहर भेजकर दूसरे अभ्यागत को दूसरे द्वार से अन्दर बुलाती हैं। तब हमारे यहॉ चॉदी और रेशम का ढेर लग जाता है। लेकिन लिच्या को तुम्हारे पास आते हुये एक वर्ष से अधिक बीत गया, और अब तो पुराने आश्रयदाता और नये अभ्यागतों ने आना बिलकुल ही बन्द कर दिया है। इसलिये मैं क्षुब्ध और दीन-हीन बन गयी हूँ। अब हमारा क्या होगा जब कि अभ्यागतों का आना ही बन्द हो गया है।"

शिह निश्राग ने अपने आपको बड़ी मुश्किल से सम्हालते हुये उत्तर दिया—

"तरुण लि यहॉ खाली हाथ नहीं आया था। उसने काफी धन हम लोगो को दिया है।"

"कभी ऐसी बात थी, लेकिन अब ऐसा नहीं है। उससे कहो कि वह तुम दोनो के लिए चावल खरीदने के वास्ते पैसे का इन्तजाम करे।"

"मेरा भाग्य खोटा है! जिन अधिकाश लड़कियों को मैं खरीदती हूँ वे अभ्यागतो की सारी चॉदी पर अधिकार कर लेती हैं और इस बात का बिलकुल भी ख्याल नहीं करतीं कि उनके ग्राहक जीवित हैं या मर गये हैं। लेकिन अब मैंने एक ऐसा सफेद चीता पाला है जो धन देने से इन्कार करता है, द्वार खोलकर अन्दर प्रवेश करता है और मेरे ऊपर सारा बोझ डाल देता है। ऐ अभागी लडकी! तू उस दरिद्र को निष्प्रयोजन ही अपने पास रखना चाहती है। तुझे खाने-पीने और पहनने-ओढ़ने को कहॉ से मिलेगा? उस भिखमगे से कह कि वह कुछ तो हमें दे। यदि तू उसे भगा नहीं देती तो मैं तुझे बेचकर दूसरी लड़की खरीद लूँगी। यह हम दोनों के लिये ठीक रहेगा।"

से उधार माँग सकते हो। तब मै पूरी तौर से तुम्हारी हो जाऊँगी और फिर मुझे उस औरत का गुस्सा कभी सहन नही करना पडेगा।"

"जब से मै तुम्हारे प्रेमपाश मे बँधा हूँ, मेरे मित्रो और सम्बन्धियो ने मेरे साथ सम्बन्ध रखना छोड दिया है। फिर भी यदि मैं उनसे घर जाने के लिये कुछ रुपया माँगू तो शायद कुछ मिल जाये।"

सुबह होने पर वस्त्रभूषा से सज्जित होकर जब लिच्या जाने को तैयार हुआ तो शिह निआग ने टोका—

"देखो यथाशक्ति प्रयत्न करो और वापिस आकर मुझे खुशखबरी सुनाओ।"

लिच्या अपने सम्बन्धियो और मित्रो के पास पहुँचा। उसने बहाना बनाया कि अब वह अपने घर वापिस लौट रहा है। सब ने उसे बधायी दी। लेकिन जब उसने रास्ते के खर्च के लिये रुपये की माँग की तो सभी ने अँगूठा दिखा दिया। उसके मित्रो को उसकी चारित्रिक कमजोरी का पता था और वे जानते थे कि वह किसी प्रेमिका के पाश मे फँसा हुआ है, तथा अपने पिता के क्रोध को सहन न कर सकने के ही कारण वह अभी तक पीकिंग मे पड़ा हुआ है। क्या सचमुच वह अपने घर लौटना चाहता है या वह बहानेबाजी कर रहा है? यदि वह कर्ज लिये हुये रुपये को अपनी प्रेमिकाओं के ऊपर खर्च कर दे तो क्या इसका पिता उन लोगों पर नाराज न होगा जिन्होंने उसे रुपया कर्ज दिया है? कुल मिला कर उसे अधिक-से-अधिक दस-बीस चाँदी के सिक्के मिल सकते हैं।

तीन दिन की दौडधूप के बाद जब वह सफल न हो सका तो शरम के मारे शिह निआग के पास जाने की उसकी हिम्मत न हुयी। लेकिन ऐसी कोई जगह नही थी जहाँ वह रात बिता सकता। ऐसी हालत मे अपने गाँव के मित्र लिउ के पास पहुँचकर रात बिताने के लिये उसने जगह माँगी। बातों के दौरान मे लिउ को पता लगा कि लिच्या शादी करने की फिराक मे है। लिउ ने सिर हिलाते हुये कहा—

"यह सम्भव नही है। शिह निआग एक प्रसिद्ध गायिका है। इतनी रूप-राशि को तीन सौ चाँदी के सिक्को मे देने के लिये कौन तैयार हो जायेगा? बुढिया मालकिन ने तुम्हे भगाने के लिये यह चाल चली है, और शिह-निआग ने यह जानकर कि तुम्हारे पास पैसा नहीं है, तुम्हे पैसा लाने के लिये कहा है क्योकि वह तुम्हे चले जाने के लिये साफ-साफ नहीं कह सकती। यदि तुम उसे रुपया लाकर दोगे तो वह तुम पर हँसेगी। यह एक मामूली-सी

चालाकी है तुम ज्यादा तकलीफ न करो, उस लड़की से अपना सम्बन्ध तोड दो।"

यह सुन कर लिच्या बहुत देर तक चुपचाप खड़ा रहा। लिउ ने कहना जारी रखा—

"इस बारे मे कोई गलती न करो। यदि तुम यह बता सको कि तुम सचमुच घर लौट रहे हो तो बहुत से लोग तुम्हारी सहायता करेंगे। लेकिन जहाँ तक रुपये का सवाल है, तुम्हे तीन सौ चाँदी के सिक्के इकट्ठे करने के लिये दस दिन नहीं दस महीने लग जायेंगे।"

"बडे भाई, तुम्हारा कहना बिलकुल ठीक है," लिउ ने उत्तर दिया।

फिर भी लि तीन दिन तक रुपया इकट्ठा करने के लिये निष्फल प्रयत्न करता रहा।

जब वह शिह निश्राग के पास लौट कर नहीं गया तो शिह निश्राग बडी चिन्तित हुयी। उसने लि को ढूँढने के लिये एक लडका भेजा। संयोग से उसे लि मिल गया। लड़के ने कहा—

"चलिये, हमारी हमशीरा आपको याद कर रही है।"

कुछ शरमिन्दा होते लि ने जवाब दिया—"आज मुझे समय नहीं है, मैं कल आऊँगा।" लेकिन लड़के को आदेश था वह उसे साथ लेकर आये। उसने कहा—

"हमशीरा चाहती हैं कि आप मेरे साथ चलें।"

लि मना नहीं कर सका। वह लड़के के साथ चल दिया।

शिह निश्राग के पास पहुँच कर लि चुपचाप खडा हो गया—सिसकियाँ भरता हुआ, बिना कुछ बोले।

"तुमने क्या सोचा?"

लि की आँखो मे आँसू भर आये। शिह निश्राग ने फिर पूछा—

"क्या लोग इतने कठोर है कि तुम्हे तीन सौ सिक्के भी नहीं दे सकते?"

सिसकियाँ भरते हुये उसने नीचे लिखी कविता पढ़ी—

"पहाडों मे चीता पकड लेना आसान है।
लेकिन दुनिया केवल शब्दो से हिला देना आसान नहीं।"

"मैं छह दिन से चक्कर काट रहा हूँ, फिर भी मेरे हाथ खाली है। इतने दिन लज्जा ने मुझे अपनी प्रेमिका से दूर रखा है, अब मैं उसका आदेश पा कर लौटा हूँ। मैंने बहुत प्रयत्न किया। लेकिन अफसोस! समय का दोष है।"

"हम लोग मालकिन से कुछ नहीं कहेगे। रात को तुम यहीं रहो। मैं उसके सामने कोई दूसरा प्रस्ताव रखूँगी।"

शिह निश्राग ने उसे भोजन कराया। उसने लि से पूछा—

"यदि तुम मुझे छुड़ाने के लिये तीन सौ सिक्के भी नही ला सकते, तो फिर हम लोग क्या करेंगे?"

लि बिना कोई उत्तर दिये रोने लगा। शिह निश्राग ने अपने बिस्तर के नीचे से १५० सिक्के निकाल कर उसके हाथ मे रख दिये—

"देखो, यह मेरा गुप्त धन है। तुम तीन सौ सिक्के नहीं ला सकते इसलिये मैं तुम्हे आधा रुपया देने को तैयार हूँ। इससे तुम्हे थोडी मदद मिलेगी। लेकिन अब सिर्फ चार दिन बाकी बचे है। याद रखो देर न होने पाये।"

रुपया पाकर लि को बडी प्रसन्नता हुयी। रुपया लेकर वह अपने मित्र लिउ के पास पहुँचा। लिउ ने कहा—

"निश्चय ही यह औरत दिल की नेक है। उसके इस बर्ताव को देखते हुये तुम्हे उसे कष्ट नहीं देना चाहिये। तुम्हारे विवाह मे मैं मध्यस्थ का काम करूँगा।

लि को अपने घर मे छोड कर लिउ उसके लिये अपने दोस्तो से कर्ज माँगने चल दिया। दो दिन के अन्दर उसने १५० सिक्के इकट्ठे कर लिये। लि के हाथ मे यह रुपया पकडाते हुये वह कहने लगा—

"देखो मैं तुम्हारे लिये जामिन बना हूँ, क्योकि शिह निश्राग की सहृदयता ने मुझे बहुत प्रभावित किया है।"

लि ने रुपया ले लिया, मानो कहीं आकाश से वृष्टि हुयी हो, और वह अपनी प्रेमिका के पास दौड गया। नवॉ दिन था। उसने पूछा—"क्या तुम्हे १५० सिक्के मिल गये है?"

लिउ ने जो कुछ उसके लिये किया था, लि ने सब कह दिया। शिह-निश्राग सुन कर बडी प्रसन्न हुयी। अगले दिन वह कहने लगी—

"यह रुपया मालकिन को देने के बाद मैं तुम्हारे साथ चलूँगी। लेकिन मार्ग के लिये हमने कोई तैयारी नहीं की है। मैंने अपने मित्रो से २० सिक्के उधार लिये है। तुम इन्हे अपने पास रखो। जरूरत होने पर रास्ते मे काम आयेंगे।"

लि ने प्रसन्न होकर रुपया अपने पास रख लिया।

इसी समय दरवाजे पर किसी ने दस्तक दी। बुढिया मालकिन ने अन्दर प्रवेश करते हुये कहा—

"आज दसवॉ दिन है।"

"इसको याद दिलाने के लिये मैं तुम्हे धन्यवाद देता हूँ", लि ने कहा। "मै तुम्हारे पास स्वय आनेवाला था।"

और अपनी थैली मे से उसने तीन सौ रुपयों का ढेर मेज पर लगा दिया। बुढिया नही जानती थी कि उसे इतनी जल्दी सफलता मिल जायेगी।

बुढिया ने रङ्ग बदल दिया। वह अपने वादे को भङ्ग करना ही चाहती थी कि शिह नियाग बोल उठी—"मैं तुम्हारे घर इतने दिनो से रह रही हूँ, और हजारो रुपये कमाकर मैंने तुम्हे दिये है। आज मै शादी कर रही हूँ। यदि तुम अपने वचन का पालन नही करतीं तो मै तुम्हारे ही सामने आत्मघात कर लूँगी और फिर याद रखना तुम्हे रुपये और लडकी दोनो से हाथ धोना पडेगा।"

बुढ़िया इसका कोई उत्तर न दे सकी। उसने चुपचाप रुपया लेकर रख लिया। वह कहने लगी—

"यदि तुम जाना चाहती हो तो तुम अभी चली जाओ, लेकिन तुम अपने साथ कोई कपडा या जवाहरात नही ले जा सकती।"

यह कहकर बुढ़ियाने उन दोनो को घर से बाहर निकालकर अन्दर से दरवाजा बन्द कर दिया।

उस दिन बड़ी सर्दी थी। शिह नियाग सोकर उठी थी। उसने कपडे भी अच्छी तरह नही पहने थे। उसने अपनी मालकिन को घुटने टेककर प्रणाम किया। लि ने हाथ जोडकर नमस्कार किया। और वे दोनों उस खूसट मालकिन को छोडकर चल दिये जैसे मछली अपने पाश को छोडकर चल देती है।

लि शिह नियाग के लिये पालकी लेने चला लेकिन शिह नियाग ने रवाना होने से पहले अपने सगे-सम्बन्धियो से मिलने की इच्छा प्रकट की। जब शिह-नियाग लि को साथ लेकर अपने सगे-सम्बन्धियो से मिलने गयी तो उन्होंने उसे बहुत से वस्त्र और कीमती आभूषण भेंट किये।

रवाना होने के पहले शिहनियाग ने लि से पूछा कि हम लोग कहाँ जा रहे है? लि ने उत्तर दिया—

"मेरे पिता जी अभी भी मुझसे नाराज है। इसपर यदि उन्हे मालूम हो जाये कि मैंने तुमसे शादी कर कर ली है और तुम्हे साथ लेकर मैं घर लौट रहा हूँ तो निश्चय ही वे और गुस्से हो जायेंगे। वैसी हालत मे मैं अभी किसी निर्णय पर नहीं पहुँच सका हूँ।"

"तुम्हारे पिताजी तुमसे अपना नाता तो नही तोड सकते। क्या ही अच्छा

हो यदि हम उनके पास जाने से पहले किसी बजरे पर समय व्यतीत करें और इस बीच मे तुम अपने मित्रो को उनके पास भेजकर उन्हे समझा लो। उसके बाद तुम मुझे अपने साथ लेकर शान्ति के साथ घर मे प्रवेश कर सकते हो।"

"तरकीब तो बहुत अच्छी है," लि ने उत्तर दिया।

तत्पश्चात् वे दोनो लिउ के घर पहुँचे। शिह नियाग ने घुटने टेककर उसके प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुये कहा—"ईश्वर ने चाहा तो हम दोनो किसी दिन आपकी कृपा का बदला चुकाने का प्रयत्न करेंगे।"

लिउ ने नम्रता से उत्तर दिया—"मेरे साधारण से कृत्यो की अपेक्षा तुम्हारी सहृदयता कही बढी-चढी है। तुम स्त्रियो मे वीराणी हो, फिर तुम अपनी जबान पर ऐसे शब्द क्यों लाती हो?"

वे लोग दिन भर खाते-पीते और मौज करते रहे। तत्पश्चात् शुभ दिन देख कर दोनो ने यात्रा के लिये प्रस्थान किया। चलते समय शिह नियाग के सगे-सम्बन्धियो ने उन्हे बहुत-सी भेंटे दी।

कुछ दूर चलने के बाद एक नदी आयी। यहाँ से एक जहाज क्वाचाउ जा रहा था। इस जहाज पर लि ने एक कमरा किराये पर ले लिया। लेकिन जहाज का किराया देकर लि के पास कुछ नहीं बचा। शिह निआग ने उसे जो मार्ग व्यय के लिये बीस सिक्के दिये थे सब खर्च हो गये। लेकिन शिह-निआग ने उसे ढाढस बँधाया और अपने बटुओ मे से ५० सिक्के और उसके साम्ने निकाल कर रखै दिये। लिच्या बहुत लज्जित हुआ, लेकिन साथ ही उसे प्रसन्नता भी हुयी। उसने कहा—"यदि तुम इतनी उदारता न दिखातीं तो मैं इधर-उधर मारा-मारा फिरता और अन्त मे बिना मौत मर जाता। बूढ़ा होकर भी मैं तुम्हारे गुणों को नहीं भूलूँगा।"

कुछ दिनो के बाद जहाज क्वाचाउ पहुँच गया। यहाँ नदी पार करने के लिये उन्होने एक छोटा-सा बजरा किराये पर लिया।

रात्रि का सुहावना समय था। चन्द्रमा अपनी शुभ्र-किरणें चारों ओर फैला रहा था। लि ने शिह निआग को सम्बोधन करके कहा—

"प्रिये! जब से हमने पीकिंग छोडा है हम लोग खुलकर बातचीत भी नही कर सके। अब इस बजरे पर हम दोनो के सिवाय और कोई नही है। हम उत्तर की सर्दी को छोडकर दक्षिण की ओर बढ रहे है। इससे बढ़कर आमोद-प्रमोद करने का और कोन-सा समय हो सकता है। जिससे हम अपने भूतकाल के दुखो को भूल जाये। तुम्ही बताओ यह सब किसकी कृपा का फल है?"

"मैं भी बहुत दिनों से आनन्द से वंचित हूँ और जो तुम सोचते हो वही मैं भी सोच रही हूँ। इससे सिद्ध है कि हम दोनों की आत्मा एक है।"

उसके बाद दोनो बहुत देर तक मधुपान करते रहे। लिच्या ने कहना शुरू किया—

"ऐ मेरी जीवन दात्री! तुम्हारी मनमोहक ध्वनि छह नाटकगृहो के दर्शको को पीड़ा पहुँचाया करती थी। जितनी बार भी मैंने तुम्हारी कल-कण्ठध्वनि का श्रवण किया, मेरी आत्मा मुझे छोडकर किसी अदृश्य लोक मे चली जाती थी। तुम्हारी उस कल कण्ठध्वनि का पान किये बहुत काल बीत गया है। चन्द्रमा की किरणे नदी के अस्थिर जल मे प्रतिबिम्बित हो रही हैं। रात्रि गम्भीर और निर्जन है। प्रिये, क्या कोई गीत न सुनाओगी?"

पहले तो शिह निआग ने गाने से इन्कार कर दिया। लेकिन जब उसने चन्द्रमा की ओर दृष्टिपात किया तो एक गान सहज ही उसके कठ से निकल पडा।

पास ही के बजरे मे सुन नाम का एक तरुण यात्रा कर रहा था। वह हुई चाओ का सबसे बड़ा मालदार व्यक्ति था और उसके बाप-दादा नमक के एकमात्र व्यापारी थे। रात बिताने के लिये उसने क्वाचाउ मे लगर डाल रखा था। अपने बजरे मे अकेला बैठा हुआ वह मधुपान कर रहा था।

किसी के कल कठ से निकले सगीत की आवाज सुनकर वह मुग्ध हो गया और उसने अपने मल्लाह को गायिका का पता लगाने भेजा। लेकिन सिर्फ इतना ही मालूम हो सका लिच्या नामक किसी व्यक्ति ने बजरा किराये पर ले रखा है। सुन सोचने लगा—

"इतनी सुरीली आवाज किसी कुलीन औरत की नहीं हो सकती। मैं उससे कैसे मिलूँ?"

सुन रात भर नहीं सो सका। सुबह होने पर उसने देखा कि जोर की आँधी चल रही है, आकाश मे मेघ घिर आने से अँधेरा हो गया है और बर्फ गिरनी शुरू हो गयी है। ऐसी हालत मे यात्रा करना सभव न था। सुन ने अपने मल्लाह से कहा कि वह बजरे को लिच्या के बजरे के पास लगा दे।

सुन ने हिमपात देखने के बहाने अपने कमरे की खिडकी खोलकर बाहर झाँका। उसी समय वेशभूषा से सज्जित हुई शिह निआग अपनी पतली-पतली उँगलियों से परदा हटाकर अपने प्याले मे बची हुई चाय की पत्तियो को बाहर फेंक रही थी। शिह निआग की अभूतपूर्व मधुरिमा ने सुन के ऊपर जादू का-सा असर किया और क्षण भर के लिये वह अपने आप को भूल गया। बहुत देर तक वह उस

ओर एकटक देखता रहा और अपने आप मे खो गया। जब उसे होश आया, वह खिडकी पर झुककर नीचे लिखी कविता जोर से गाने लगा—

"बर्फ पहाड़ को आच्छादित कर लेता है जहाँ कि
ऋषि निवास करते है,
चन्द्रमा के प्रकाश मे वृक्षों की छाया मे
मधुरिमा अग्रसर हो रही है।"

लिच्या कविता को सुनकर अपने कमरे से बाहर आ गया। उसे यह जानने की उत्सुकता हुई कि कौन गा रहा है। लिच्या सुन के फैलाये हुये जाल मे फँस गया। लिच्या को देखते ही सुन ने उसका अभिवादन किया। फिर दोनो ने एक दूसरे का परिचय प्राप्त किया। सुन कहने लगा—

"ईश्वर के भेजे हुये इस हिमपात ने हम लोगो का परिचय कराया है, यह मेरा बड़ा सौभाग्य है। मैं अपने कमरे मे अकेला बैठा हुआ समय यापन कर रहा था। तुम्हे एतराज न हो तो हम लोग नदी के किनारे किसी मडप मे बैठकर आमोद-प्रमोद मे समय बितायें।"

लिच्या ने धन्यवादपूर्वक अपनी स्वीकृति प्रदान की।

अगूर की लता के मडप मे बैठकर दोनो मधुपान करते हुये वार्तालाप करने लगे। सुन ने जरा आगे को झुककर धीमी आवाज मे पूछा—

"कल रात को तुम्हारे बजरे पर कोई गा रहा था?"

लिच्या ने सच सच बता दिया कि वह पीकिंग की प्रसिद्ध गायिका तू-शिह निआग थी।

"तुम्हारे पास वह गायिका कैसे आयी?" लिच्या ने आदि से लेकर अन्त तक सारी कहानी सुना दी।

"ऐसी रूपराशि से विवाह करना अत्यन्त सौभाग्य की बात है। लेकिन क्या तुम्हारे पिता इस सम्बन्ध से सतुष्ट होंगे?"

"बात तो ठीक है, मेरे पिताजी बहुत सख्त मिजाज के हैं, उन्हे इस बारे मे अभी तक कुछ भी मालूम नहीं है।"

"यदि उन्होंने तुम्हे घर मे नही आने दिया तो तुम इसे कहॉ रखोगे? इस सम्बन्ध मे तुमने कुछ विचार किया है?"

"हॉ, हम लोगों ने इस सम्बन्ध मे सोचा है। कुछ दिन वह गॉव मे रहेगी। इस बीच मे अपने मित्रो को अपने पिता के पास भेजकर मैं उन्हे समझा लूँगा।"

"लेकिन तुम्हारे पिताजी तुम्हारे पीकिग के व्यवहार से अब भी जरूर

नाराज होंगे। और फिर तुमने रीति-रिवाजो को तोड कर विवाह किया है। ऐसी हालत मे तुम्हारे मित्रो और सगे-सम्बन्धियो की भी वही राय होगी जो तुम्हारे पिताजी की है। इसलिये तुम्हारे पिताजो के पास पहुँचकर वे तुम्हारे पक्ष का समर्थन नही करेंगे। ऐसी हालत मे जहाँ तुम अपनी पत्नी को थोडे दिनो के लिये रखकर जाओगे, सम्भव है उसे हमेशा के लिये ही वहीं रहना पडे।"

लिच्या के पास रुपया भी थोडा ही रह गया था। सुन की यह दलील सुन कर वह उदास हो गया। यह देखकर सुन ने अपना कहना जारी रखा—

"तुम जानते हो आदिकाल से ही स्त्रियो का हृदय समुद्र की लहरो के समान चचल रहा है। और पीकिंग की प्रसिद्ध गायिका के विषय मे यह बात अधिक सत्य होनी चाहिये। तुम शायद जानते हो कि यह गायिका सब स्थानो से परिचित है। सम्भव है दक्षिण के प्रदेश मे उसका कोई पूर्व परिचित दोस्त रहता हो, और यहाँ आने के लिये उसने यह सब स्वाग रचा हो।"

"यह ठीक नही है।"

"यह ठीक न हो तो भी दक्षिण के लोग बडे धूर्त होते है। तुम एक सुन्दर स्त्री को अकेली छोड कर जाना चाहते हो, ऐसी हालत मे क्या तुम समझते हो कि कोई व्यक्ति उसके घर की दीवाल पर चढकर उसके पास पहुँचने का प्रयत्न नही करेगा? आखिर पिता-पुत्र का सम्बन्ध ईश्वर प्रदत्त है, उसे विच्छिन्न नहीं किया जा सकता। यदि तुम एक गायिका के लिये अपने परिवार को तिलाजलि दे दोगे तो फिर तुम ससार मे भ्रमण करते हो फिरोगे। स्त्री ईश्वर नहीं है। इस सम्बन्ध मे तुम्हे गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिये।"

यह सुन कर लिच्या को लगा कि मानो वह किसी जल के तीक्ष्ण प्रवाह मे बह गया है। उसने पूछा—"तो फिर मुझे क्या करना चाहिये?"

"देखो, एक वर्ष से तुम एक वेश्या के घर मे पडे हुये हो। तुमने इस सम्बन्ध मे जरा भी विचार नही किया कि जब तुम्हे सोने और खाने-पीने के लिये कुछ नहीं मिलेगा तो तुम क्या करोगे? तुम्हारे पिता तुमसे इसीलिये रुष्ट है कि तुम वेश्यालयो मे अपना जीवन बरबाद करते रहे और अपने धन को बालू की भाँति लुटाते रहे। वे कहते है कि सारा धन बरबाद करने पर भी बिना सन्तान के रहोगे। खाली हाथ लौटने से उनका क्रोध और बढेगा। मेरे प्रिय भाई! यदि तुम अपने प्रेमपाश के बन्धनो को विच्छिन्न करने के लिये राजी हो तो मै बडी खुशी से तुम्हे एक हजार सिक्के दे सकता हूँ। इस

रुपये को अपने पिताजी के सामने रखकर तुम कह सकते हो कि पीकिंग मे रहते हुए तुमने अपना अध्ययन बराबर जारी रखा है और तुम इधर-उधर कही नही भटके हो। इससे वे तुम्हारा विश्वास कर लेगे और तुम्हारे घर की शान्ति सुरक्षित रह सकेगी। इस प्रकार तुम अपने दुख को सुख मे परिवर्तित कर सकते हो। इस सम्बन्ध मे तुम खूब सोच लो। यह न समझो कि तुम्हारी पत्नी पर मेरी नजर है। मैं तो तुम्हे अपना एक सहृदय मित्र समझ कर सलाह दे रहा हूँ।"

लिच्या स्वभाव से कमजोर प्रकृतिका था। फिर वह अपने पितासे डरता था। सुन के शब्दो ने उसके दिल पर असर किया। वह कहने लगा—

"भाई! तुम्हारी नेक सलाह ने मेरे मूर्खतापूर्ण भ्रमको दूर कर दिया है। लेकिन मेरी प्रेमिका जो सैकड़ो मीलसे मेरे साथ चलकर आई है, उसे मैं रास्ते मे कैसे छोड सकता हूँ? खैर, मै इस सम्बन्ध मे उसके साथ परामर्श करूँगा, और यदि तुम्हारी सलाह उसे ठीक जॅची तो मै शीघ्र ही तुम्हे इसकी सूचना दूँगा।"

"मेरा हृदय पिता और पुत्र का वियोग सहन नहीं कर सका, इसलिए मुझे ये कठोर बाते तुमसे कहनी पड़ीं, इसका मुझे अफसोस है।"

तत्पश्चात् दोनो ने एक साथ बैठकर मधु-पान किया। आँधी और बर्फ का गिरना बन्द हो गया था। सन्ध्या हो चली थी। सुन ने लिच्या को हाथ से पकडकर उसके बजरे तक पहुँचा दिया।

शिह निआग ने अन्दर आने के लिए उसे लालटेन दिखाई। लिच्या के चेहरे पर उदासी छाई हुई थी। शिह निआग ने उसके प्याले मे चाय उँडेली लेकिन लिच्या ने विना कुछ कहे उसे पीने से इन्कार कर दिया। वह बिस्तर पर जाकर पड गया। यह देखकर शिह निआग को बडा दुख हुआ।

लिच्या बिना कुछ बाले सिसकियाँ भरता रहा। शिह निआग ने तीन-चार बार पूछा लेकिन वह बिना कुछ उत्तर दिए सो गया। शिह निआग बहुत देर तक पलग के एक किनारे पर बैठी रही।

आधी रात बीत जाने पर लिच्या उठकर फिर सिसकियाँ भरने लगा। शिह निआग ने कारण पूछा—

लिच्या ने कबल उतारकर फेंक दिया और ऐसा लगा कि वह कुछ कहेगा लेकिन उसके मुँह से एक भी शब्द नही निकला। उसके होंठ पत्तियो की भाँति कॉपने लगे और वह फिर सिसकियाँ भरने लगा। शिह निआग ने एक

हाथ से उसका सिर पकड़ा और उसे सान्त्वना देती हुई धीरे-धीरे बोलने लगी—

"हमारे प्रेमने हम दोनो को करीब दो वर्षो से साथ-साथ रखा है। हमने अनेक कष्टों और दुखदाई क्षणो का सामना किया है, लेकिन अब हम सब तकलीफो को पार कर चुके है। फिर तुम क्यों दुखी मालूम होते हो, जब कि हम नदी पार करके शीघ्र ही आनन्द के दिनो का उपभोग करने वाले है? तुम्हारी उदासी का कोई कारण अवश्य होना चाहिए। पति-पत्नी को जीवित अवस्था मे और मृत्यु के बाद भी एक दूसरे के दुख-सुखमे सम्मिलित रहना चाहिए। यदि कोई ऐसी बात हो गई हो तो हम लोग उस पर विचार कर सकते है। अपने दुखको तुम मुझसे क्यों छिपाते हो?"

यह सुनकर लिच्या ने अपने आँसुओ को रोककर कहना आरम्भ किया—

"ईश्वर ने जो दुख मुझे दिया है उसके भारके नीचे मैं दबा जा रहा हूँ। अपनी उदारता के कारण तुमने कभी मेरी उपेक्षा नही की। तुमने मेरी खातिर हजारो तकलीफे उठाई है। इसमे कुछ मेरी विशेषता नही। लेकिन अभी भी मैं अपने पिताजी के सम्बन्ध मे सोचता हूँ जिनकी आज्ञा का उल्लघन मैने किया है। वे चरित्र के अत्यन्त दृढ है, और मुझे भय है कि मुझे देखते ही उनका क्रोध दुगुना हो जाएगा। ऐसी हालत मे एक साथ तैरते हुए हम दोनो कहाँ ठहर सकेंगे? यदि मेरे पिता मुझसे सम्बन्ध विच्छेद कर देंगे तो फिर हम कैसे सुखी रह सकेंगे? आज मेरे मित्र सुन ने मुझे मधुपान के लिए निमन्त्रित किया था। उसने जो मेरे भविष्य का चित्र खींचा है उससे मेरा हृदय विदीर्ण हो गया है।"

"तो आप क्या करना चाहते है", शिह निआगने बड़े आश्चर्य से पूछा।

"मेरी समझ मे नही आ रहा था कि क्या किया जाये। ऐसे समय मेरे मित्र सुन ने एक युक्ति बतायी है। लेकिन मुझे डर है कि शायद तुम उसे स्वीकार न करो।"

"यह तुम्हारा मित्र सुन कौन है? यदि यह युक्ति अच्छी है तो मैं उसे क्यो न स्वीकार करूँगी?"

"सुन एक मालदार घराने मे पैदा हुआ है। उसने जीवन मे बहुत उतार-चढाव देखे है। पिछली रात को तुम्हारा गाना सुनकर वह मुग्ध हो गया। मैंने उसे अपनी सब कहानी सुनायी और यह भी बताया कि हम लोगों के घर वापिस जाने मे क्या कठिनाइयाँ है। यह सब सुनकर अपनी उदारता के वश उसने एक हजार सिक्के देना मन्जूर किया है बशर्ते कि तुम

उससे शादी करने को तैयार हो जाओ। इस रुपए को मैं अपने पिताजी को दूँगा। तुम्हे भी कोई आश्रय मिल जाएगा। लेकिन ये विचार मेरे हृदय मे समा नहीं रहे है, इसलिए मैं दुखी हूँ।"

लिच्या की आँखों से टपाटप आँसू गिरने लगे। शिह निआग ठण्डी हँसी हँसकर कहने लगी—

"वह आदमी बड़ा बहादुर, साहसी और गुणी होना चाहिए जिसने मेरे पति के हितसे प्रेरित होकर युक्ति बताई है। इससे केवल न आपको एक हजार सिक्के मिल जायेंगे और न केवल मुझे आश्रय मिल जाएगा बल्कि आपका सामान भी हलका हो जाएगा और उसे उठाने-रखने मे आपको सहूलियत हो जाएगी। लाइए कहाँ है रुपया ?"

आँसुओं को रोकते हुए लिच्या ने उत्तर दिया—

"मुझे तुम्हारी स्वीकृति नहीं मिली थी इसलिए मैंने रुपया अभी स्वीकार नही किया।"

"कल सुबह सबसे पहले अपने मित्र के पास पहुँचकर तुम रुपया माँगो। एक हजार काफी होता है और उसके कमरे मे प्रवेश करने के पूर्व ही यह रुपया तुम्हे मिल जाना चाहिए। क्योकि मै कोई मालमिलकियत तो हूँ नहीं जिसे उधार खरीदा जा सके।"

रात्रिका अन्तिम पहर था। शिह निआग वस्त्राभूषणों से सज्जित होने लगी। उसने कहा—"आज मै अपने पुराने सरक्षक को छोड़कर नए संरक्षक के पास जा रही हूँ, इसलिए मुझे अच्छी तरह साज-शृगार करना चाहिए। यह कोई साधारण घटना नही है। इसलिए आज मुझे सुन्दर से सुन्दर वस्त्र, गध और आभूषण धारण करने चाहिए।"

साज-शृगार की तैयारी करते-करते सूर्योदय हो गया।

लिच्या क्षुब्ध था लेकिन वह प्रसन्न मालूम हो रहा था। शिह निआग ने सुन से पैसा वसूल कर लेने पर जोर दिया और लिच्या फौरन ही सुन के पास पहुँच गया। सुन ने कहा—

"रुपया देना मेरे लिए आसान है। लेकिन अपनी स्वीकृति के प्रमाणस्वरूप पहले अपनी पत्नी के गहने मेरे पास रख दो।"

लिच्या ने यह बात शिह निआग से कही। शिह निआगने सोने का ताला लगी हुई अपनी पेटी को सुन के पास भिजवा दिया। सुन ने भी एक हजार सिक्के लिच्या के पास भिजवा दिए।

शिह निआग सुन के पास पहुँचकर अपने लाल रंग के अधखुले होठो के

अन्दर शोभित अपनी शुभ्र दन्तपक्ति को दिखाते हुए कहने लगी—

"अब तुम मुझे मेरी पेटी वापिस दे दो । इसमें लिच्या का पासपोर्ट है, उसे मुझे लौटाना है ।"

शिह निआगने पेटी खोली । उसमे बहुत-से खाने थे । शिह निआग ने लिच्या को उन्हे एक-एक करके खोलने को कहा ।

पहले खाने मे सैकडो रुपए के हीरे-जवाहरात के बहुत से आभूषण थे । शिह निआगने उन्हे उठाकर नदी मे फेक दिया । लि, सुन और मल्लाह उद्विग्न होकर खडे देखते रहे ।

दूसरे खाने मे अनेक प्रकार की कीमती बाँसुरियाँ थी । तीसरे मे सोने-चाँदी के हजारों रुपए के आभूषण थे । उन सब को उठाकर उसने दरिया मे फेंक दिया । देखनेवाले सत्रस्त होकर देखते रहे ।

आखिर मे उसने मुक्ता, मणि, पन्ना, वैडूर्य आदि से भरा हुआ अपना डिब्बा उठाया । देखनेवाले आश्चर्यचकित होकर चिल्ला उठे । उसको वह नदी मे फेंक देना चाहती थी लेकिन लिच्याने उसका हाथ पकड लिया । सुन ने उसे उत्साहित किया ।

लि को धक्का देकर वह सुन की ओर बढी और उसे दुत्कारकर कहने लगी—

"कल यहाँ पहुँचने से पहले मेरे पति ने और मैंने अनेक कष्ट उठाए है । लेकिन अपनी घृणित और पापपूर्ण लालसा को पूरी करने के लिए तुमने हम लोगो को बरबाद कर दिया है और जिस व्यक्ति को मै प्रेम करती थी उसे घृणा करने के लिए प्रेरित किया है । अपनी मृत्यु के पश्चात् मै प्रतिकार की देवी से मिलूंगी और तुम्हारा यह दुष्टतापूर्ण छल मै कभी न भूल सकूँगी ।"

फिर लि की ओर अभिमुख होकर उसने कहा—

"कितने ही वर्षों मे जब मै अपने जीवन के अव्यवस्थित दिन गुजार रही थी, गुप्तरूप से मैने इतना खजाना इकट्ठा किया था जिससे कभी मेरे सरक्षण के लिए यह काम आ सके । जब मै तुमसे मिली तब हम लोगो ने प्रतिज्ञा की थी कि हमारा मिलन पहाड़ से ऊँचा और समुद्र से भी गहरा होगा । हमने शपथ ली थी कि बाल सफेद होने तक हम लोग एक दूसरे से प्रेम करते रहेगे । पीकिंग छोड़ने से पूर्व मैने यह जाहिर किया था कि मानो यह पेटी मुझे मेरे मित्र द्वारा भेट मे मिली है । इसमें हजारो के बहुमूल्य हीरे-जवाहरात थे । मेरा विचार था कि तुम्हारे माता-पिता से मिलने के पश्चात् यह खजाना मै तुम्हारे पास जमा कर देती । लेकिन यह कौन सोच सकता था कि तुम्हारा प्रेम इतना छिछला होगा और दूसरो की बातो मे

आकर तुम अपनी विश्वासपात्र प्रिय पत्नी को त्याग दोगे ? आज इन सब लोगों के समक्ष, मैंने यह सिद्ध कर दिया है कि तुम्हारे एक हजार सिक्के बहुत तुच्छ थे। ये लोग इस बात के साक्षी हैं कि मेरा पति अपनी पत्नी को त्याग रहा है, और मैं अपने कर्तव्य से च्युत नहीं हूँ।"

इन दुख भरे शब्दों को सुनकर वहाँ खड़े हुए लोग रो पडे और वे लि को कृतघ्न कहकर धिक्कारने लगे तथा लि लज्जित और असहाय बनकर पश्चात्ताप के आँसू बहाने लगा। उसने घुटने टेककर शिह निआग से अपने अपराधों की क्षमा माँगी। लेकिन शिह निआग अपने दोनों हाथों में हीरे-जवाहरात लेकर नदी के पीत जल मे कूद पड़ी।

देखनेवाले जोर से चिल्लाए और उन्होंने उसे बचाने का प्रयत्न किया। लेकिन काले बादलो के नीचे नदी की उठती हुई लहरों मे फेन उठने लगे और फिर उस साहसी औरत का कहीं पता न चला।

लोग गुस्से से दाँत पीसते हुए लि और सुन को मार डालते, लेकिन वे दोनों भय और उद्वेग से अपनी-अपनी नावों मे बैठ कर वहाँ से भाग गये।

लिच्या अपने कमरे मे एक हजार सिक्के देखकर रोता रहा शिह निआग को याद करके। उसके दुख ने उसे पागल बना दिया और वह फिर कभी स्वस्थ नहीं हो सका।

सुन अपने बिस्तर पर लेटा रहता। उसे ऐसा लगता कि शिह निआग उसके सामने दिन-रात खड़ी रहती है। उसके पापो का प्रायश्चित्त उसकी मृत्यु से ही हो सका।

कमल का मठ

जार्ज सुले द'मोरॉं

शाश्वत शुद्धि नामक नगर मे प्रतिष्ठित कमल नाम का एक विशाल मठ था। इसमे सैकड़ों कमरे थे और कई हजार एकड जमीन मे यह बसा हुआ था। अपनी ख्याति के कारण यह मठ वैभवशाली बन गया था। इसमे लगभग १०० बौद्ध भिक्षु रहते थे। जो बडे ऐश-आराम का जीवन व्यतीत करते थे। ये लोग मठ की यात्रा करने वालों का भोजन-पान से सत्कार किया करते थे। मठ मे एक छोटा-सा मन्दिर था, जो अपने आश्चर्यजनक गुणो के कारण विख्यात था। पुत्र की कामना रखनेवाली जो स्त्रियॉ यहॉ रात-भर रहती और दीप-धूप जलाती, उन्हे पुत्र की प्राप्ति होती थी।

मठ के मुख्य भवन के चारों ओर तहखानो के अन्दर छोटे-छोटे कक्ष बने हुए थे। पुत्र की इच्छा रखने वाली स्त्रियो का युवती और निरोगी होना आवश्यक था। वे सात दिन तक उपवास करती और फिर मन्दिर मे जाकर बुद्ध की उपासना मे लीन हो जाती। तत्पश्चात् सगुन विचारने वाली घड़ो से अपना भविष्य पूछतीं। यदि सगुन शुभ हुआ, तो वे एकान्त मे प्रार्थना करने के लिए रात-भर बन्द होकर समय-यापन करतीं। यदि सगुन अशुभ हुआ, तो इसका मतलब था कि उनकी प्रार्थनाएँ सफल नही हुईं। इस हालत मे उन्हे फिर से सात दिन का उपवास करना पड़ता था।

कक्षों की दीवारों मे बाहर आने-जाने का कोई मार्ग न था। जब कोई उपासिका किसी कक्ष मे रहने के लिए आती, तो उसके परिवार के लोग और नौकर-चाकर बडी धूमधाम से उत्सव मनाते। रात होते ही उसे कक्ष मे ताले के अन्दर बन्द कर दिया जाता और भिक्षु उसके परिवार के लोगो से रात

को दरवाजे के पास सोने का आग्रह करते, जिससे कोई व्यक्ति अन्दर प्रवेश न कर सके। कक्ष मे रहकर जब कोई स्त्री अपने घर लौटती, तो वह बलिष्ठ और सुन्दर पुत्र को जन्म देती। नगर का कोई भी ऐसा परिवार न था, जिसकी एक-दो स्त्रियाँ इस मन्दिर मे रात बिताने न आई हो। नगर की ही नहीं, किन्तु अन्य प्रान्तो की स्त्रियाँ भी यहाँ आया करती थीं।

मठ मे प्रतिदिन बड़ी भीड और चहल-पहल रहा करती थी। लोग भाँति-भाँति के फल-फूल आदि चढ़ाते और अपने-आपको कृतकृत्य समझते। जब स्त्रियों से पूछा जाता कि रात्रि के समय बुद्ध भगवान् का आना उनकी समझ मे कैसे आता है, तो वे कहती—बुद्ध ने उन्हे स्वप्न मे दर्शन दिया और कहा कि उनके पुत्रोत्पत्ति होगी। कुछ स्त्रियो का कथन था कि स्वप्न मे रात्रि के समय लोहान (अर्थात् बुद्ध) उन्हे दर्शन देते है। इसके विपरीत कुछ कहतीं कि उन्हे कोई भी स्वप्न नहीं आया। कुछ स्त्रियाँ शर्म से झेप जातीं और उत्तर देने से इन्कार कर देती। कुछ तो दूसरी बार मदिर मे जाकर प्रार्थना करने का नाम भी न लेतीं और शायद कुछ ऐसी भी थी, जो वहाँ फिर से जाने के लिए लालायित रहती थी। आप कहेगे कि हर रात को बुद्ध का मदिर मे आकर दर्शन देना बड़ी अजीब-सी बात लगती है। लेकिन आपको यह जानना चाहिए कि जिले के लोगो का डाक्टरो की अपेक्षा जादूगरो मे अधिक विश्वास था और अच्छे बुरे की पहचान वे नहीं कर सकते थे। इसलिए वे अपनी बहू-बेटियो को मदिर मे भेजा करते थे।

एक बारकी बात है कि जब वाग इस जिले का गवर्नर नियुक्त होकर आया और उसे इस प्रतिष्ठित कमल-मठके बारे मे पता चला, तो उसने सोचा—सतान के लिए तो बुद्ध की उपासना ही काफी है, फिर स्त्रियो को रात के समय मदिर मे रहने के लिए क्यों बाध्य किया जाता है? इसमे अवश्य कोई धूर्त्तता होगी। लेकिन बिना सबूत के वह क्या कर सकता था?

एक बार किसी त्योहार के अवसर पर भक्तो की भीड के साथ गवर्नर वाग भी मदिर मे दर्शन करने पहुँच गया। खास दरवाजे मे से होकर वह एक बडे बबूल और सौ वर्ष पुराने देवदार के वृक्ष के नीचे जा पहुँचा। सामने ही एक मंदिर था, जो सिंदूर से पुता हुआ था। इसमे एक तख्ती लगी थी, जिस पर सुनहरी अक्षरों मे लिखा था—प्रतिष्ठित कमल का मठ : उपासना के लिए। इसके दोनो ओर बहुत से कमरे थे, जहाँ अनेक यात्रियों की भीड जमा थी। एक भिक्षु गवर्नर को देखते ही अपने साथियो को उसके आगमन की सूचना देने के लिए दौड गया। गवर्नर ने उसे रोकने की कोशिश की, लेकिन वह

न रुका। शीघ्र ही गवर्नर के स्वागत मे नगारों और घटियों की ध्वनि सुनाई पडने लगी। भिक्षु दो-दो की पक्तियो मे खडे होकर झुक-झुककर प्रणाम कर रहे थे।

वाग ने मदिर में प्रवेश किया। धूपबत्ती जलाई। तत्पश्चात् प्रधान भिक्षु ने नमस्कार पूर्वक उससे स्वागत-भवन मे पधार कर कुछ देर आराम करने के लिए प्रार्थना की। इस पर वाग ने अपने मनोभाव को छिपाते हुए कहा—"इस पवित्र विश्रामालय की मैंने बहुत प्रशसा सुनी है। राजा से कह-कर मैं इस ज़िले के समस्त भिक्षुओ के नाम एक तख्ती पर खुदवाकर उसे मदिर को भेट कराना चाहता हूँ।"

यह सुनकर प्रधान भिक्षु बडा प्रसन्न हुआ और झुककर उन्हे धन्यवाद देने लगा। गवर्नर ने कहना जारी रखा—"मैंने मंदिर के आश्चर्य के विषय मे बहुत-कुछ सुना है। क्या यह सच है? ये प्रार्थनाएँ कैसे की जाती है?"

प्रधान भिक्षु ने निश्शकित मन से उत्तर देते हुए कहा—"इसके लिए सात दिन का उपवास करना होता है। उपासिकाओ की बलवती भावना और निष्कपट प्रार्थनाओ के कारण उनकी इच्छाएँ, उनके रात्रि-आवास-काल मे स्वप्न मे पूर्ण हो जाती है।"

"उनके चरित्र की रक्षा के लिए कोई उपाय किया गया है?"

"हाँ, कक्षों मे दरवाजों के सिवा बाहर आने-जाने का और कोई रास्ता नही है। और इन दरवाजो के सामने रात को उपासिकाओ के परिवार के लोग सोते है।"

"यदि ऐसी बात है, तो मैं भी अपनी पत्नी को यहाँ भेजना चाहूँगा।"

"यदि आपको पुत्र की कामना है तो आप दोनो को अपने घर मे ही निष्कपट भाव से प्रार्थना करनी चाहिए आपकी कामना पूरी हो जायगी।"—प्रधान भिक्षु ने शीघ्रता से विश्वास-दिलाया, क्योकि उसे भय था कि कहीं स्थानीय अधिकारियों को रहस्य का पता न लग जाय।

"लेकिन दूसरे लोगों की स्त्रियाँ तो यहाँ आती हैं, फिर मेरी स्त्री को ही आने की क्यो जरूरत नहीं?"

"आप कानून के रक्षक हैं, इसलिए देवात्माएँ आपकी प्रार्थनाओं का विशेष ध्यान रखती है।"

"अच्छी बात है। लेकिन मैं इस आश्चर्यकारी मदिर के दर्शन करना चाहता हूँ।"—वाग ने कहा।

मंदिर का भवन स्त्रियों से भरा था। कोई अन्दर जा रही थी, तो कोई

बाहर आ रही थी। क्वानयिन (दया की देवी) मूर्त्ति हारों और झालरों से लदी हुई थी। अपने हाथो मे वह एक शिशु को लिए हुए थी। चार-पाँच शिशु उसके वस्त्रों से चिपटे हुए थे। वेदी और दीवारों पर नाना प्रकार के उपहार सजे हुए थे। सैकड़ों मोम-बत्तियों का प्रकाश हो रहा था। धूपदान का धुँआँ भवन को आच्छादित कर रहा था। बाईं ओर पुत्रदाता अमर चाग की मूर्त्ति थी और दाँई ओर 'चिरायु की तारिका के नायक' की मूर्त्ति थी। वाग ने देवी को प्रणाम किया, और फिर उपासिकाओ के कक्षों का निरीक्षण करने चल दिया।

कक्ष पुष्पों से सुसज्जित थे। फर्शों पर गलीचे और पलॅगों पर सफ़ेद चादरें बिछी हुई थीं। वाग ने कक्षों मे घूम-फिरकर देखा, लेकिन उसे कहीं भी बाहर आने-जाने का मार्ग दिखाई न दिया। चूहे या कीडे मकोडों तक के प्रवेश करने की जगह कहीं न थी। वह जरा उद्विग्न हुआ और फिर अपनी पालकी मे बैठकर वापस चला आया।

वाग को एक युक्ति सूझी। उसने अपने मंत्री को बुलाकर आज्ञा दी—"दो वेश्याओं को भद्र महिलाओं के परिधान मे उपस्थित करो। एक को काली स्याही की, और दूसरी को सिन्दूर की डिबिया देकर मदिर के कक्षों मे रात बिताने से लिए भेजो। यदि रात के समय उनके पास कोई आए, तो उनसे कहो कि वे उसके सिर पर स्याही या सिंदूर का एक निशान बना दें। मैं कल सुबह इस मामले की जाँच करने आऊँगा। और देखो, यह बात बिल्कुल गुप्त रखना।"

मत्री दो वेश्याओं को बुला लाया। एक का नाम मेई-चीह था और दूसरी का वान आरहा। मत्री ने दोनों को गवर्नर का आदेश सुना दिया। उनके कपडे बदल दिए गए और दोनों को दो पालकियो मे बैठाकर वह मठ मे ले गया। दोनों ने धूम-धाम के साथ कक्षो मे प्रवेश किया।

रात्रि के पहले प्रहर मे घटा बजते ही सब कक्षों के ताले बन्द कर दिए गए और उपासिकाओं के परिवारों के लोग अपने-अपने दरवाजों के पास बिस्तरा बिछाकर सो गए। भिक्षु अपने-अपने कमरों मे विश्राम करने चले गए। मेई-चीहने सिंदूर की डिबिया निकालकर अपने तकिए के पास रख ली और बिस्तर पर लेट गई। लेकिन उसे नींद नही आ रही थी। बार-बार परदा उठा-उठाकर वह इधर-उधर झाँकती थी।

रात्रि के दूसरे प्रहर मे फिर घटा बजा। सब जगह शान्ति छा गई। इतने मे तहखाने मे से किसी की आवाज सुनाई पड़ी। मेई-चीहने समझा कि कोई चूहा होगा। वह उठकर बैठ गई। उसने देखा कि फर्श का एक हिस्सा ऊपर

की ओर उठ रहा है। दूसरे ही क्षण उसे एक मुडित सिर दिखाई दिया, फिर सारा शरीर दिखाई पड़ने लगा। अरे, यह तो भिक्षु है! क्या ये दुष्ट इसी तरह भले घर की बहू-बेटियो का सतीत्व नष्ट करते है? मेई विचार मे पड़ गई। उसने-सोने का ढोग करते हुए आगन्तुक को डॉटकर कहा—"तुम कौन हो? क्या मुझे बेइज्जत करने यहाँ आए हो?" यह कहकर मेई ने भिक्षु को एक धक्का मारा। भिक्षु ने उत्तर दिया—देखो, मै लोहान (बुद्ध) हूँ। मेरा सोने का शरीर देखती हो? मैं तुम्हे पुत्र देने आया हूँ। तुम्हारी मनो-कामना पूर्ण होगी।"

अवसर पाकर मेई-चोहने अपनी डिबिया मे से सिन्दूर निकालकर भिक्षु के सिर मे लगा दिया। पर वह गया ही था कि उसके बाद दूसरा भिक्षु और फिर दूसरे के बाद तीसरा उपस्थित हुआ। मेई ने सब के सिर पर सिन्दूर से लाल चिन्ह बना दिया।

सूर्योदय के पूर्व ही गवर्नर वाग २०० आदमियो के साथ बेड़ी और हथ-कड़ी लेकर मठकी ओर चला। मठका द्वार अभी तक बन्द था। उसने थोडे से आदमियो को साथ रखा, बाकी को इधर-उधर छिपा दिया। मत्री ने द्वार खटखटाया और गवर्नर के आगमन की सूचना दी। गवर्नर के आने की खबर सुनते ही भिक्षु जल्दी-जल्दी कपडे पहनकर उसके स्वागत की तैयारी करने लगे। लेकिन वाग स्वागत की परवा न कर सीधे प्रधान भिक्षु के कमरे मे जा पहुँचा। उसने मठके समस्त भिक्षुओ को फौरन ही बुलाने का आदेश दिया और शीघ्र ही भिक्षुओ का हाजिरी-रजिस्टर लाने को कहा। प्रधान भिक्षु भयभीत हो गया उसने घटा बजवाया। घटे की आवाज सुनते ही सब भिक्षु नीद मे से जल्दी-जल्दी उठकर भागे। उनके नाम पुकारने के पश्चात् गवर्नर ने भिक्षुओ को आदेश दिया कि सब अपनी-अपनी टोपियाँ उतार दें।

सूर्य के प्रकाश मे तीन भिक्षुओ के सिर लाल-लाल सिन्दूर के रग से चमक रहे थे और ग्यारह भिक्षुओं के सिर पर काले निशान बने हुए थे! वाग ने कहा—"अब समझ मे आया। इसीलिए ये प्रार्थनाए सफल होती है!"

मत्री ने कहा—"सचमुच ये भिक्षु कितने धार्मिक हैं!"

गवर्नर वाग ने अपराधियों की ओर इशारा करते हुए उन्हे बेडी पहनाने का हुक्म दिया तथा उनसे पूछा—"बोलो, ये निशान कहाँ से आए?"

भिक्षु घुटने टेककर एक-दूसरे की ओर देखते रह गए। वे कोई उत्तर न दे सके। यह देखकर सब आश्चर्यचकित रह गए। इस बीच में मत्री ने मदिर के कक्षों मे सोई हुई वेश्याओ को बुलवाया। दोनों गवर्नर के सामने घुटने

टेक कर खडी हो गई। मन्त्री ने कहा—"रात में तुमने जो कुछ देखा है, सच-सच बयान करो।"

वेश्याओं ने रात की सारी घटना कह सुनाई। उन्होंने उन गोलियों को भी पेश किया, जो उन्हे भिक्षुओं ने खाने के लिए दी थीं। अपनी डिबियो को निकालकर उन्होने गवर्नर के सामने रख दिया।

भिक्षुओ ने जब देखा कि उनकी सारी पोल खुल गई है, तो उनके फेफडो की गति अवरुद्ध होने लगी और हृदय बैठने लगा। वे निराशा-से मन-ही-मन कुढने लगे, जब कि १४ अपराधी भूमि पर सिर टेककर क्षमा की याचना कर रहे थे।

"दुष्टो, पाखण्डियो, तुम दिव्य आदेश देने का साहस करते हो, जिससे तुम अज्ञानी जनों को धोखा दे सको और चरित्रवानों का शीलभग कर सको। उत्तर मे कुछ कहना चाहते हो ?"—वाग ने पूछा।

इस बीच मे प्रधान भिक्षु कुछ सम्हल गया। उसने अपराधियों को घुटने टेककर खडे रहने की आज्ञा दी और विनयपूर्वक गवर्नर से कहने लगा—"महाशय, जिन दुष्ट भिक्षुओ को आपने दण्ड की आज्ञा दी है, वे सचमुच अक्षम्य है। किन्तु बाकी सब भिक्षु तो निर्दोष है। आश्चर्य है कि आप इतनी जल्दी इनके दोषो का पता लगा सके, जब कि मुझे कुछ भी ज्ञान न हो सका। इनके लिए तो मृत्यु- दण्ड ही उपयुक्त है।"

गवर्नर ने मुस्कराते हुए कहा—तो तुम्हारा मतलब है कि केवल दो कक्षो मे ही गुप्त द्वार है, बाकी मे नही ?"

"जी, हाँ।"—प्रधान भिक्षु ने जरा दृढता से उत्तर दिया।

"अभी हम दूसरी स्त्रियो से इस सबध में पूछताछ करते है।"

बाकी कक्षों मे रहनेवाली स्त्रियाँ भी शोर-गुल सुनकर जाग गई थीं। उन्हे बुलवाया गया। सभी एक स्वर से कह उठीं कि रात के समय कोई भी उनके पास नहीं आया। परन्तु गवर्नर जानता था कि लज्जा के कारण वे नहीं बोल रही है। तलाशी लेने पर प्रत्येक की जेब मे गोलियाँ निकलीं। इस सम्बन्ध मे प्रश्न किए जाने पर लज्जा के मारे उनके मुँह से एक भी शब्द न निकला।

इस बीच मे स्त्रियों के पति भी वहाँ आ पहुँचे। उनको भी बडा क्रोध आया। लेकिन गवर्नर बात को आगे नहीं बढ़ाना चाहता था। उसने स्त्रियो को अपने-अपने पतियों के साथ उनके घर भेज दिया। प्रधान भिक्षु अभी भी अपनी बात पर अड़ा हुआ था। उसने कहा कि मठ मे प्रवेश करने के समय

ही स्त्रियों को गोलियाँ दी गई थीं। लेकिन दोनों वेश्याओं ने इस बात का विरोध किया और बताया कि नहीं, उन्हे रात के समय भिक्षुओं ने गोलियाँ दी है। गवर्नर ने कहा—"मामला बिल्कुल स्पष्ट है। इन व्यभिचारियों के हाथों में हथकडी डाल दो।"

भिक्षुओं को यह बात बहुत बुरी लगी। वे विरोध करना चाहते थे, लेकिन वे निहत्थे नहीं थे और उनकी संख्या बहुत कम थी। कतिपय वृद्ध तथा दो बाल-भिक्षुओं को छोड़कर बाकी सबको हथकड़ी पहना दी गई। मठका दरवाजा बन्दकर पहरा बैठा दिया गया। गवर्नर ने अदालत मे बैठकर मुक-दमा किया और भिक्षुओ को मृत्युदण्ड की आज्ञा दी। उन्हे जेल मे बन्द कर दिया गया।

एक दिन जब गवर्नर जेल का मुआयना करने गया हुआ था, तो एकान्त पाकर प्रधान भिक्षु ने गवर्नर से प्रार्थना की—"हम लोग मठ से अपने साथ कुछ भी नहीं ला सके। देखिए, न हमारे पास कपडे है, न कबल, और न खाने के लिए पर्याप्त भोजन ही। यदि आप कृपा करके तीन-चार भिक्षुओ को मठ मे जाने की आज्ञा दें, तो मैं आपको १०० चाँदी के सिक्के भेंट दूँगा।"

गवर्नर को मालूम था कि मठ में बहुत धन भरा पड़ा है। मुस्कराकर कहने लगा—"देखो, मैं १०० सिक्के अपने लिए लूँगा और २०० अपने साथियों के लिए।"

रक़म ज्यादा थी, लेकिन कोई उपाय न था। रात के समय तीन-चार भिक्षु जेल के वार्डरों के साथ मठ में पहुँचे। सबसे पहले उन्होंने चाँदी के ३०० सिक्के वार्डरों को भेंट किए। इस धनराशि को जब वार्डर आपस मे बाँटने में लगे हुए थे, तो भिक्षुओं ने मठ का सारा धन समेट लिया, तथा तलवारें कुल्हाड़ी आदि हथियारों को अपने कबलों में छिपा लिया। हाथ मे शराब की बोतलें भी ले लीं।

जेल मे वापस पहुँचकर भिक्षुओं ने सबको दावत दी। वार्डर शराब पीकर बेहोश हो गए। रात होने पर भिक्षुओं ने अपने हथियार निकाल एक दूसरे की हथकड़ियाँ काट डालीं और जेल तोड़कर भागने लगे। सभवतः वे जेल से भाग जाते, लेकिन गवर्नर से बदला लेने के लिए पहले उन्होने कचहरी पर आक्रमण किया। हथियारबन्द सरकारी पुलिस दरवाजे पर तैनात थी। पुलिस ने भिक्षुओं को पकड़ कर वापस जेल मे डाल दिया।

अब भिक्षुओं को राजद्रोह के आरोप का भी जवाब देना था। अगले

दन सूर्योदय के समय गवर्नर ने फैसला दिया कि बाजार मे लेजाकर ११२ भिक्षुओं का सिर धड़ से अलग कर दिया जाय। राजकर्मचारी अपन मशालें लेकर मठ की ओर बढे और उन्होंने शीघ्र ही मठ को जलाकर खाक कर दिया। नगरवासियों के चेहरे प्रसन्नता से खिल उठे। लेकिन कहते हैं, बहुत-सी स्त्रियाँ इस पर छिप कर अश्रुपात कर रही थीं!

सोम नदी के प्रवाह के विरुद्ध

छिङ् यि

आधी रात का समय था, पहाड की दूसरी ओर से अभी भी बन्दूकों की आवाज सुनाई पड रही थी, जिसकी प्रतिध्वनि स्तब्धता भग कर देती थी।

आसमान काला और बादलो से घिरा हुआ था, लेकिन बरसात अभी शुरू नही हुई थी। बीच-बीच मे बर्फ की मानिन्द ठडी बूँदे मुँह पर लगतीं, जो आनेवाली वर्षा की सूचना दे रही थी।

हू पिन् टेलीफोन के तार जोड कर अभी लौटा था। ज्यों ही उसने दरवाजे मे पैर रक्खा, आँगन के अनाज की डण्ठलो पर बडे जोर-जोर से पानी बरसने लगा। उसने सोचा वर्षा का जोर होने के पहले ही कुछ खा लूँ, रसोई घर मे उसे राजनैतिक शिक्षक का सहायक नौजवान लियू दिखाई पडा। लियू ने उससे कहा कि शिक्षक को कुछ काम है, तुम्हे शीघ्र ही उनसे जाकर मिलना चाहिये।

अपने पिछले कार्य मे सफलता प्राप्त करने के कारण हू खुशी से फूला नहीं समा रहा था। और जब उसने सुना कि उसे कोई नया काम दिया जाने वाला है तो उसे इतने आत्म-गौरव का अनुभव हुआ कि वह खाना-पीना सब भूल गया, यद्यपि सुबह से उसने कुछ खाया नही था।

कम्पनी का खास दफ्तर देवदार के जंगल के पास एक झोंपड़ी में बना हुआ था। ब्लैक आउट के कारण दरवाजे और खिडकियाँ ओवर कोट और कबलों से ढके हुए थे, शिक्षक मोमबत्ती के प्रकाश मे अपने डैस्क पर झुका हुआ था। हू को देख कर उसकी बाछे खिल उठीं और उसने प्रश्नों की झड़ी लगा दी।

"अच्छा! तुम हो? कब वापिस आये?"

"अभी आया।"

"ठीक ! कमाण्डर ने तुम्हे दूसरा काम सौंपा है। दूसरी बैटेलियन के साथ बातचीत करने का मार्ग फिर से खराब हो गया है।"

"हूँ !"

"अभी गिरफ्तार किये हुए युद्धबन्दी के कथनानुसार, शत्रु ने अपनी योजना बदल दी है, मालूम नही वह किधर से धावा करना चाहता है, सेना के खास दफ्तर को तमाम टुकडियो से सम्पर्क रखना चाहिये जिससे हमे खबरें मिलती रहें। सारी पलटन मे दूसरी बेटेलियन की युद्ध-परिधि, युद्ध कौशल का एक महत्वपूर्ण बिन्दु है, उसके साथ हमारा सम्पर्क कभी भी अब नहीं होना चाहिये। तुम्हारा काम है टेलीफोन को चालू रखना यदि कुछ गड़बड हुई तो यह तुम्हारी जिम्मेदारी है ।"

"यह ठीक हो जायेगा। मैं फौरन ही जा रहा हूँ।" हू ने परदा लगाते हुए दरवाजा खोला और बाहर चला गया।

राजनैतिक शिक्षक चुपचाप परदे की ओर ताकता रहा जो अभी तक हिल रहा था। उसे बाहर बन्दूकों की और वर्षा की बूँदो की आवाज सुनाई पड़ रही थी। 'वह कितना बड़ा और अच्छा लडाकू है ! थकना वह कभी जानता ही नहीं, वह कितने हलके दिल से हमेशा अपना काम करता है। पिछले २४ घण्टे से उसने जरा भी आराम नही किया ! आह, ! मालूम नही उसने कुछ खाया भी है या नही !' उसने लियू को हूपिन् को वापिस बुलाने भेजा। लियू तूफान मे खड़ा होकर भोंपे के समान अपने हाथ मुँह से लगा कर चिल्लाने लगा—"हू पिन् हू ...पिन्. "

"हाँ . " गाँव के दूसरे छोर से आवाज आई।

"जल्दी वापिस आओ ! जल्दी ! शिक्षक तुमसे कुछ कहना चाहते है !"

एक मिनिट के अन्दर हू पिन लौट आया। "कहिये साथी शिक्षक ! क्या और कुछ काम है ?"

"तुमने अभी तक कुछ नहीं खाया ?"

"नहीं तो, मैंने खा लिया है।"

"खाना तुम्हे कहाँ से मिला ? तुम कहते थे तुम अभी वापिस आये हो।"

शिक्षक ने हू के बैल्ट को टटोल कर देखा जो उसकी कमर मे जोर से बंधी हुई थी। "तुम्हारे बिस्कुट कहाँ है ? क्या तुम अपने साथ नहीं लाये ?"

"नहीं, मै अपने कमरे मे छोड आया।"

"फिर !" शिक्षक ने काम मे नहीं लिया हुआ अपना बिस्किटों का डिब्बा

उसकी ओर बढाते हुए कहा—"यह तुम्हारे लिये है, इसे ले लो।"

"नहीं, नही!" हू पिन् ने डिब्बे को जबर्दस्ती वापिस करते हुए कहा—"आप ही ने तो कहा था कि हुक्म के सिवाय बिस्कुट के डिब्बे को नहीं खोलना चाहिये?"

"जानते हो मैंने ऐसा क्यो कहा?"

"क्योंकि बिस्कुट तभी खाना चाहिये जब भोजन करने के लिए समय न हो, यदि हम उन्हे हर रोज खाने लगें तो"

"मैं तुम्हारी बात मानता हूँ—" शिक्षक ने मुस्करा कर कहा, "लेकिन तुम्हारे लिये यह बिस्कुट खाने का समय है।"

हू पिन् कुछ नहीं बोला। इतने मे नौजवान लियू रसोई मे से जल्दी से खाने का एक छोटा-सा बर्तन ले आया और बीच-बिचाव करते हुए कहने लगा—"लीजिये हू साहब हमारे रसोइये ने इन कुकुरमुत्तो को शिक्षक के लिये तला था, लेकिन उन्हे आवश्यकता नही, आप ले लीजिये।"

"उन्हे रख दो। उन्हे साथ ले जाने की मुसीबत मे मैं पड़ना नही चाहता, कुकुरमुत्ते मुझे कही भी मिल सकते है।"

"लेकिन जगली कुकुरमुत्ते जहरीले होते हैं।"

"आप समझते है मैं इतना नाजुक हूँ? फिर तो मैं मक्खी के काटने से क्या फ़ायदा?"

"तुम उन्हे अपने साथ ले जा सकते हो," शिक्षक ने कहा। उसके बाद उन्होंने बिस्तर की ओर नजर दौड़ाई और लियू से बरसाती कोट के बारे मे पूछा।

"मैंने खिड़की पर टाग दिया था।"

"खिड़की को और किसी चीज से ढक दो और कोट को दे दो।"

हू पिन् बिस्कुट के डिब्बे को अपनी बेल्ट मे बॉध लिया और लियू ने उसे बरसाती कोट पहना दिया। हू शिक्षक को सलाम कर बाहर वर्षा मे चला गया।

* * *

रात्रि मे घना अन्धकार छाया हुआ था। मशीनगन और तोपे, बादल की गड़गडाहट के समान पहाड पर गरज रही थीं। बर्फ के मानिन्द वर्षा की ठण्डी बूँदे हू के मुँह पर लग रही थीं। तारो के पीछे-पीछे वह पहाड़ के एक संकरे रास्ते पर चलने लगा। जब कभी रास्ता मुश्किल होता तो वह अपने हाथों और हॉथों के बल से देवदार की शाखाओ पर चिमट कर उनका

सहारा लेता जब आसान रास्ता मिल जाता तो वह अपने डिब्बे मे से बिस्कुट निकाल कर खा लेता। इस प्रकार वह तारों की लाइन का निरीक्षण करता रहा।

उसने सोम नदी के किनारे तक सब तारों की परीक्षा कर ली। वर्षा बन्द होने लगी और आसमान कुछ साफ हो गया। यह अप्रैल का आरम्भ था। सोम नदी का बर्फ पिघलना शुरू हो गया था। जैसे ही नदी का तीव्र प्रवाह बर्फ की सिलों को नदी के बीच बहाकर ले जाता, ये सिलें आपस मे टकराकर चूर हो जातीं।

"यहीं कुछ गड़बड़ होनी चाहिये—" हू ने सोचा उसने अपने जूते के फीतों को मजबूती से बाँध लिया, बरसाती कोट और रुई का पायजामा उतार दिया, और तारो के सहारे-सहारे, वह नदी मे उतरा। सर्द पानी के कारण उसकी टाँगें शीघ्र ही सुन्न पड़ गईं। पानी का प्रवाह तार को नदी के नीचे धकेल रहा था। नदी के बीच पहुँचने पर उसे टूटे हुए तार का पता लगा।

"अच्छा! अब मुझे पता लगा! यह यहाँ टूटा हुआ है। मैं इसे जरा-सी देर मे जोड दूँगा।" उसके हाथ मे तार का एक छोर आ गया लेकिन उसे बिना छोडे दूसरे छोर का पता न लगा। वह अपने ऊपर झल्लाया—"मैं कितना मूर्ख हूँ। तार काफी नहीं है।" तब उसे याद आया कि खुले मैदान मे शत्रु का छोड़ा हुआ मीलों लम्बा तार पडा हुआ है। वह पानी मे होकर फिर से किनारे पहुँचा।

उसने अपनी टाँगो को पोछकर पायजामा पहना और खदानों को साफ़ करने वाले मजदूर की नाई रेंगने लगा। अँधेरे मे कुछ भी दिखाई न देता था, इसलिये वह शत्रु की सिगनल सेना द्वारा उपयोग मे लिये जाने वाले मार्ग की ओर चला। अँधेरे मे रेंग कर वह पहाड़ की तलहटी, खंदकों और दलदल वाले किनारों से होकर गुजरा। अनेक बार वह लता को तार समझ कर उठा लेता लेकिन दूसरे ही क्षण उसकी आकस्मिक खुशी निराशा मे बदल जाती।

पानी बरसना बन्द हो गया था। प्रकाश फेंकते हुए शत्रु के जहाज नदी पर उड रहे थे। काला आसमान लाल प्रकाश से चमक उठा था, जिसका प्रतिबिम्ब नदी मे पड़ रहा था। हू पिन् झुझला उठा; आकाश की ओर देख कर वह कोसने लगा—"दुष्टो! तुम्हारा सत्यानाश हो ठीक है, मुझे प्रकाश की आवश्यकता है। देखें, क्या तुम मुझे तार जोड़ने से रोक सकते हो!"

प्रकाश का फायदा उठाकर, हू को ढूँढते-ढूँढते अमरीका के बने हुए तार की एक खाली रील मिल गई। और उसे १०-११ गज़ के फ़ासले पर बमबारी

से नष्ट देवदार के तने पर लटकता हुआ एक लम्बा तार दिखाई दिया। पहले तो वह तार अपनी जगह से हिला नही, लेकिन जोर से खीचने पर वह नीचे गिर पड़ा। वृक्ष के नीचे बैठ कर हू पिन् उसे लपेटने लगा।

शत्रु के जहाज अभी भी आकाश मे चक्कर मार रहे थे, कोई लक्ष्य न पाकर नदी पर बमबारी कर—आकाश मे तैरते हुए पीले रङ्ग के प्रकाश को फैला कर—वे वापिस लौट गये। इस बीच मे धुधले प्रकाश मे हू पिन् ने काफी तार लपेट लिया और फिर अपनी सँडसी से उसे काट दिया इसके बाद वह धान के खेतो की चिकनी दलदल मे होता हुआ वापिस नदी मे आ गया।

जल्दी से लाइन को जोड कर वह नदी के किनारे जाने लगा। पहले की अपेक्षा अब पानी गहरा हो गया था। बर्फ की सिले उसे टक्कर मारकर एक ओर ढकेल देतीं। सयोग से, ज्यो ही उसने तार का जोडना खत्म किया। प्रकाश भी बन्द हो गया। उसने टेलीफोन लगा दिया और घटी बजने की साफ आवाज उसके कानो मे सुनाई देने लगी। मालूम होता था सङ्गीत सुनाई दे रहा हो।

टेलीफोन पर उसने सब बातो की सूचना अपने शिक्षक को दे दी। जवाब मे शिक्षक ने कहा—"बहुत अच्छा किया, लेकिन मुझे डर है कि कही नदी का तेज प्रवाह फिर से इसे न तोड दे। यहाँ आने मे तुम्हे बहुत समय लग जायेगा, इसलिये तुम दूसरी बैटेलियन के कमाण्डर के पास जाकर गर्म कपडो आदि का इन्तजाम कर लो।" यह सुनकर हू ने फिर अपना पायजामा उतारा और वह नदी मे चल दिया।

अब पानी के साथ-साथ ओले भी गिरने लगे थे बन्दूक की आवाज धीमी पड़ गई थी। जब हू पिन् दूसरी बैटेलियन के कमाण्डर के पास पहुँचा तो वह उसके पीले चेहरे और नीले ओठो को देखकर स्तम्भित रह गया। "ओह! तुम तार लगा रहे थे तुम सुन्न पड गये हो फौरन जाकर गर्म कपडे पहनो।"

वे लोग उसके चारो ओर इकट्ठे हो गये और उसका बरसाती कोट उतारने मे उसकी मदद करने लगे। "यह कहाँ फट गया? तुम्हे अपना ध्यान रखना चाहिये।"

"अपने जूते भी निकाल डालो। मेरे पास दूसरे है।"

"पहले कुछ गरम चीज पीओ।"

"नहीं, जरा उसे सो जाने दो।"

"..."

हू ने मुस्कराकर कहा—"मैं बिलकुल अच्छा हूँ। मुझे गर्मी लग रही थी, इसलिये मै नदी मे नहाने चला गया था।"

ये लोग हँसी-मजाक कर रहे थे कि इतने मे टेलीफोन का ऑपरेटर एकदम चिल्ला उठा—"अरे, देखो यह तो फिर टूट गया .. .हलो हलो"

"क्या?" हू पिन् और मेजर ने एक ही साथ प्रश्न किया। "फिर टूट गया?" सारे कमरे मे स्तब्धता छा गई।

"कुछ मिनिट तक तो यह ठीक रहा और अब "

"यह वही डायन नदी है,"—हू पिन् ने कहा और वह जल्दी से अपना बरसाती कोट पहन कर दरवाजे की ओर बढ गया "ठहर जाओ, मैं इसे ठीक करूँगा।"

"लौट आओ, हू पिन्! और कोई चला जायेगा। तुम्हारी तबियत ठीक नहीं है।"

"नहीं, मुझे जाने दो।"

"मैं जाऊँगा।"

ऑपरेटर और सिगनल मैंन दोनो ने जाने की इच्छा व्यक्त की।

लेकिन हू पिन् तो बरसात मे भागा जा रहा था। वह चिल्ला रहा था—"मैं ठण्डा नही हो जाऊँगा . तुम सब नौसिखिया हो,"

जोर से गिरती हुई वर्षा मे उसके शब्द सुनाई नही पड़ रहे थे।

प्रातःकाल का समय।

घुटनों तक कीचड मे धँसे हुए कीचड तथा मुँह पर गिरते हुए ओलो की परवा न करते हुए, हू पिन् ने सोचा—"इस तरह काम नही चलेगा। यह फिर टूट जायेगा। अच्छा हो यदि मैं आरपार दुहरी लाइन लगा दूँ। लेकिन समय कहाँ है?"

अचानक वह दलदल मे फँस गया। बाहर निकलने के लिए उसने बहुत जोर लगाया। "लेकिन यह प्रवाह तो दुहरी लाइन को भी तोड़ देगा। नदी चढ़ रही है।"

वह फिर से गिर पड़ा और उठते-उठते उसने विचार किया—"मुझे तार को खम्भों पर लगाना चाहिये। नदी के किनारे वृक्ष खडे ही हैं वे काफी मजबूत है, लेकिन वे लम्बे नही है। फिर नदी काफी चौडी है!"

वर्षा कम होती जा रही थी। वह अपने मुँह के सामने गिरते हुए ओलो को देख रहा था। और इसके आगे नदी का प्रवाह था जो भेड़-बकरियों के

समान बर्फ की बड़ी-बड़ी सिलों को बहाये लिये जा रहा था। टूटा हुआ तार नदी के पानी मे गिर पड़ा।

राजनैतिक शिक्षक के शब्द उसके कानों मे गूँजने लगे—ऐसी कोई बात नहीं जो पार्टी का सदस्य न कर सके बशर्ते कि वह दृढ़प्रतिज्ञ हो। तार तो उसे जोडना ही है! लेकिन कैसे यदि वह सफल न हुआ तो वह अपने देश-वासियो को कैसे मुँह दिखा सकेगा?"

प्रकाश हो गया था, ओले गिरना बन्द हो गये थे, घने बादलों मे नीली रेखा दिखाई पड़ रही थी। उसका बरसाती कोट सर्दी से चिटक गया था। उतारते समय यह फट गया।

उसके मन मे विचार आया—"इन तारो को ऐंठ कर मैं क्यों न एक मोटा तार बना लूँ? ..लेकिन मुझे और तार की जरूरत पडेगी। वह दौड़कर बमबारी से नष्ट हुए देवदार के पास पहुँचा और तार लपेटने लगा। लेकिन वह तार काफी नही था। उसने इधर-उधर ढूँढना शुरू किया, उसे जल्दी ही वहाँ पड़ा हुआ एक कटीला तार मिल गया।

"पहले मैं इस कटीले तार को नदी के आरपार लगाऊँगा, और इसके चारों ओर टेलीफोन का तार लपेट दूँगा जिससे वह ठहरा रहे। लेकिन इसके लिये मुझे नदी को दो बार पार करना होगा।"

उसकी उँगलियाँ पहले ही सुन्न हो रही थीं, फिर भी उसने कटीले तार की दो रीलें लपेट कर तैयार कर ली। उसके बाद वह नदी के किनारे खडे देव-दार के वृक्ष की ओर चला।

* * *

तीक्ष्ण सर्द हवा से ओले जम गये थे, पूर्वीय आकाश मे लाल ज्योति दिखाई देने लगी जो नदी के बर्फ मे प्रतिबिम्बित हो रही थी।

हू पिन् ने कटीले तार को देवदार के वृक्ष पर कील से ठोंक दिया और टेलीफोन तथा टूटे तार के सिरे को नीचे रख दिया, फिर अपना बरसाती कोट और पायजामा उतार कर, वह एक हाथ मे कटीला तार और दूसरे मे टेलीफोन का तार लेकर नदी मे चल दिया। तीक्ष्ण बर्फ उसकी जाघों को निर्दयता पूर्वक छेदने लगा। और जब वह नदी के बीच पहुँचा तो चक्की जैसी बर्फ की एक बड़ी सिल उससे टकरा गई लेकिन फिर भी वह तारो को हाथ मे पकडे हुए पानी के बाहर आ गया।

दूसरी ओर कोई वृक्ष न था, इसलिए उसने तार को एक बड़ी चट्टान से बाँध दिया जब वह बडे धैर्य से तार को जोड़ चुका और उस जोड़ पर चिप-

चिपी पट्टी लगा दी तो उसने अपनी आँखों पर से बाल हटाने के लिये अपना हाथ उठाया। ये बाल उसे बर्फ से सर्द हुई सीमइयों की मानिन्द जान पडे। उसके बाद वह फिर से बर्फ के समान ठढे पानी मे घुसा, और ज्यों ही वह आगे बढ़ा, वह टेलीफोन के तार को कंटीले तार पर लपेटता गया, जैसे-लतावृक्ष पर लिपटती जाती है।

उसने शत्रु के हवाई जहाजों की आवाज सुनी, और एक जहाज नदी पर आकर चक्कर मारने लगा। वह क्षण भर के लिये व्याकुल हो उठा। लेकिन वह केवल एक ही बात का विचार करता रहा—"किसी तरह पाँच मिनिट और मिल जायें, और बस . जल्दी-जल्दी "

इस बीच मे पलटन के खास दफ्तर को जरूरी हुक्म मिला कि १५ मिनिट के अन्दर तमाम पलटन को तैयार हो जाना चाहिये। इस पलटन को बायें किनारे की अन्य मित्र सेनाओं की युद्ध-परिधि की मदद करना था। अमरीकी सेनाये जिन्हे पहले दिन इस पलटन ने करारी हार दी थी, अब बायें किनारे पर आक्रमण की तैयारी कर रही थीं, कमाण्डर पहली और तीसरी बैटेलियन को पहले ही हुकुम दे चुका था। लेकिन दूसरी बैटेलियन के साथ बातचीत का सम्बन्ध अभी भी नहीं जुड़ा था।

राजनैतिक कमिसर ने अपनी हाथ-घड़ी की ओर बडे चिन्तातुर मन से नज़र डाली। "चलने मे केवल चार मिनिट बाकी है।"

"अच्छा हो यदि हम घोडे पर सन्देश भेज दे।"

"लेकिन इसमे कम-से-कम आध-घंटा लग जायेगा।"

* * *

इस बीच मे शत्रु के जहाजों ने बड़ी अंधाधुंधी से सोम नदी पर बम बरसाना शुरू कर दिया। एक जहाज हू पिन् के ऊपर चक्कर मारने लगा और बन्दूक की आवाज सुनाई दी।

"छिः तुम फिर आ गये!"

वह लगभग किनारे पर पहुँच गया था। एक जहाज नदी पर नीचे उतर आया। हू पिन् डुबकी मार कर पानी मे छिप गया। मशीनगन की गोलियों के कारण छोटे-छोटे खभों के जगल मे पानी ऊपर चढ़ आया। हू पिन् सर्द पानी मे से बाहर निकला और लड़खड़ाता हुआ देवदार के वृक्ष के पास पहुँचा। ज्यो ही उसने टेलीफोन जोड़ना शुरू किया, हवाई जहाज बमबारी के लिये फिर से आ पहुँचा। उसके तमाम शरीर को मानो लकवा मार गया हो, लेकिन अब वह घण्टी के सगीत को सुन सकता था। बड़ी मुश्किल

से उसने उठने को कोशिश की लेकिन वह बेहोश होकर गिर पड़ा।

* * *

जब उसे होश आया वह बतख के परवों से भर कर बनाई हुई रजाई मे लिपटा पडा था। शिक्षक उसके माथे को चूमता हुआ उसकी ओर मुस्करा रहा था।

"कैसी तबियत है, हू पिन् ?"

"बहुत अच्छी। मुझे आराम है।" लेकिन उसके होठ और जीभ ऐंठ गये थे।

शिक्षक ने अपने हाथ उसके कंबल के नीचे डाल कर देखा—"तुम्हारी रगें अभी भी ठढी है ?"

"मैं बिलकुल अच्छा हूँ। मै अब दूसरा काम कर सकता हूँ।"

"लेकिन तुम. "

"यदि हम इसे कायम रख सकें और विजयी हो जायें तो हजारो-लाखो आदमियो को अधिक गरम चीजें मिल सकती है।"

" "

वे केवल एक दूसरो की ओर मुस्करा कर रह गये, क्योकि उन दोनो को मालूम था कि वे क्यो लड़ रहे है।

नये चीन की एक कहानी

किन्हुआ (=सुवर्णपुष्पा) गाँव की रहने वाली एक स्वस्थ और सुन्दर कन्या थी। जापानी सेना ने जब चीन पर आक्रमण किया तो वह पन्द्रह वर्ष की होगी। लिपाओ नाम का सत्रह वर्ष का एक युवक सुवर्णपुष्पा के बडे भाई के साथ गाँव की पाठशाला मे पढता था। दोनों मे मेल-जोल था। अनेक बार लिपाओ सुवर्णपुष्पा के भाई से मिलने उसके घर आता। धीरे-धीरे सुवर्णपुष्पा लिपाओ की ओर आकृष्ट होने लगी और दोनों में प्रीति हो गई।

कुछ ही दिनो मे सुवर्णपुष्पा और लिपाओ के प्रेम ने उग्र रूप धारण कर लिया और दोनों एक दूसरे से मिलने के लिये अत्यन्त आतुर रहने लगे। परन्तु उस समय चीन में लड़कियाँ घर की चहरदिवारी के बाहर पैर नहीं रख सकती थीं और कुँवारी कन्याओं को लड़कों से बातचीत करने की सख्त मनाई थी, इसलिए सुवर्णपुष्पा ने छिप-छिप कर लिपाओ से मिलना शुरू किया। सुवर्णपुष्पा ने बहुत चाहा कि वे दोनों विवाह में बद्ध होकर आराम की जिन्दगी व्यतीत करें, परन्तु समाज मे बिना माता-पिता की अनुमति प्राप्त किये किसी युवती का विवाह होना सर्वथा असभव था।

सन् १६४२ मे सुवर्णपुष्पा के माता-पिता नें चाग नामक किसी व्यक्ति के साथ सुवर्णपुष्पा की सगाई पक्की कर दी। जब सुवर्णपुष्पा को पता चला कि उसका भावी पति उम्र मे १५ वर्ष बड़ा है और साथ ही कुरूप भी है तो उसकी निराशा का पारावार न रहा। वह लिपाओ को याद करके अपना सिर धुनती, परन्तु कोई उपाय उसे दृष्टिगत न होता।

विवाह का दिन नज़दीक आ गया। सुवर्णपुष्पा के घर मंगलाचार किये जाने लगे और बाजे-गाजे बजने लगे। परन्तु सुवर्णपुष्पा का मन और कही

था। उसका मन विद्रोह करने पर तुला था। दुपहर के समय उसके माता-पिता कहीं बाहर गये हुए थे। उसने एक रस्सा लेकर बेंच पर चढ उसके एक छोर को छत की कड़ियो मे बाँध दिया और दूसरे छोर को अपनी गर्दन मे बाँध बेंच को एक तरफ सरका लटक गई।

सुवर्णपुष्पा के माता-पिता अपनी कन्या को इस हालत मे देख अत्यत दुखी हुए। गाँव भर मे बात फैल गई और सुवर्णपुष्पा के घर का आँगन लोगों से भर गया। बड़ी मुश्किल से दो घंटे बाद सुवर्णपुष्पा को होश आया। उसकी माँ रोकर कहने लगी-"बेटी, धीरज रक्खो। जो भाग्य मे बदा है, वह होकर रहेगा।" सुवर्णपुष्पा ने गुस्से मे भर कर अपनी माँ को संबोधन करके कहा—"तुम भी कभी जवान रही होगी। क्या तुम अपने से १५ वर्ष बडे किसी व्यक्ति से विवाह करने के लिए राजी हो जाती? मैं जानती हूँ तुम मुझे मारना चाहती हो। मैं तुम्हारी आज्ञा कभी न मानूँगी।"

सुवर्णपुष्पा के विवाह की तिथि आ पहुँची। दरवाजे पर डोला आ गया। सुवर्णपुष्पा ने प्रथम बार अपने पति के दर्शन किये। टेढे दाँत, चपटी नाक, उम्र मे २० वर्ष बड़ा मालूम होता था। सुवर्णपुष्पा ने घृणा से मुँह फेर लिया। उसे लगा कि वह जान बूझ कर कारागृह मे प्रवेश कर रही है जहाँ से संभवतः वह लौट कर न आयेगी। क्षण भर के लिये विचार उदित होता कि क्यो न भाग कर लिपाओ के पास पहुँच जाये, परन्तु साहस न होता।

सुवर्णपुष्पा ने पतिगृह मे प्रवेश किया। आज सुहाग रात थी। परन्तु सुवर्णपुष्पा एक कोने मे बैठी अश्रुपात कर रही थी। उसके पति ने उसे अपनी ओर खींच लिया। सुवर्णपुष्पा चिल्ला उठी—"तुम बदसूरत हो, तुम मुझसे उम्र मे ज्यादा हो।" फिर वह सिर नीचा कर रुदन करने लगी। चाग इस अपमान को कैसे सह सकता था? उसने उसके एक तमाचा रसीद किया। वह जोर-जोर से चिल्ला कर रोने लगी। चाग ने उसकी घूँसो से खबर ली। उसका सिर फट गया, चेहरा लहुलुहान हो गया। लेकिन चाग मारता ही गया। सुवर्णपुष्पा बेहोश होकर गिर पड़ी। उसके बाद उसे पता न रहा कि क्या हुआ।

सुवर्णपुष्पा का सारा बदन दर्द कर रहा था। उसका यह अपमान? लिपाओ को पाने की आशा भी वह अब छोड चुकी थी। वह यही सोचती मैं यहाँ कैसे रहूँगी? इस कारागृह मे जीवन कैसे बिताऊँगी?

आठ दिन ससुराल मे रहकर सुवर्णपुष्पा अपने घर लौटी। माँ को उसने बहुत-बुरा-भला कहा। परन्तु माँ ने उपदेश दिया—"बेटी, लकड़ी की नाव

बनकर तैयार हो चुकी है, अब वह फिर से लकडी नहीं बन सकती। देखो, अच्छी लडकियों की दुबारा शादी नहीं होती।"

सुवर्णपुष्पा की ससुराल मे सास, ससुर और चाग की एक बहन थी। अपने पति की मार खा खाकर सुवर्णपुष्पा ने अपना जीवन ही बदल दिया। वह अपने सास-ससुर और पति की दिन-रात सेवा मे लगी रहती। सोने के समय अपने पति के कपडे और जूते उतारती, सुबह उन्हे पहनाती, उसकी सिगरेट जलाती, चाय का प्याला दोनों हाथो से थाम कर मुस्कराती हुई उसे पीने के लिये देती। जिस पर भी चाग उसे निर्दयता से मारता।

एक बार की बात है, सुवर्णपुष्पा अपने पति के लिये प्याले मे शोरवा ला रही थी, शोरवा छलक कर जमीन पर गिर पड़ा। बस चाग ने सुवर्णपुष्पा को लात और घूसो से मारना शुरू कर दिया। अपनी असावधानी के लिये सुवर्णपुष्पा ने जमीन पर झुक-झुक कर चाग से क्षमा मागी, और उसके सामने मुस्कराने की कोशिश की। परन्तु चाग उसे मारता ही गया। दो घटे बाद सरक-सरक कर वह अपनी खाट पर आकर पड़ गई।

एक बार सुवर्णपुष्पा की माँ ने कहला कर भेजा—"मै बहुत बीमार हूँ, लड़की को मिलने के लिये भेज दो।" परन्तु सुवर्णपुष्पा के ससुर ने उसे न जाने दिया। उसने कहा, तुम्हे यहीं रह कर काम करना चाहिये, अपनी माँ से तुम्हारा क्या वास्ता? सुवर्णपुष्पा के बहुत मिन्नतें करने पर उसके ससुर ने उसे जाने की आज्ञा दी। लेकिन जब वह दो दिन बाद लौटकर आई तो ससुर ने बहुत गुस्सा किया, और सुबह से शाम तक मुर्गा बना कर खड़ा किये रक्खा।

रात को चाग ने सुवर्णपुष्पा से प्रश्न किया—"क्या तुम अभी भी अपने ही रास्ते चलना चाहती हो?" सुवर्णपुष्पा ने बड़ी नम्रता से उत्तर दिया—"प्राणनाथ, मैं औरत हूँ, मेरा इस दुनिया मे आपके सिवाय और कौन है। मै मरकर भी आप ही की कब्र मे आपके साथ रहना चाहती हूँ। ईश्वर न करे, यदि आपको चोर- डाकू उठाकर ले जाये तो मैं अपना सर्वस्व देकर, अपना शरीर तक बेचकर, आप की रक्षा करूँगी।" परन्तु चाग का पाषाण-हृदय इन बातों से जरा न पिघलता और वह उसके साथ जानवरो से बद-तर बरताव किया करता।

सुवर्णपुष्पा १८ वर्ष की हो गई थी। तीन वर्ष तक उसने घोर यातनाये सही। चाग की ओर से उसका मन सदा खट्टा रहता। परन्तु वह अपनी अन्तर्ज्वाला को दबाये रखती और ऊपर-ऊपर से अपने पति को प्रसन्न रखने

की चेष्टा किया करती। उसके घर के लोग अच्छा भोजन करते जब कि उसे घास-पात खाकर ही अपना गुजारा करना पड़ता। सयोग से, चाग को अपना गाव छोड़कर व्यापार करने के लिये कहीं अन्यत्र जाना पड़ा। परन्तु चलते समय वह सुवर्णपुष्पा को ताकीद करता गया—"देखो माता-पिता की अच्छी तरह सेवा करना, पहले उन्हे खिलाकर बाद मे स्वय भोजन करना। अपना चाल-चलन ठीक रखना। नहीं तो याद रखना जिन्दा न छोडूँगा।" सुवर्ण-पुष्पा का हृदय बैठ गया, परन्तु उसने अपने भावो को छिपाते हुए मुस्करा कर उत्तर दिया—"आप कोई चिन्ता न करें।"

सुवर्णपुष्पा जीवन से निराश हो गई। वह सारे समाज से, अपने पति से और अपने आप से घृणा करने लगी। कई बार वह आत्महत्या का विचार करती लेकिन अपनी माँ का ख्याल कर रुक जाती।

सयोग की बात, अगस्त, १९४५ मे 'आठवीं मार्ग सेना' की एक टुकडी ने गाँव मे प्रवेश किया। सेना के स्वयसेवकों ने सभा मे घोषणा की—"जनता और आठवीं सेना के सिपाही दोनों एक ही कुटुम्ब के हैं, अतएव हम लोग जनता के कष्टों को दूर करने का प्रयत्न करेंगे।" स्वयंसेवकों ने महिलाओ को निमन्त्रित करते हुए घोषित किया कि जिन महिलाओं को कोई कष्ट हो वे गुप्त रूप से अपनी कठिनाइयों को निवेदन कर सकती हैं। परन्तु सुवर्णपुष्पा को इन बातों पर विश्वास न हुआ।

कुछ दिनों बाद डार्क जेड की अध्यक्षता में गाँव में महिला समाज की स्थापना हो गई। एक दिन डार्क जेड सुवर्णपुष्पा से स्वय मिलने के लिये आई। वो कहने लगी—"देखो, बहन, हमे पुरुषों के फदे मे से निकलना चाहिये, परन्तु यह काम अकेले नहीं हो सकता, इसके लिए स्त्रियों के सगठन की आवश्यकता है।" सुवर्णपुष्पा ने फिर भी इस ओर विशेष ध्यान न दिया।

धीरे-धीरे डार्क जेड ने सुवर्णपुष्पा की सब बाते जान लीं। एक दिन महिला समाज की चार स्त्रियाँ स्वर्णपुष्पा के बूढे ससुर के पास आकर कहने लगीं—"महाशय, हमारे जाच-पड़ताल के महकमे को पता लगा है कि आप अपनी पुत्र-बधू के साथ बुरा बरतीव करते हैं।"

पहले तो बूढे को यह बात सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ। फिर वह क्रोध मे आकर उन स्त्रियो से कहने लगा—"तुम लोगों को मेरे निजी काम मे दखल देने का क्या हक है? मैं जो चाहे करूँगा। तुम लोग यहाँ से निकल जाओ, नहीं तो खैर न होगी।"

डार्क जेड ने दृढ़ता से काम लिया। उसने कहा—"देखिए, हम लोग

आपकी भलाई की बात कह रहे है; हम आप के कुटुम्ब मे शान्ति चाहते हैं। यदि आप फिर भी हम लोगों की बात न सुनेंगे तो हमे मजबूरन सख्ती का बरताव करना पडेगा।" परन्तु बूढे ने कोई परवा न की।

थोड़ी ही देर मे वहाँ लाठी और रस्सियों से लैस पद्रह महिलायें उपस्थित हो गयी। एक बार फिर उन्होने बूढे को समझाया। परन्तु जब वह न माना तो डार्क जेड का इशारा पाकर महिलाओ ने उसे रस्सियों से बाँध लिया। सुवर्णपुष्पा खड़ी-खड़ी देख रही थी कि उसका ससुर बँधा हुआ जा रहा है। उसे जरा भय-मालूम हुआ, और वह डार्क जेड से कहने लगी—"आप लोग इन्हे अधिक कष्ट न दे।"

सुवर्णपुष्पा के ससुर को दो दिन तक महिला समाज के कमरे मे बन्द रक्खा गया। तीसरे दिन गॉव की महिलाओं की सभा हुई। सभा मे सामत-वादी समाज की निंदा की गई जिस कारण स्त्रियाँ पुरुषों की गुलाम बनी हैं। कुँवारी कन्याओं और विवाहित स्त्रियों के हित के सम्बन्ध मे तथा पुत्र-बधुओ को कष्ट देनेवाली सासुओं और स्वेच्छापूर्वक शादी करने का विरोध करने वाले माता-पिताओ के विरुद्ध अनेक भाषण हुए।

अन्त मे डार्क जेड बोलने के लिए खड़ी हुई। सुवर्णपुष्पा के कष्टों की चर्चा करते हुए उसने कहा कि हमे अपनी बहन के कष्टों मे शरीक होना चाहिए, तथा उसकी मुक्ति के बिना हमारी मुक्ति नहीं। सबने भाषण का अनुमो-दन किया।

भाषण समाप्त होने के बाद स्त्रियाँ सुवर्णपुष्पा के ससुर के कमरे की ओर चलीं और उसके दुर्व्यवहार के सम्बध मे प्रश्न करने लगीं। ससुर ने सुवर्ण-पुष्पा की ओर इशारा करते हुए कहा कि आप लोग इसी से पूछ ले।

सुवर्णपुष्पा दृढ़तापूर्वक अपने ससुर के सामने खड़ी होकर कहने लगी—"पिछले पॉच वर्षों मे तुम लोगो ने मेरे साथ जानवर से भी बदतर बरताव किया है। क्या तुम मुझे ठीक तरह खाने-पहनने को देते थे? क्या तुम भूल गये कि जब मेरी माँ बीमार थी तो तुमने आँगन मे मुर्गा बनाकर खड़ा किये रक्खा था? याद रक्खो, अब तक मैं अकेली थी, लेकिन अब मेरे साथ मेरी सब बहने और आठवीं सेना है।"

सभा मे चारों ओर शोर मच गया। चारो ओर से आवाज आने लगी—"अपनी पुत्र-बधुओं से दुर्व्यवहार करनेवाले मुर्दाबाद; महिलासमाज जिंदा-बाद।" इतने मे एक लडकी ने बूढे के मुह पर थूक दिया। अन्य स्त्रियों ने भी उसका अनुकरण किया। बूढे का चेहरा तमतमा उठा और उसकी दाढ़ी

लार से भीग गई। उसके पैर कॉप रहें थें।

डार्क जेड ने बूढे से प्रश्न किया—"क्या तुम अब अपने आप को सुधारने के लिए तैयार हो।" बूढे ने धीमी आवाज मे कहा—"हॉ।"

"अब तो तुम अपनी पुत्र-बधू को न सताओगे।

"नहीं।"

सभा मे से आवाज आई—"महिलाओ का संगठन हो। रूढि-परस्तो की पराजय हो।"

सभा बरखास्त हो गई। सुवर्णपुष्पा को चारो ओर से बधाइयाँ दी जानेलगीं।

सुवर्णपुष्पा को पहली बार पता लगा कि स्त्रियों मे कितनी शक्ति है। सुवर्णपुष्पा अब बिलकुल बदल गई थी। वह अब गॉव मे सब जगह आती-जाती, अपना सिर नीचा किये न बैठी रहती और अपने ससुर की प्रत्येक बात को यों ही न स्वीकार कर लेती। कुटुम्ब के दूसरे लोग जो खाते-पहनते, वही खाना-पीना अब उसे भी मिलता। उसे अब आत्म-भिमान का अनुभव होने लगा और वह समझने लगी कि वह भी मनुष्य है, उसे भी जीने का आधकार है।

एक दिन सुवर्णपुष्पा के ससुर ने कहा—"चाग को आ जाने दो, वह तुम्हे ठीक बतायेगा।" सुवर्णपुष्पा ने उत्तर दिया—"मुझे चिता नही, मुझे अब महिला समाज का बल प्राप्त है। उसकी शक्ति से मै बडे से बडे शत्रु का सामना कर सकती हूँ।

एक दिन अपने चचेरे भाई से कहकर सुवर्णपुष्पा ने अपने पति को प्रेम-पूर्ण पत्र लिखवाया और उसे जल्दी वापिस आने को कहा। वो सोचने लगी कि पति के दुर्व्यवहार के प्रति उसे लडाई करना अभी बाकी है।

बीस दिन बाद चोर आ पहुँचा। कहने लगा कि तुम्हारा पत्र मिलते ही मैं वहॉ से रवाना हो गया। सुवर्णपुष्पा भी मुस्कुरा दी। सोचने लगी कि शायद बदल गया हो, परन्तु विश्वास न हुआ।

सुवर्णपुष्पा ने रसोई मे पहुँचकर चाय के लिए चूल्हे पर पानी रख दिया। इतने मे उसका ससुर आकर अपने बेटे से बाते करने लगा। सुवर्णपुष्पा रसोई के बाहर चली आई और चुपके से कान लगाकर बातें सुनने लगी। बाप बेटे से कह रहा था—"अच्छा हुआ तुम चले आये। आठवी सेना के आने के बाद तुम्हारी बीबी खराब हो गई है। वह हमेशा बाहर फिरती रहती है, घर वालों को परवा नहीं करती। देखो, यहॉ एक महिला समाज बना है। वे लोग मुझे रस्सो मे बॉधकर ले गये, सबके सामने मेरा अपमान किया—मेरे मुँह मे थूका! इन सब बातों का बदला तुम्हे लेना होगा।" चाग क्रुद्ध हो उठा—"ऐसी बात है? मैं उसकी हड्डी-पसली तोड़ दूँगा, उसकी

खाल खींच लूँगा। क्या अब इतनी बहादुर हो गई है? तुम मुझ पर छोड़ मैं सब देख लूँगा।"

सुवर्णपुष्पा बाहर खडी हुई मन ही मन प्रसन्न हो सोच रहा था—"अब तुम्हारा भी समय आ गया है। तुम मेरे फंदे मे फँस गये हो। तुमने मुझे जरा भी छुआ तो ऐसी फुकार मारूँगी कि याद रक्खोगे।

अंधेरा हो गया था। सुवर्णपुष्पा ने डार्क जेड को देखकर कहा कि अन्दर-अन्दर बाप-बेटे बातें कर रहे है।

डार्क जेड ने अन्दर पहुँचकर चाग को नमस्कार किया और कहने लगी—"आपको इतनी अच्छी स्त्री मिली है फिर भी आप उसके साथ क्रूरता का बरताव करते है?" चाग ने कहा—"जबसे मैं बाहर गया हूँ, वह खराब हो गई है। मेरी गैरहाजिरी मे उसने मेरे पिता और मेरी बहन का बिलकुल ही ध्यान नही रक्खा। मैं उसे इसका मजा चखाये बिना न छोड़ूँगा।" डाक-जेड ने समझाकर कहा—"देखिये पुराना जमाना बदल गया है, अब नया ज़माना आया है, आपको अपने आचरण को सुधारना चाहिए।"

रातभर दोनों मे खूब झड़प होती रही। चाग ने उसपर दुश्चरित होने का दोषारोपण किया, परन्तु सुवर्णपुष्पा ने इसका डटकर विरोध किया और सबूत माँगा। मेज पर पड़े चाकू को चाग की ओर फेंकते हुए सुवर्णपुष्पा ने कहा—"यदि तुम्हे मेरा विश्वास न हो तो मेरा पेट काट करके देख लो।" सुवर्णपुष्पा चिल्लाकर कहने लगी—"पिछले पाँच वर्षो से तुम मेरे साथ निकृष्टता का बरताव करते आये हो, परतु याद रखना अब तुम मेरा रत्ती भर भी बिगाड़ नहीं कर सकते। यदि तुम मेरा सभाओ मे जाना अपराध समझते हो तो चलो तुम भी मेरे साथ चलो और सबके सामने साफ-साफ बातें करके अपना दिल ठडा कर लो।

चाग जल-भुन गया। वह कहने लगा—"मैं नहीं जानता था कि तुम इतनी बहादुर बन गई हो? याद रक्खो, मैं तुम्हारे हाथ और पाँव काट कर तुम्हे जिन्दा रहने के लिए छोड दूँगा। तब तुम सभाओं मे जा सकने योग्य न रह जाओगी और टूटी हुई टागों से एक स्थान से दूसरे स्थान पर रेंगती फिरा करोगी।"

सुबह उठ कर सुवर्णपुष्पा महिला समाज के दफ्तर मे पहुँची। उसने रात की सब बातें कह सुनाई। वह कहने लगी—"यह मेरे जीवन-मरण का प्रश्न है, आप लोगो को मेरी सहायता करनी होगी।"

पन्द्रह महिलाये चाग के घर पहुँच गई। आने का कारण पूछने पर डार्क-

रात को चाग फिर बहक गया। वह कहने लगा—"मैंने स्वेच्छा पूर्वक सब के सामने सिर नहीं झुकाया है।" सुवर्णपुष्पा ने समझा कर कहा—"देखो, तुम्हे नये समाज को समझना चाहिये और साथी माओ तथा कम्युनिस्ट पार्टी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करनी चाहिये।"

परन्तु चाग ने कहा—"मुझे तो पुराना समाज ही पसंद है, मुझे आठवीं सेना के प्रति कोई आकर्षण नहीं।" सुवर्णपुष्पा ने पूछा—"महिलाओं की सभा मे तो तुमने ये बातें नहीं कहीं। इतनी जल्दी कैसे बदल गये?"

चाग ने कहा—"यदि मैं जवान होता तो नैशनलिस्ट आर्मी मे भरती होकर अफ़सर बनता और किसी दूसरी औरत से शादी करता। मैं तुम्हे तलाक देने को तैयार हूँ।"

अगले दिन सुवर्णपुष्पा ने फिर चाँग से प्रश्न किया—"क्या अभी भी तुम्हारे विचारों मे कोई परिवर्तन नहीं हुआ? क्या तुम अभी भी वर्गहीन समाज में विश्वास करने को तैयार नहीं?"

चाग गुस्से से कूदकर सुवर्णपुष्पा के ऊपर झपटा। सुवर्णपुष्पा महिला के दफ्तर की ओर भागी।

थोड़ी ही देर मे चालीस औरतों ने चाग के मकान को घेर लिया। परन्तु चाग घर छोड़कर भाग गया। औरतों ने तीन मील तक उसका पीछा किया परन्तु अंधेरे मे उसे न पकड़ सकीं।

सुवर्णपुष्पा ने सब महिलाओ के प्रति कृतज्ञता प्रदर्शित की। महिला-समाज के सदस्यों ने उसे विश्वास दिलाया कि जब भी वे चाग को पकड़ पायेगी उससे बदला लेकर रहेगीं।

सुवर्णपुष्पा महिला समाज में जोर-शोर से काम करने लगी।

प्रोफेसर मा छाओ छिन

हृष्ट पुष्ट शरीर, लम्बा कद, लम्बा चेहरा, चमकती हुई आँखे, शुभ्र दाँतो की पक्ति, बोलते समय बीच-बीच मे फड़कते हुए होठ, चढ़ती-उतरती भाव भङ्गिमा, रुक-रुक कर बाहर निकलनेवाला शब्द-विन्यास, हाथो और आँखों के सकेतो द्वारा भावो की अभिव्यक्ति मुख-मुद्राओं का परिवर्त्तन—यह दृश्य आज भी हृदय-पटल पर ज्यो का त्यो अकित है जब शीतकाल की रात्रि मे प्रोफेसर मा इन्टरव्यू देने के लिये मेरे घर उपस्थित हुए।

प्रोफेसर मा पीकिंग विश्व-विद्यालय मे पौर्वात्य भाषा और साहित्य विभाग मे कोरियायी भाषा के प्रोफेसर है। इनका कोरियायी नाम है लि शिन क्वान् जिसका मतलब होता है परोपकारी और महान् पुरुष। प्रोफेसर मा की माता की इच्छा थी कि उनका बेटा बडा होकर महान् कार्य करे, इसलिये उन्होंने यह नाम रक्खा था। आगे चलकर उन्होने इसे बदल कर अपना चीनी नाम रख लिया।

मा का प्रथम परिचय मुझे पीकिंग के बौद्ध होटल मे हुआ जब कि पीकिंग विश्वविद्यालय के उक्त विभाग की ओर से हम लोगो के सम्मान मे दावत दी गई। एक ओर विश्वविद्यालय के वयोवृद्ध प्रसन्नमुख प्रेसीडेण्ट मा यिन छू और दूसरी ओर मा छाओ छिन बैठे हुए थे। प्रोफेसर मा अपनी टूटी-फूटी अँग्रेजी मे बात कर रहे थे। खडे होकर वे भारत, चीन और कोरिया की जनता की पारस्परिक मित्रता और मङ्गल-कामना के लिये अपना प्याला मेरे प्याले से टकराते और फिर हर्ष ध्वनि के साथ पेय द्रव्य का पान कर जाते।

जैसे-जैसे मै मा के सम्पर्क मे आया वे मुझे सरल, सीधे और बडे भावुक जान पडे। हमलोग अक्सर पीकिंग के स्नानागार मे तैरने जाते, तुग आन

श्ट छ्रान बाजार मे कुछ खरीदने जाते, ग्रीष्म महल की सैर करते और कभी पीकिङ्ग विश्वविद्यालय के बर्फ बने हुए जलाशय पर स्केटिङ्ग करते । चीन की महान् दीवाल के दर्शन भी हमने साथ-साथ किये थे । हिन्दुस्तानी भोजन उन्हें बहुत पसन्द था । भोजन करते समय हिन्दुस्तान के विषय मे वे अनेक जिज्ञासा-पूर्ण प्रश्न पूछते और अपने देश के हालत सुनाते कि किस प्रकार सारा देश बमबारी से तबाह हो गया है और फिर भी जनता बड़ी बहादुरी के साथ लड़ रही है । वे अक्सर कहा करते, "मेरी अँग्रेजी बहुत कमजोर है, इसलिये दिल खोलकर मैं आपसे बातचीत नहीं कर सकता । आप जल्दी चीनी सीख लें ।"

मा छाओ छिन कोरिया के एक पहाडी इलाके के रहनेवाले थे । उनके गाँव मे शेर लगता था और सूअर, बतख वगैरह मार कर खा जाता था । उनकी माता बड़ी स्वाभिमानिनी और चरित्रवान् थीं । मा यदि कभी बाहर से पिटकर आते तो उनकी माँ को बहुत बुरा लगता । मा छाओ छिन ने किसी तरह प्राथमिक शिक्षा समाप्त की और मिडिल स्कूल मे नाम लिखा लिया । लेकिन दरिद्रता के कारण उन्हे बहुत कठिन समय का सामना करना पड़ता । इधर-उधर स्टेशनरी आदि बेच कर वे गुजर करते । उस समय जापान ने कोरिया पर कब्जा कर रक्खा था इसलिए स्कूलो मे जापानी भाषा के अध्यापन पर अधिक जोर दिया जाता था । शराब के नशे मे जापानी सैनिक जब गाँव की महिलाओं के साथ छेड़खानी करते तो मा को बहुत क्रोध आता और बड़ी कठिनाई से वे अपने को सभाल पाते । उस समय उनकी उम्र केवल १६ वर्ष की थी !

मा छाओ छिन ने चीन की क्रातिकारी पार्टी का नाम सुन रक्खा था । इसलिये उनकी इच्छा हुई कि चीन जाकर वे पार्टी मे शामिल हो जाये और फिर लौटकर देश की सेवा करे । चीन और कोरिया के बीच थूमन नाम की नदी बहती है । सोचा कि यदि किसी प्रकार इस नदी को पार कर पाऊँ तो फिर चीन ही है । उनकी माँ उन्हे नदी तक बिदा करने आई थी । उस समय दोनों की ममताभरी आँखे गीली हो उठी थीं । कितना हृदयस्पर्शी दृश्य था ! दुर्भाग्य से मा छाओ छिन तब से आज तक अपनी मातृभूमि के दर्शन नहीं कर सके । माँ तो बिचारी अपने बेटे को याद करती-करती परलोक सिधार गई जिसकी सूचना उन्हे कई वर्ष बाद मिल सकी !

अस्तु, पास मे पैसा नहीं था, भूखे-प्यासे बीस मील पैदल चल कर मा-छाओ छिन ने चीन के लुग छेन गाँव मे प्रवेश किया । उस समय उनकी खुशी

का ठिकाना न था। यहाँ रह कर उन्होंने चीनी भाषा का ज्ञान प्राप्त करना चाहा, लेकिन पैसे के अभाव मे उनकी बुरी दशा थी। भीख माँगने और चोरी करने तक की नौबत आ गई। फिर भी जब जीवन-निर्वाह होता दिखाई न दिया तो अपना फाउण्टेन पेन गिरवी रख कर कहीं से शराब लाये और शराब पीकर रेल की पटरी पर लेट कर आत्मघात करने की ठानी। लेकिन मनुष्य को जान बड़ी प्यारी होती है, इसलिये रेल की सीटी सुनते ही वे वहाँ से उठ कर भाग गये। इस समय जापानी कौंसुलेट ने उन्हें गिरफ्तार कर वापिस कोरिया भेज दिया। चीन की पार्टी से सम्बन्ध स्थापित करने की इच्छा मन-की-मन मे रह गई।

प्रथम प्रयास मे ही असफलता पाकर बड़ी निराशा हुई। भविष्य अधकारमय दिखाई देने लगा। जापानी सैनिकों के अत्याचार से देश की कैसे रक्षा की जा सकती है और मातृभूमि की सेवा करने का अब क्या उपाय है, इत्यादि विचार मस्तिष्क मे चक्कर काटने लगे।

सौभाग्य से मा छाओ छिन के मामा सरकारी रेलवे विभाग में काम करते थे। उनकी मदद से उन्होंने फिर से भाग जाने की योजना बनाई और रेल मे बैठकर वे फिर से लुग छेन मे जा दाखिल हुए। अब रात के समय ही वे घर से बाहर निकलते, दिन मे किसी मित्र के घर छिपे पड़े रहते। कुछ समय बाद वे चिलिंग के लिये रवाना हो गये। चार दिन का पैदल रास्ता था। कठिन सघर्ष का सामना था। कुछ नहीं मिलता तो पानी मे शक्कर घोल कर पी जाते। सन् १६३७ मे जब जापानी सेनायें मन्चूरिया पर अधिकार कर रही थी तो सब जगह भगदड़ मची हुई थी। चिलिंग पहुँचकर वे अपने एक मित्र के घर ठहर गये। जापानी सिपाही बड़ी मुस्तैदी के साथ विदेशियो को ढूँढ़-ढूँढ़ कर निकाल रहे थे।

आखिर एक दिन सिपाहियो ने उन्हे भी खोज निकाला। उन्हे शक था कि उनके पास कोई हथियार है। रिवाल्वर दिखाकर उन्हे अपने दोनों हाथ ऊपर उठाने को कहा, और पकड़ कर जेल मे ठूंस दिया। जेल मे बड़ी बुरी हालत हुई। आजादी छिन गई थी। खाना ढंग का नहीं मिलता था, पाखाना साफ़ करना पड़ता था और किसी से बातचीत करने की मनाही थी। उस समय स्वतत्र भाव से उड़ते हुए पक्षियों को देखकर उन्हे बड़ी ईर्ष्या होती। जेल के अधिकारी बार-बार यही प्रश्न करते कि तुम चीन किस लिये आये हो। जवाब मिलता-चीनी सीखने। अधिकारी धमका कर कहते—तुम जल्दी ही अपने देश लौट जाओ, नहीं तो मार दिये जाओगे। अस्तु, मा छाओ छिन को जेल से

इस शर्त्त पर रिहा किया गया कि वे अब कभी चीन की भूमि पर क़दम नहीं रक्खेंगे। वापिस लौटने के लिये उन्हे रेल का किराया भी दे दिया गया, लेकिन वे तो चीन की क्रातिकारी पार्टी से सम्पर्क स्थापित करने का संकल्प कर चुके थे।

चिलिंग से भाग कर मा एक पास के गॉव में जाकर रहने लगे। वे शघाई शहर के स्वप्न देखा करते और सोचते कि वहाँ वे कैसे पहुँच सकेंगे। एक दिन मौका पाकर वे एक ब्रिटिश जहाज पर सवार हो गये और खलासियों के साथ मिल गये। शघाई उनके मस्तिष्क मे चक्कर काटने लगा कि इतने मे किसी ने पास दिखाने को कहा। उनके होश-हवास गुम हो गये। उन्होने अपने को चीनी सिद्ध करने की बेकार कोशिश की, क्योंकि चीनी भाषा वे जानते न थे। आगे चलकर एक जापानी पुलिस अफसर से सामना हो गया। उसने कहा—चीनी पढ़ना है तो जापान जाकर क्यों नही पढ़ते? बाइबिल आदि दिखा कर मा ने अपने आपको ईसाई बताने का प्रयत्न किया, लेकिन पुलिस अफसर को विश्वास न हुआ। एक चाटा रसीद कर गाली देता हुआ वह आगे बढ गया। अपनी अवस्था का विचार कर डर से कॉप उठे। इस समय एक चीनी दम्पति ने कृपा कर उन्हे पहनने के लिये कपडे आदि दिये। खैर, किसी प्रकार ताल्येन (डारेन) पहुँचे। शंघाई पहुँचना अब निश्चित हो गया। ऐसी हालत मे अपने अनिश्चित भविष्य की कल्पना से उनका मन आक्रान्त हो उठा।

शघाई जैसा शानदार शहर मा ने ज़िन्दगी मे कभी नहीं देखा था। इतने बडे शहर मे बिना परिचय के कहाँ जाये, क्या करे? इधर-उधर बहुत दौड़-धूप की, लेकिन जहाँ कही जाते यही उत्तर मिलता कि जगह खाली नही। बहुत प्रयत्न करने के बाद फ़ायर ब्रिगेड मे कुछ काम मिलने की आशा हुई, लेकिन अंग्रेजी न जानने के कारण सफलता न मिली। एक व्यापारी को झाड़ू-बुहारी देने के लिए किसी नौकर की आवश्यकता थी, पर जब उसने हाथ मिलाया तो यह कह कर झिड़क दिया कि ऐसा नाजुक आदमी काम नही कर सकता। कुछ दिन इधर-उधर भटकने के पश्चात् एक वेश्या के घर बर्तन माजने और खाना पकाने की नौकरी मिली, पर खाना कभी जिन्दगी में पकाया नहीं था, इसलिये रोज़ झिड़कियाँ सुननी पड़तीं। उसके बाद कोरियावासी कुछ लड़कियो से परिचय हो गया और वे उनकी चिट्ठी-पत्री आदि लिखने का काम करने लगे। आगे चल कर लड़कियों के रहने की जगह खाली करा कर जापानी सिपाहियो को दे दी गई। इन लड़कियों को किसी वेश्यालय के

मालिक के हाथ बेच दिया गया और उन्हे वेश्यावृत्ति कर के पैसा कमाने के लिये बाध्य होना पडा यदि किसी दिन वे पैसा कमा कर न लातीं तो उनका खाना बन्द कर दिया जाता और ऊपर से मार पडती। कितना घृणित और नारकीय जीवन था वह !

उन दिनो डाक्टर सनयात सेन कैण्टन मे रहते हुए क्रातिकारी कार्य मे लगे थे। मा छाओ छिन उनसे मिलने की इच्छा को न रोक सके और वे कैण्टन चले आये। यहाँ उन्होने किसी तरह माग-माग कर ४०० डालर (लगभग ४०० रुपये) इक्ट्ठे कर लिये और कैण्टन विश्वविद्यालय मे वे भरती हो गये। दुर्भाग्य से फ्रेन्च भाषा पढ़ाने के माध्यम को लेकर विश्वविद्यालय के अधिकारियों मे मतभेद हो गया। विद्यार्थियों ने हड़ताल कर दी और विद्यार्थियो का लीडर होने के कारण उन्हे विश्वविद्यालय से पृथक् कर दिया गया।

वे अब लयाङ् के सैनिक विद्यालय मे प्रविष्ट हो गये। वहाँ रहते हुए उन्होने विद्यार्थियों का संगठन बनाने की कोशिश की। इस कार्य के लिये नानकिंग जाना चाहा, लेकिन अधिकारियो की अनुमति बिना विद्यालय छोडना सभव न था। एक दिन पाखाने मे से निकल कर भागते हुए वे पकड लिये गये और जेल की हवा खानी पडी। इस विद्यालय मे मा ने ढाई वर्ष रह कर राजनीति और सैनिक शिक्षा प्राप्त की।

नानकिंग से लौटकर मा कैण्टन मे एक मिशनरी विद्यालय मे भरती हो गये। यहाँ जापानियो के विरुद्ध प्रदर्शन करने के प्रश्न को लेकर विद्यार्थियो ने हडताल कर दी और पुलिस ने गोली चला दी। गोली का प्रसाद मा को भी मिला। वे नानकिंग लौट गये। फिर चुगकिंग के केन्द्रीय विश्वविद्यालय मे अध्ययन करने लगे और यहाँ से उन्होने एम० ए० की डिग्री प्राप्त की।

मा छाओ छिन को चीन मे आये हुए १७ वर्ष हो गये थे। इस बीच मे राजनीतिक और सामाजिक क्षेत्र मे उन्हे अनेक अनुभव हुए। लेकिन प्रश्न यह था कि अब क्या किया जाये ? इस समय उन्होने अपनी सेवाओ का उल्लेख करते हुए चीनी सरकार के नाम एक खुला पत्र प्रकाशित किया जिसके फलस्वरूप उन्हे नानकिंग विश्वविद्यालय के पौर्वात्य भाषा और साहित्य विभाग मे कोरियायी भाषा पढाने के लिये बुला लिया गया। उन्होने सोचा, कोरिया और चीन के बीच मित्रता-पूर्ण सम्बन्धो मे वृद्धि करने का इससे अच्छा अवसर और कौन-सा हो सकता है ?

इधर चीन का मुक्ति-संग्राम जारी था। चीन का उत्तरी हिस्सा मुक्त हो

गया था। जन मुक्ति सेना ने जब नानकिंग मे प्रवेश किया तो कोमिंगताग सेना के अफ्सर नानकिंग छोडकर पलायन कर गये थे। नानकिग की दशा अत्यन्त शोचनीय थी। नैतिकता का कोई स्तर नहीं था, मुद्रास्फीति के कारण मिनट-मिनट पर चीजों के भाव घटते-बढते थे, वेतन बडी मुश्किल से एक सप्ताह चलता था, वेतन मिलते ही लोग जो कुछ मिले खरीद डालते थे, और जीवन की सुरक्षा नहीं रही थी। जनमुक्ति सेना के सिपाहियो ने नगर में प्रवेश करते ही सबसे पहले नगर की सफाई का इन्तजाम किया। नई सरकार ने लोगों की आर्थिक दशा सुधारने का आश्वासन देकर विश्वास उत्पन्न किया। सदियो से शोषित, जर्जरित और गृहयुद्धों से विशृखलित हुआ चीन राष्ट्र साम्राज्यवाद के पजे से मुक्त होकर अपने पैरो पर खड़ा हो रहा था। इस समय नानकिंग विश्वविद्यालय के पौर्वात्य भाषा और साहित्य विभाग को पीकिग विश्वविद्यालय मे मिला दिया गया और प्रोफेसर मा को पीकिंग चले आना पडा। इससे उन्हे प्रसन्नता ही हुई क्योकि पीकिंग जैसे नगर मे रह कर कोरिया और चीन के सम्बन्धों को अधिक दृढ़ बनाया जा सकता था।

प्रोफेसर मा के हृदय मे भारतवासियों के प्रति विशेष आदर है। उनका कहना है कि प्राचीन काल मे अनेक कष्टों का सामना कर कोरिया और चीन मे भारतीय सस्कृति का प्रचार करनेवाले बौद्ध भिक्षुओं का नाम इतिहास मे चिरस्मरणीय रहेगा। कोरिया मे शान्ति-सधि का समर्थन करने और विश्व मे शान्ति स्थापित करने के लिये जो सतत् प्रयत्न भारत के प्रधानमत्री पडित नेहरू ने किये है उनके लिये नतमस्तक होकर उन्होने श्रद्धाजलि अर्पित की।

दुभाषिये की आँखे अलसा गई थीं, मैं भी थकान महसूस कर रहा था, यद्यपि मा छाओ छिन अभी धाराप्रवाह गति से बोलते ही जा रहे थे। सुबह के पाँच बज चुके थे, ड्यूटी पर हाज़िर होना था। प्रोफेसर मा कह रहे थे—अभी मुझे बहुत कुछ करना है, आप जल्दी चीनी सीख लें।

क्रान्तिकारी बाघा जतीन

कृष्णनगर के टाउनहाल के मैदान मे लोगो की भीड़ जमा है। छोटे बालको से लेकर जिला मैजिस्ट्रेट तक मौजूद है, मैदान के बीच एक मेज पर रुपयों की थैली रखी है, तगडे लट्ठधारियो ने मेज को चारो ओर से घेर रखा है। शर्त्त यह है कि जो कोई लठैतो के बीच मे से हो कर थैली उठा ले आएगा, रुपए उसी के हो जाएँगे। इतने मे एक स्वस्थ और सुन्दर नौजवान मैदान मे आता है और लठैतों का घेरा तोड कर मेज तक पहुँचने की कोशिश करता है। वह लाठी घुमाते हुए घेरे के दो चक्कर काटता है। तैनात लट्ठधारियों की लाठियो की बौछार क्षण भर मे उसका कचूमर निकाल सकती है, लेकिन यह साहसी वीर लाठी घुमाते हुए घेरे के अंदर दाखिल हो जाता है। उसी समय दो लट्ठधारियो के गिरने की आवाज सुनाई पड़ती है और यह नौजवान दाँतो से थैली उठा लेता है। थैली पकडे हुए वह घेरे के अदर चक्कर लगाता रहता है। इतने मे दो लठैत और गिर पड़ते है और नौजवान अपनी लाठी से घेरे को चीरता हुआ रुपयो की थैली लिए बाहर आ खड़ा होता है। आश्चर्य और हर्ष से उपस्थित लोगों की आँखें प्रफुल्लित हो उठती हैं और करतलध्वनि से सारा मैदान गूँज जाता है।

इसी नौजवान साहसी वीर का नाम था जतीन्द्रनाथ मुकर्जी, जो आगे चल कर बाघा जतीन के नाम से प्रसिद्ध हुआ और जिसने अपने देश के लिए लडते-लड़ते प्राण न्योछावर कर दिए।

मुकर्जी बचपन से ही हृष्टपुष्ट, स्वस्थ, प्रभावशाली व्यक्तित्व वाले और साथ ही बडे शौकीन थे। चूड़ीदार झब्बा और खास चमड़े के पंप शू पहन कर जब वह निकलते, तो बडे मनमोहक और आकर्षक मालूम होते। खेलो मे

उन्हे खाश दिलचस्पी थी। अखाड़े मे कुश्ती लड़ते, मालखंभ करते तथा लाठी, तलवार और छुरी चलाने का अभ्यास किया करते थे। वह दोनो हाथों से लाठी चलाते और मटर के दानो को निशाना बनाते।

मुकर्जी मध्यम वर्गीय घराने मे पैदा हुए थे। उनके मामा नदिया के एक सुप्रसिद्ध वकील थे, जिन्होने उनकी शिक्षा का प्रबध किया था। सुन्दरवन मे मुकर्जी की कुछ जमीदारी थी, इससे उनके घर का खर्च चलता था। हर साल अपने हिस्से का धान बेच कर वह अपने परिवार का पोषण करते थे।

मुकर्जी को रोज शाम के समय जगल मे घूमने जाने का शौक था। घटों जगल के किसी सुनसान कोने मे बैठ कर प्रकृति का निरीक्षण किया करते थे। नदी के किनारे बेठ अस्त होते हुए सूर्य की छटा देखते-देखते वह इतने तल्लीन हो जाते कि अपना भान तक खो देते। ऊँची-नीची जमीन, नदी की अविचल धारा, ताड के वृक्षो की पक्ति और ऊपर शुभ्र स्वच्छ आकाश उनके मन को मोह लेते।

एक दिन जगल मे से शेर के दहाडने की आवाज सुनाई दे रही थी। मुकर्जी रोज की भाँति सैर के लिए निकले। लोगों ने उन्हे रोका, लेकिन वह कब मानने वाले थे। क्या शेर की आवाज से डर कर वह घूमने न जाएँ? रोज की तरह वह घूमने गए और नदी तट पर बैठ कर विचारधारा मे बहने लगे। चारो ओर प्रकृति का साम्राज्य बिखरा हुआ था, उसके अद्भुत सौदर्य का आस्वादन करने मे वह लीन हो गए। सूर्य अस्ताचल की गोद मे विश्राम करने जा रहा था। बहुत देर तक वह उसकी शोभा निहारते रहे। आकाश लालिमा से भर गया था। इसी समय किसी आवाज ने उनका ध्यान भग किया। मुँह घुमा कर देखा तो तीन-चार गज की दूरी पर ढाल के ऊपर बैठा हुआ एक शेर, सभवतः अपने शिकार की खुशी मे, जमीन पर पूछ पटक-पटक कर मार रहा था। शेर चोट करना चाहता ही था कि इतने मे मुकर्जी खडे हो गए और उसकी आँख से आँख मिला कर दो-तीन मिनट तक टकटकी लगाए देखते रहे।

पर शेर एसा शुभ अवसर हाथ से क्यो जाने देता? छलाग मार कर वह मुकर्जी की गरदन पर झपटा। इस बीच मुकर्जी सचेत हो गए थे। उन्होंने अपने बाए हाथ की कोहनी आगे बढ़ा कर उसके वार को निष्फल करना चाहा। लेकिन कहाँ जगल का भयानक सिंह और कहाँ एक अदना आदमी! कोहनी के मास की लोथ शेर के पजे मे लिपटी चली गई। फिर भी मुकर्जी ने हिम्मत न हारी। क्षण भर मे शेर जमीन पर लोटता हुआ दिखाई दिया और

मुकर्जी थे उसके ऊपर। ढालू जगह थी, इसलिए दोनों गुत्थमगुत्था होते हुए लुढकने लगे कभी शेर शिकार के ऊपर और कभी शिकार शेर के ऊपर। मुकर्जी जब शेर के नीचे पहुँचते तो उसके पेट का आश्रय ले कर अपने को बचाने की कोशिश करते और जब ऊपर आते तो घूसो और लातो से उसकी पसलियो को नरम करने का प्रयत्न करते। मुकर्जी जानते थे कि उनके सिर पर मौत नाच रही है, इसलिये अपनी सारी शक्ति लगा कर लड रहे थे।

दोनो मे बहुत देर तक गुत्थमगुत्था होता रहा। आखिर शेर ने मुकर्जी को दबा लिया। शेर के नीचे पडे-पडे उन्हे अपनी जेब के चाकू का ध्यान आया। उसे निकाल कर उन्होने अपने दाँतो से खोला। इतने मे मौका पा कर शेर ने उन पर हमला बोल दिया। लेकिन मुकर्जी ने सभल कर चाकू की पैनी धार उसके गले मे ज़ोर से भोक दी। चोट खाए हुए शेर ने उनकी दाहिनी जाँध का मास नोच लिया इस मास की लोथ को वह अपने मुँह मे डालना ही चाहता था कि मुकर्जी ने चाकू उसके पेट गड़ा दिया। शेर बडे जोर से गुर्राया, लेकिन मुकर्जी विचलित नहीं हुए। बार-बार चाकू से प्रहार करते ही गए। शेर की अंतड़ियाँ दिखाई देने लगीं। उसने फिर जोर से गर्जना की और सिर पटक कर बेहोशी की हालत मे वह जमीन पर गिर पड़ा। मुकर्जी को डर था कि कहीं वह फिर उठ कर वार न करे, इसलिए लातों के प्रहारों से वह तब तक उसे रौदते रहे जब तक कि उसका पेट छलनी की तरह न हो गया और उसकी अतड़ियाँ बाहर न लटक आई।

उधर शेर की दहाड़ सुन कर कसबे के लोग बडे चिंतित हुए। ठाकुर दादा अभी तक जगल से नहीं लौटे थे, इसलिए वे और भी चिंतित थे। उन्होने अधिक समय उनके लौटने का इतजार करना उचित न समझा। मशाल और लाठियाँ ले कर वे जगल की ओर चल पडे।

किन्तु शेर मे अभी प्राण शेष थे। प्राण त्यागने से पहले वह एक बार उछला। मुकर्जी ने फिर अपनी लातो से उसकी मरम्मत की और उसे सदा के लिए धराशायी कर दिया। उसके बाद उन्होने उस मृत पशु को अपने कधों पर लाद कर ले जाने की कोशिश की। मुकर्जी की जाँघ मे से निरतर रक्त की धारा बह रही थी। लेकिन इसका उन्हे जरा भी भान न था। शेर को कंधो पर उठा कर चलने मे उन्होने अपने आप को असमर्थ पाया और गश खा कर शेर के ऊपर लुढक गए।

इस समय तक कसबे के लोग वहाँ पहुँच चुके थे। ठाकुर दादा को शेर के ऊपर पड़ा हुआ देख उन्होंने समझा कि लडते-लड़ते दोनों के प्राणों का

अत हो गया है। लेकिन उनके शरीर मे हरकत देख कर उनकी खुशी का ठिकाना न रहा। बहुत ज्यादा खून बह जाने के कारण दादा बेहोशी की हालत मे आ गए थे। मरहमपट्टी के लिए वे उन्हे उठा कर कसबे मे ले आए और फिर वहाँ से स्टीमर पर बैठा कर उन्हे कलकत्ता पहुँचाया गया। बगाल सरकार को जब इस घटना का पता चला, तो सरकार की ओर से उनके इलाज का प्रबंध किया गया और उनकी साहसपूर्ण वीरता के उपलक्ष्य मे उन्हे पॉच सौ रुपए का पुरस्कार दिया गया। इसी समय से बाघ को मारने के कारण वह बाघा जतीन के नाम से प्रसिद्ध हो गए।

स्वास्थ्य लाभ करने मे बाघा जतीन को बहुत समय न लगा। जब वह पूरी तरह स्वस्थ हो गए, तो उन्हे बगाल सरकार के प्रधान सचिव सर हैनरी ह्वीलर के निजी क्लर्क के स्थान पर नियुक्त कर दिया गया और बाद मे वह गवर्नर के कैंप मे क्लर्क हो गए।

उन दिनो बगाल मे अनुशीलन और जुगातर नाम के दो राजनीतिक दल कार्य किया करते थे। दोनो का उद्देश्य यही था कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद का किस तरह भारत से उन्मूलन किया जाए। एक दल का नेतृत्व डाक्टर जदु-गोपाल मुकर्जी, भूपति मजूमदार (आजकल बगाल सरकार के एक मिनिस्टर, अभी हाल मे इन्होने बाघा जतीन नाम की बगाली फिल्म का उद्घाटन किया है) आदि क्रातिकारी करते थे, जब कि रासबिहारी बोस और जतीन्द्रनाथ मुकर्जी दूसरे दल के अग्रणी थे। दोनो दलो के नेताओ ने मिल कर तै किया कि किसी विदेशी मुल्क की सहायता से हथियार बरामद कर अगरेज सरकार को मार भगाना चाहिए। इस महान कार्य का नेतृत्व जतीन्द्रनाथ मुकर्जी को सौपा गया।

सन् १९१३ की घटना है। क्रातिकारी नेताओ ने लक्ष्य पूर्ति के लिए जान की बाजी लगा दी थीं। रुपया जुटाने के लिए हर प्रकार से कोशिश की जा रही थी। बाघा जतीन सरकारी काम-काज करते हुए भी बड़ी मुस्तैदी के साथ पार्टी का काम कर रहे थे। कई स्थानो पर डाके डाले गए और दो महीने के भीतर एक लाख से अधिक रुपया इकट्ठा कर लिया गया। इस काम मे स्वय गवर्नर की मोटर का नबर इस्तेमाल किया गया। और जब पुलिस ने इस नंबर की जाचपड़ताल की, तो पता चला कि गवर्नर की वह गाडी दुरुस्ती के लिए गई हुई है। पुलिस ने बड़ी सरगरमी से काम किया। हावड़ा षड्यन्त्र केस बनाया गया और बाघा जतीन को हिरासत मे ले लिया गया। मामला कोर्ट मे पेश हुआ, लेकिन सबूत न मिलने से जतीन को रिहा कर देना पड़ा। सर-

कारी नौकरी से उन्हे बरखास्त कर दिया गया।

बाघा जतीन ने अपने फरार जीवन का अधिकाश समय कलकत्ते मे गुजारा था। यहाँ वह श्रमजीवी समवाय सघ मे काम करते थे। स्वदेशी वस्तुओ के स्टोर की भी देख-भाल करते थे। यह स्टोर जब कलकत्ते से बालासर मे आ गया, तो जतीन को भी वहीं चला जाना पडा। लेकिन बगाल की खुफिया पुलिस ने जतीन को ढूँढ निकालने मे आकाश-पाताल एक कर रखा था। उनके ऊपर दस हजार रुपए का इनाम था। पुलिस को जब जतीन के बालासर पहुँचने की खबर मिली तो पुलिस के बडे-बडे अफसर उन्हे गिरफ्तार करने वहाँ गए। जतीन भी बडे सतर्क रहा करते थे। पुलिस की खबर पाते ही वहाँ से वे अपने साथियों के साथ और कहीं खिसक गए।

पुलिस ने घोषित कर रखा था कि जरमनी के कुछ डकैत बंगाल के नौजवानों को साथ लेकर डाका डालते फिरते है जो कोई उनके सम्बन्ध मे पता देगा उसे एक हजार रुपया इनाम दिया जाएगा। उधर बाघा जतीन पैदल चलते-चलते बूढी बालाम नदी को पार कर चुके थे, लेकिन कुछ लोगो को उन पर सदेह हो गया और उन्होंने उनका पीछा किया। नदी पार कर के जतीन अपने साथियों के साथ भूखे प्यासे किसी गाँव मे पहुँचे। वहाँ उन्होने एक हलवाई की दुकान पर भरपेट खाना खाया। खाने का पैसा देते समय दुर्भाग्य से उनके कारतूसों के बैग की चाबी वहीं रह गई।

पुलिस का एक दारोगा जतीन और उनके साथियों का बराबर पीछा करता आ रहा था। मौका पा कर उसने एक वृक्ष पर चढ कर एक कपडे का झंडा बना कर पीछे आती हुई पुलिस को इशारा किया और सीटी बजा कर सब को इकट्ठा कर लिया। क्षण भर मे गोलियों की वर्षा होने लगी। पेड़ के ऊपर चढ कर बैठे हुए पुलिस के दारोगा ने जतीन के साथी चित्तप्रिय के सीने मे गोली दाग दी। जतीन और उसके दो साथी उसे संभालने लगे कि इतने मे और गोलियाँ बरसने लगीं।

जतीन का पिस्तौल खाली हो चला था। उन्होंने दाँतों की सहायता से कारतूस का बैग खोलना चाहा। इतने मे उनके हाथ मे गोली लगी। वह दूसरे हाथ से वार करते रहे। किन्तु तब तक पुलिस की तीन गोलियाँ उनके शरीर मे प्रवेश कर चुकी थीं। लेकिन बाघा जतीन का शरीर साधारण न था।

गोली लगने पर भी उनके प्राण अटके रहे। बैलगाड़ी मे लिटा कर उन्हे बालासर के अस्पताल मे लाया गया। लेकिन दूसरे दिन जब उन्हे उतारा गया तो उनके प्राण पखेरू उड चुके थे।

अपनी जान पर खेलने वाले भारत के ऐसे सपूतो को लक्ष्य कर के विश्व-कवि रवींद्रनाथ ठाकुर ने कहा है : जीवने जतो पूजा होलो ना सारा जानि गो जानि ताओ हय निहारा। जे फूल ना फूटि ते झरे छे धरणि ते जे नदी मरुपथे हारालो धारा जानि गो जानि ताओ हयनि हारा। जीवने आज ओ जहार रये छे पीछे जानि गो जानि ताओ हयनि मीछे। अमार अनागत, अपार ओ अनाहत तोमार बीनार ताते वाजि छे तारा।

जीवन मे जितनी पूजा समाप्त नहीं हो पाई, मैं जानता हूँ, जानता हूँ कि वह नष्ट नहीं हो गई। जो फूल खिलने के पहले ही पृथ्वी पर गिर कर मुरझा गया, जिस नदी ने अपनी धारा को मरुस्थल मे खो दिया—मैं जानता हूँ, जानता हूँ कि वह व्यर्थ नही गया। जीवन मे जो आज भी पीछे रह गया है, मैं जानता हूँ वह व्यर्थ नही हुआ है। हमारा भविष्य, हमारा अनागत तुम्हारी वीणा के तार मे बज रहा है।

क्रान्तिकारी भूपेन्द्र चक्रवर्ती

दार्जिलिग मे स्वामी विवेकानन्द ठहरे हुये थे। दर्शनो की भीड लगी थी। भक्तजनो ने घेर रखा था। इस भीड मे ११ वर्ष का एक बालक भी था। स्वामी जी ने उसे कुछ खाने के लिए दिया। बालक ने नम्रतापूर्वक इन्कार कर दिया और खाने की तश्तरी एक तरफ सरका दी। इतने मे वहाँ कुछ भिखारी दिखाई दिये। बालक ने तश्तरी मे से खाना उठाकर एक भिखारी के पल्ले मे डाल दिया। यह देखकर बालक के बाबा बडे नाराज हुए। स्वामी जी ने उन्हे शान्त करते हुए कहा, 'नाराज होने की जरूरत नहीं, बच्चे ने हमारा ही काम किया है।' यह कहकर उन्होने प्रसन्न मुद्रा मे बालक की पीठ थपथपाई, फिर उन्होंने बालक के चेहरे को गौर से देखते हुए भविष्य-वाणी की कि यह आजन्म देश की सेवा करेगा।

इस होनहार बालक का नाम था भूपेन्द्र चक्रवर्ती। इनका जन्म सन् १८६१ मे बगाल के कृष्णनगर जिले मे हुआ था। भूपेन्द्र के दादा स्वतन्त्र विचारो के एक सरकारी डाक्टर थे। २१ वर्ष सरकारी नौकरी करके उन्होने इस्तीफा दे दिया था। इनके पिता सस्कृत के बडे पडित थे और २०-२५ विद्यार्थी हमेशा उनके घर पर पढा करते थे। भूपेन्द्र की माँ बहुत सीधी-सादी और सरल स्वभाव की थीं और वे बहुत कम बोलती थीं।

कृष्णनगर मे सुप्रसिद्ध क्रातिकारी जतीन्द्रनाथ मुकर्जी (बाघा जतीन) के मामा रहते थे। यह स्थान बगाल के क्रातिकारियो का अखाड़ा था जहाँ नौजवानों को लाठी, बल्लम, तलवार और जुजुत्सु वगैरह सिखाये जाते थे। भूपेन्द्र बाघा जतीन के पौरुष से बडे प्रभावित थे और उन्हे अपना राजनीतिक गुरु मानते थे। एक दिन दोनो कलकत्ते से दार्जिलिंग मेल से आ रहे

थे। गाडी ३५ मील फी घटे की रफ्तार से दौड रही थी। सध्या की लालिमा आकाश मे छा गई। जतीन ने अपने साथी को कधो पर बैठाकर कसकर बाल पकड़ लेने को कहा। उस समय पद्मा नदी का पुल नहीं बँधा था। गाडी पोरडाह जकशन से पॉच-छह मील चली होगी कि बाघा जतीन अपने साथी को लिये हुए चलती हुई गाडी मे से कूदकर पद्मा की रेती मे जा टिके। गाडी के यात्री आश्चर्यमुग्ध रह गये।

भूपेन्द्र की प्राथमिक शिक्षा कृष्णनगर मे ही हुई। इसके बाद इनके बाबा अपने परिवार के साथ ढाका जिले मे मुन्शीगज डिवीजन मे रहने चले गये। १६०५ मे भारत के वाइसराय लार्ड कर्जन ने बगाल के नव-जागरण को समाप्त करने के लिये बगाल को दो हिस्सो मे बॉट दिया जिसका देश भर मे विरोध किया गया। उस समय भूपेन्द्र एन्ट्रेन्स की परीक्षा मे बैठ रहे थे। भला वे ऐसे महत्वपूर्ण आन्दोलन से कैसे अलग रह सकते थे? भूपेन्द्र बग-भग के आन्दोलन मे कूद पडे और एक वर्ष के लिये ढाका सेन्ट्रल जेल मे भेज दिये गये। इस समय वे केवल १५ वर्ष के थे। जेल मे उन्हे अलग कोठरी मे रखा जाता, हथकडी लगाई जाती, टाट के कपडे पहनने पड़ते और पीने के लिये चावलो का माड दिया जाता। आखिर भविष्य मे आने वाली यातनाओ को सहने के लिये इन सब बातो का अभ्यास कर लेना जरूरी था।

जेल से छूटकर भूपेन्द्र परीक्षा मे बैठे और प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण हुए। उसके बाद वे कलकत्ते के बङ्गवासी कालेज मे भरती हो गये और एक प्राइ-वेट होस्टल मे रहने लगे। यहॉ बहुत से क्रातिकारियो के सम्पर्क मे आये। ढाका छोड़कर कलकत्ते आकर पढ़ने का उद्देश्य भी यही था। अलीपुर केस पहला बम केश था जिससे बगाल भर मे गड़बडी फैल गई और जगह-जगह गिरफ्तारियॉ होने लगी। उस समय बगाली मे 'जुगान्तर' नाम का अखबार निकलता था और अरविन्द घोष 'बन्देमातरम्' का सम्पादन करते थे। भूपेन्द्र पार्टी के लोगो की चिट्ठी लाने ले जाने के काम मे जुट गये।

कलकत्ते मे वे एक वर्ष रहे। इस समय सन् १६०८ मे अलीपुर बम केस मे अरविन्द को गिरफ्तार कर लिया गया, उनके बहुत से साथी पकड लिये गये। भूपेन्द्र का कालेज-जीवन समाप्त हो गया और वे अपने बाबा के साथ गॉव मे जाकर रहने लगे। यहॉ आकर वे समाज सेवा मे जुट गये। गॉव मे लड़कियो का कोई स्कूल नहीं था। उन्होने बल्लियो के ऊपर टीन बिछा कर एक प्राइमरी स्कूल खोला, पुस्तकालय और डिस्पेसरी भी शुरू की।

भूपेन्द्र की शादी की बात बहुत दिनो से चल रही थी। इनके मामा ने

शादी का बन्दोबस्त करके बाबा को खबर दी। बाबा तो चाहते ही थे कि उनका पोता जल्दी से जल्दी अपनी गृहस्थी को सभाले जिससे उसका मन इधर-उधर न भटके। बस कटक के एक रायबहादुर सब जज की कन्या से चट-पट शादी कर दी गई और घर वाले निश्चिन्त हो गये, लेकिन भूपेन्द्र अपने व्रत से कब डिगने वाले थे? अपने ससुर के विचारो से वे कभी सहमत न हुए और अनेक बार दोनो मे मनमुटाव भी हुआ।

एक बार की बात है, उनकी पार्टी के लोगो को कुछ रुपये की जरूरत पड़ी। भूपेन्द्र ने अपनी पत्नी से गहना माँग कर उसे एक साहूकार के घर गिरवी रख दिया और रुपये लेकर कलकत्ता रवाना हो गये। सात-आठ दिन बाद जब लौटकर आये तो बाबा को पता चला। उन्होने बहुत बुरा-भला कहा। अन्त मे उन्होने अपने पास से रकम देकर गहने को तुरन्त छुडाकर लाने को कहा।

बंगाल मे हावड़ा षडयन्त्र केस की धूम मची हुई थी। क्रातिकारियो ने कई जगह डाके डाल कर पार्टी के लिये रुपया इकट्ठा किया था जिससे हथि-यार खरीदकर ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध सशस्त्र क्राति की जा सके। इस केस मे जतीन्द्र नाथ मुकर्जी को गिरफ्तार कर लिया गया। भूपेन्द्र की कोई चिट्ठी उनके पास निकल आई जिससे उन्हे भी हिरासत मे ले लिया गया, लेकिन कोई सबूत न मिलने पर कुछ दिनों बाद उन्हे छोड़ दिया गया।

प्रथम विश्वयुद्ध आरम्भ हो चुका था। सन् १६१५-१६ मे क्राति की लहर हिन्दुस्तान के एक कोने से दूसरे कोने तक फैल गई। क्रातिकारियों पर सरकार के विरुद्ध षडयन्त्र का मुकदमा चलाने के लिये बनारस, कलकत्ता और लाहौर को चुना गया। भूपेन्द्र के नाम कलकत्ता से वारट था। लेकिन बाबा नहीं चाहते थे कि उनका पोता पकड़ा जाये। भूपेन्द्र बहुत दिनो तक कल-कत्ते मे छिपे रहे और बाबा से रुपया मँगाते रहे। फिर एक स्थान पर अधिक समय तक ठहरना उचित न समझ उन्होने हिन्दुस्तान का भ्रमण शुरू किया। लेकिन बगाली होने की वजह से पुलिस का उन पर शक हो जाता और वे शीघ्र ही उस स्थान को छोडकर आगे बढ़ जाते। कुछ दिनो घूम-फिर कर वे फिर से कलकत्ता आ गये। उन दिनों युद्ध के लिये रगरूटो की भरती हो रही थी। उन्होने सोचा, क्यो न सेना मे भरती हो जाऊँ? लेकिन बगालियों को अंग्रेज-सरकार भरती नही करती थी। सौभाग्य से सुरेन्द्रनाथ बनर्जी आदि के प्रयत्न से बगालियों के लिये भी यह रास्ता खुल गया। भूपेन्द्र की खुशी का ठिकाना न रहा।

कलकत्ता फोर्ट के साउथ बैरक मे रगरूटो की भरती हो रही थी। भूपेन्द्र ने अपना नाम बदलकर रगरूटो मे लिखवा लिया। सेना का मुख्य दफ्तर नौसेरा मे था, इसलिये सेना मे भरती करने के बाद उन्हे तुरन्त ही नौसेरा भेज दिया गया। भूपेन्द्र का कसरती शरीर बड़ा हृष्ट-पुष्ट था, इसलिये फौजी परेड करने और रायफल आदि चलाने मे उन्हे कोई दिक्कत नहीं होती थी। फौज का सूबेदार एक गढवाली था जो उनके काम से बडा प्रसन्न था। सूबेदार ने बम फेंकने और लुइस गन की ट्रेनिंग पाने के लिये भूपेन्द्र को क्वेटा भेज देने की सिफारिस की। वहाँ चार महीने ट्रेनिंग लेने के बाद उन्हे कराची भेज दिया गया और लान्स नायक बना दिया गया। कराची से फौज की एक टुकडी बसरा चली गई और वे हवालदार बन गये। बसरा से बगदाद पहुँचे, और भूपेन्द्र की निशानेबाजी से प्रसन्न होकर यूनिट कमाडर ने वाइसराय कमीशन के लिये उनकी सिफारिश की। अपने परिश्रम और लगन से वे कहाँ पहुँच गये!

भूपेन्द्र चक्रवर्ती अब निश्चिन्त होकर अपना जीवन बिताने लगे। उन्हे चिन्ता न रह गई कि कोई खुफिया पुलिस उनका कुछ बिगाड सकता है। इस समय उन्होंने पूर्वी बगाल मे रहने वाले अपने एक मित्र को साकेतिक भाषा मे एक पत्र लिखा। खुफिया पुलिस इन साकेतिक भाषा को हल कर चुकी थी। पत्र पाने के बाद भूपेन्द्र के मित्र को गिरफ्तार कर लिया गया, और भूपेन्द्र का पता चल गया।

फौरन ही भारत सरकार के गृह-विभाग से सम्पर्क स्थापित करके बगदाद के कमाण्डैन्ट को सूचित किया गया कि भूपेन्द्र को फौरन से पेश्तर कलकत्ता भेज दिया जाये।

एक दिन सुबह के साढे नौ बजे सब लोग कसरत वगैरह करने के बाद छोलदारी मे बैठें गपशप लड़ा रहे थे। इतने मे फौज का कोई अंग्रेज अधिकारी किसी हिन्दुस्तानी अधिकारी के साथ वहाँ आया और भूपेन्द्र को जैसी की तैसी हालत मे दफ्तर चलने का हुक्म दिया। उनके मित्रो ने सोचा कि शायद उनका वाइसराय कमीशन मजूर हो गया है, लेकिन यदि ऐसी बात थी तो पूरी वर्दी के साथ बुलाना चाहिये था। दफ्तर के बाहर सार्जेंट को खडा देखकर तो भूपेन्द्र को निश्चय हो गया कि जरूर दाल में कुछ काला है।

खैर, दफ्तर पहुँचकर कर्नल को 'सेल्युट' देकर 'एटेन्शन' से खडे हो गये। कर्नल ने प्रश्न किया—"तुम्हारा सही नाम क्या है?"

उन्होंने बता दिया।

"देखो तुम्हारे नाम पर बगाल सरकार का वारट है, एडजूटेण्ट जेनरल शिमला के हुक्म से तुम्हे अभी कलकत्ता भेजा जायेगा। क्या तुम क्रातिकारी आन्दोलन मे शामिल थे?"

"जी हाँ, मै अभी भी शामिल हूँ।"

"ऐसी बात है तो फिर युद्ध मे क्यों शामिल हुए?"

"हिन्दुस्तान के बादशाह या अपने मुल्क की रक्षा के लिये मैं युद्ध मे शामिल नहीं हुआ। मै तो फौजी तालीम लेने के लिये यहाँ आया था जिससे जरूरत पड़ने पर अपने मुल्क के लिये उसका उपयोग कर सकूं।

यह सुनकर कर्नल का चेहरा गुस्से से सुर्ख हो गया। उसने कहा, "हम आपको ऐसा नहीं समझते थे, हमने तो राजभक्त समझ कर वाइसराय के कमीशन के लिये सिफारिश की थी।"

भूपेन्द्र कैदी बना लिये गये। उनका बैल्ट, हैट, रायफल और कारतूस ले लिये गये, हिसाब बन्द कर दिया गया, फिर रक्षको को बुलाकर कहा गया —"इस कैदी को कलकत्ता के फोर्ड विलियम तक ले जाना है। बहुत सावधानी से ले जाना। यह कैदी पढ़ा-लिखा और अच्छे खानदान का है, रास्ते मे इसे तकलीफ मत देना। हाँ, अगर यह भागने की कोशिश करे तो बिना शक गोली से उडा देना।"

भूपेन्द्र अपने रक्षकों के साथ रवाना हो गये। बगदाद से बसरा आये, और वहाँ से बम्बई जाने वाले जहाज मे सवार हो गये। जहाज मे बैठे-बैठे उनका मन तरह-तरह के विचारों से आन्दोलित होने लगा। राष्ट्र के लिये बलिदान की उत्कट भावना ने क्षणभर के लिये उनके हृदय को मथ डाला। आठ दिन की यात्रा के बाद जहाज बम्बई के बन्दरगाह पर जा लगा। अपने देश की भूमि पर कदम रखते ही फिर वही वातावरण मस्तिष्क मे चक्कर मारने लगा। एकाध दिन बम्बई मे रहकर वे कलकत्ता के लिये रवाना हो गये, फिर हावड़ा स्टेशन और फिर विलियम फोर्ट।

यहाँ उन्हे कलकत्ता पुलिस के सुपुर्द कर दिया गया, लालबाजार के थाने मे उन्हे रखा गया। अगले दिन चीफ प्रैसीडेन्सी मजिस्ट्रेट के इजलास मे खड़ा किया गया। भूपेन्द्र पुलिस के कारनामों से अच्छी तरह परिचित थे। उन्हे मालूम था कि पुलिस उन्हे अभी कुछ दिनों तक अपनी हिरासत मे ही रखना चाहती है। मजिस्ट्रेट की अनुमति प्राप्त कर उन्होंने कहा— "सबसे पहले मैं अपने सम्बन्धियों को तार द्वारा खबर भेजना चाहता हूँ कि

वे लोग मेरे लिये वकील आदि का प्रबन्ध करे। लम्बा सफर करके मै बहुत थक गया हूँ, इसलिये चाहूँगा कि पुलिस की हिरासत मे न रखकर मुझे जेल मे रखा जाये। तथा मेरा कपड़ा वगैरा जो पुलिस की हिरासत मे है वह मुझे वापिस दे दिया जाये।"

भूपेन्द्र को जेल मे भेज दिया गया। उधर तार पाकर बाबा बडे चिन्तित हुए। उस समय वे ७७ वर्ष के हो चुके थे। अपने एक मात्र पोते के जीवन की गतिविधियो ने उन्हे क्षुब्ध कर दिया था। फौरन ही वे भूपेन्द्र के पिता को लेकर कलकत्ते आये और मुकदमे की पैरवी करने लगे। देशबन्धु आर बी० सी० चटर्जी आदि वकीलो से मिलकर उन्होने बचाव के लिये व्यवस्था की। कुछ दिन वे कलकत्ता ठहरे, लेकिन अदालत की तारीखे बहुत लम्बी पडती थीं, इसलिये अधिक ठहरना सम्भव नहीं था। पेशियो पर वे भूपेन्द्र के पिता को ही भेज देते थे।

भूपेन्द्र के साथियों को पहले ही सजा हो चुकी थी। इसलिये पुलिस इनको फसाने के लिये आकाश-पाताल एक कर रही थी। उसने एक गाडी भर रजिस्टर और कागजात अभियुक्त के खिलाफ गवाही मे पेश किये थे। बी० सी० चटर्जी कलकत्ते के नामी वकीलो मे गिने जाते थे। अपनी जिरह मे उन्होने बताया कि जो व्यक्ति फौज मे भरती होकर लडाई पर जा सकता है; वह कम से कम राजद्रोही तो कभी नहीं कहा जा सकता, और चाहे जो उसे कह सकते है। पुलिस के ढेर-के-ढेर रिकार्डों के सम्बन्ध मे उसका वक्तव्य था कि जितनी बाते इन रिकार्डों मे लिखी हुई है उतनी उम्र भी अभियुक्त की नहीं है। फिर रिकार्ड इकट्ठा करने मात्र से कुछ नहीं होता, सबूत भी होना चाहिये। कहने की आवश्यकता नहीं कि पर्याप्त सबूत न मिलने के कारण भूपेन्द्र को रिहा कर दिया गया।

लेकिन अंग्रेज सरकार ने भारत सुरक्षा नामक कानून पास कर रखा था जिसके अनुसार किसी भी व्यक्ति को केवल शक पर बिना मुकदमा चलाये जेल मे बन्द किया जा सकता था। भूपेन्द्र को फिर बगाल सरकार कैसे छोड़ सकती थी। अदालत से रिहा होने पर जैसे ही उन्होने अपने पिता जी के चरणो मे झुक कर आशीर्वाद लेना चाहा, खुफिया पुलिस ने उन्हे घेर लिया, और कोर्ट के अहाते मे ही फिर से गिरफ्तार कर लिया। सन् १९१७ की यह घटना है। चार साल वे नजरबन्द रहे और १९२० मे भारत सम्राट् की घोषणा होने पर रिहा हुए।

२

सन् १६२१ मे असहयोग आन्दोलन छिड़ गया था। भूपेन दा ने इसमे भाग लिया, और उन्हे फिर से जेल की हवा खानी पड़ी। दरअसल उस समय बगाल के अनेक क्रातिकारी असहयोग आन्दोलन मे शरीक होकर काग्रेस मे चले आये थे, जिससे बगाल मे काग्रेस की बागडोर इसी ग्रूप के हाथ मे आ गई थी। उस समय देशबधुदास और सुरेन्द्रनाथ बनर्जी मे एसेम्बली मे जाकर ब्रिटिश सरकार से सहयोग करने के प्रश्न को लेकर मतभेद हो गया था। देश-बन्धु इस सहयोग के विरुद्ध थे। उस समय जतीन्द्रनाथ बन्दोपाध्याय, जो स्वामी निरालव के नाम से प्रख्यात थे, विप्लव आन्दोलन के ब्रह्मा माने जाते थे, उन्होने भी देशबधु दास का ही समर्थन किया।

भूपेन छह महीने की सजा काटकर वापिस आ गये। उस समय महात्मा गाधी ने घोषणा की थी कि साल भर मे वे स्वराज्य लेकर छोडेगे। ब्रिटिश हुकूमत के अत्याचारो से तग आकर चौरीचौरा मे थाने वगैरह जलाये जाने से, दुर्भाग्य से यह आन्दोलन बन्द कर दिया गया, और गाधी जी नजरबन्द कर लिये गये। इससे सब जगह निराशा-ही-निराशा फैली हुई थी।

क्रान्तिकारी दल के लोग ब्रिटिश सरकार की निगाह से अधिक समय तक न बच रह सके। १६२३ मे फिर गिरफ्तारी का चक्र चला और इन लोगो को पकड़ कर जेल मे डाल दिया गया। सुभाष को माडले भेज दिया, और कुछ लोग बेलौर मे नजरबन्द कर लिये गये। इस समय देशबंधुदास 'फारवर्ड' नाम के एक पत्र का सम्पादन करते थे। भूपेन इसी मे काम करने लगे। इस समय यू० पी० की क्रान्तिकारी पार्टी से फिर से सबध जोड़कर क्रान्तिकारियो के सग-ठन को मजबूत बनाने का निश्चय किया गया। तय पाया कि देश मे ऊँची किस्म के विस्फोटक पदार्थ तैयार किये जाये, और इस काम के लिये दो आद-मियो को विदेश भेजा जाये। इन दो मे से एक भूपेन थे। उन्हे टोकियो जाकर इस काम की शिक्षा प्राप्त करने का आदेश मिला।

लेकिन बिना पासपोर्ट के हिन्दुस्तान के बाहर कैसे जाया जा सकता था। और पासपोर्ट मिलना आसान नहीं था। उन दिनो बरमा को छोड़कर हिन्दुस्तान से बाहर कही भी जाने के लिये पासपोर्ट की जरूरत पड़ती थी। बरमा जाकर भी पासपोर्ट मिलने की सभावना नही थी। खैर, भूपेन बरमा पहुँचकर किसी तरह वहाँ से पीनाग खिसक गये। यहाँ पहुँचकर वे एक बैरिस्टर के साथ रहने लगे। लेकिन जब उन्होने बैरिस्टर साहब से पास-पोर्ट की बात चलाई तो पहले तो वे बहुत घबराये। लेकिन भूपेन ने धीरे-धीरे

उनका विश्वास प्राप्त कर लिया, और बैरिस्टर साहब के भाई बन कर उन्होने पासपोर्ट हासिल कर लिया। पासपोर्ट पाकर भूपेन की खुशी का ठिकाना न था। वे कृषिशास्त्र के विद्यार्थी बन गये और सिंगापुर पहुँच कर माल ढोने-वाले किसी जापानी जहाज मे सवार हो टोकियो के लिये रवाना हो गये।

यह जहाज शघाई होकर कोवे जा रहा था। शघाई पहुँच कर माल चढ़ाने और उतारने के लिये जहाज पाँच दिन तक ठहरा रहा। शघाई देखने की इच्छा से भूपेन शहर मे गये और वहाँ वे शघाई के सुप्रसिद्ध कैथे होटल मे ठहरे। यहाँ दुर्भाग्य से उनकी साधुसिंह नाम के किसी सज्जन से मुलाकात हुई और वह इनके ८५०) लेकर चपत हुआ। भूपेन बड़ी मुसीबत मे पड़ गये। होटल का बिल चुकाने तक के लिये इनके पास पैसा न बचा। जाली पास-पोर्ट होने के कारण एक तो ये वैसे ही शकित थे, अब ऊपर से एक और मुसी-बत आ गई। खैर, अपनी अँगूठी वगैरह बेचकर किसी तरह इन्हे ३५०) मिला, लेकिन यह रुपया भी काफी नही था।

शघाई मे घूम-घूम कर वे किसी नौकरी की तलाश करने लगे। एक दिन उन्होने अग्रेजी के किसी समाचार पत्र मे पढ़ा कि हारवर्स न्यूज एजेन्सी मे किसी आदमी की जरूरत है। कलकत्ते के 'फारवर्ड' मे काम करने का अनु-भव उन्हे था ही। लेकिन शघाई मे रहने का वीसा प्राप्त करना आवश्यक था। वीसा पाने के लिये उन्हे ब्रिटिश कासुलेट के दफ्तर मे जाना पड़ा। वहाँ प्रश्नो की झड़ी लग गई। उत्तर मे उन्होंने कहा—"मैं एक गरीब विद्यार्थी हूँ, पढने के लिये आया हूँ।"

"यदि गरीब हो तो कैथे मे क्यों ठहरे?"

"मुझे मालूम नही था कि यह होटल इतना महगा है, अब मैं किसी सस्ते होटल मे जाकर रहूँगा।"

"जाओ, तुम कैथे मे ठहर सकते हो।"

खैर, वीसा मिल गया, और भूपेन न्यूज एजेन्सी मे काम करने लगे। जाना चाहिये था। टोकियो और पहुँच गये शघाई।

शघाई मे भूपेन को एक कमरा मिल गया। उन्हे रोज १४ घटे काम करना पडता। वे स्टोव पर खाना बनाते, तथा मछली और भात खाकर किसी तरह गुजारा करते। मर-खप कर हर महीने वे १००) बचा पाते। इस प्रकार चार महीने के अथक परिश्रम से वे ४००) जोड पाये।

उन दिनो रासबिहारी घोष टोकियो मे रहते थे। भूपेन ने उन्हे किसी गुप्त पते पर पत्र लिखा और वहाँ से उत्तर आने पर वे चलने की तैयारी करने

लगे। ब्रिटिश कान्सुलेट से पहुँच कर सब से पहले उन्होने अधिकारियो को धन्यवाद दिया, फिर रवानगी का वीसा हासिल कर वे कोवे के लिये रवाना हो गये। कोवे से टोकियो पहुँचे, और वहाँ जाकर रासबिहारी द्वारा सचालित एक वोर्डिग मे ठहर गये।

रासबिहारी की ताकीद थी कि भूपेन दिन मे उनसे मिलने की कोशिश न करे। उन्होने अपने एक असिस्टेन्ट से कह कर भूपेन के रहने-सहने की व्यवस्था करा दी। सबसे पहले उन्होने भूपेन की नौकरी का इन्तजाम किया, और टोकियो के किसी रेशमी सूत का व्यवसाय करनेवाले व्यापारी के यहाँ उन्हे काम मे लगा दिया। भूपेन को ६० येन (१ येन बराबर है ११ आने) माहवार मिलने लगे और अब वे अपने रोजाना के खर्चे से निश्चिन्त हो गये।

सात-आठ दिन बाद रासबिहारी ने उन्हे बुलाया, और वहाँ की किसी आर्डनेन्स फैक्टरी मे उनके काम सीखने की व्यवस्था कर दी। काम सीखने का समय था रात के ६ बजे से १ बजे तक। लेकिन भूपेन तो इसी के लिये इतनी दूर आये थे। वे रातदिन कठिन परिश्रम करने लगे। दिनो को जाते हुए क्या देर लगती है? धीरे-धीरे आठ मास बीत गये। दिन मे वे व्यापारी के यहाँ काम करते, और रात को फैक्टरी में। इस बीच मे उन्होने काम सीख लिया, और उधर आठ महीने मे तनख्वाह के अतिरिक्त उन्हे करीब १७ हजार रुपये कमीशन के मिले।

काम सीख लेने के पश्चात् भूपेन को तुरन्त अपने देश लौट जाने का आदेश मिला। लेकिन वीसा के लिये फिर से ब्रिटिश दूतावास मे जाना आवश्यक था। उन्होने बताया—"मैं यहाँ कृषिशास्त्र का अध्ययन करने के लिये आया था, लेकिन ग़रीबी के कारण कालेज मे दाखिल नही हो सका, मैं अब वापिस देश लौट जाना चाहता हूँ।"

रवानगी का वीसा मिल गया। अपने व्यापारी के पास पहुँच कर उन्होने सब हिसाब कर लिया। एक वर्ष मे कुल मिला कर उन्हे करीब २४ हजार येन कमीशन मिला। यह सब रुपया उन्होने रासबिहारी के सामने रख कर कहा—"इतने दिनो तक मैने मुफ्त मे खाया-पिया, फिर आपकी आर्थिक परिस्थिति भी ठीक नही है।" लेकिन रासबिहारी ने उत्तर दिया—"हमे रुपये की जरूरत नहीं है। तुम हिन्दुस्तान पहुँच कर एक-एक पाई पार्टी के काम में लगा देना, इससे हमे बहुत खुशी होगी।"

भूपेन टोकियो से सिंगापुर आये और वहाँ से पीनाग। पीनाग पहुँच कर उन्होने बैरिस्टर साहब को बहुत धन्यवाद दिया। उनसे हिन्दुस्तान वापिस

लौटने का पासपोट दिलाने के लिये कहा। लेकिन अब की बार उन्होंने साफ़ मना कर दिया। खैर, जैसे वे बरमा से पीनाग आये थे, वैसे ही पीनाग से बरमा पहुँच गये। वहाँ रगून मे ठहरे, और वहाँ से टिकट कटाकर कलकत्ता **लौट आये।**

यहाँ सरस्वती लाइब्रेरी नामका एक सगठन शुरू किया गया जहाँ क्रान्तिकारी दल के सदस्य पुलिस की आँखो मे धूल झोंक कर अपना काम बखूबी किया करते थे। भजन और कीर्तन होने लगे जिनमे साधारण जनता भी शरीक होने लगी। दक्षिणेश्वर मोहल्ले मे एक मकान किराये पर लिया गया और मीटिंगें होने लगीं। भूपेन दा जो रुपया जापान से लाये थे, उसे पार्टी के सुपुर्द कर दिया। क्रान्तिकारी दल मे सगठन की कमी महसूस की जा रही थी। ऐसी हालत मे सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी शचीन्द्रनाथ सान्याल के जरिये यू० पी० और बगाल के बचे-खुचे क्रान्तिकारियों को सगठित करने का प्रयत्न किया गया।

दक्षिणेश्वर बम-केस मे बहुत से बम, विस्फोटक पदार्थ और रिवाल्वर वगैरह पकड़े गये थे। पुलिस ने खानातलाशी की धूम मचा दी। आखिर एक बड़ा षड्यन्त्र सिद्ध किया गया जिसमे राजेन्द्र लाहिड़ी को ५ साल की सजा हुई। भूपेन दा फरार हो गये। पुलिस ने इनके मकान का चारों ओर से घेरा डाल लिया। लेकिन मकान की छत पर चढ कर वे गगा की बीच धारा मे कूद पड़े। बहुत प्रयत्न करने पर भी वे जल की तीव्र धार को न चीर सके, और एक मील तैरने के बाद गगा के उस पार जाकर लगे। अँधेरे के कारण कुछ दिखाई नहीं देता था। बडे सकट का सामना था। खैर, गीले कपडे पहने वे उत्तरपाडा के किसी नामी क्रान्तिकारी के घर चल दिये। रात काफी बीत चुकी थी। बहुत कहने पर भी जब दरवान ने दरवाजा नहीं खोला तो भूपेन दा ने जोर जोर से चिल्लाकर अपने मित्र को दरवाजा खोलने को कहा। दरवाजा खुला, भूपेन दा को इस हालत मे देखकर उनके मित्र आश्चर्य-चकित रह गये। रात ही को खूब खातिर-तवाजह हुई। उसके बाद कुछ रुपया लेकर वे यहाँ से चल दिये। लेकिन भूपेन दा बहुत समय तक बाहर न रह सके। दो-तीन महीने बाद ही छपरा मे वे गिरफ्तार कर लिये गये।

१९२५ मे उनके खिलाफ़ कलकत्ते मे केस चला, और ७ साल की सजा का हुक्म सुनाकर उन्हे अलीपुर सेण्ट्रल जेल मे भेज दिया गया। अनन्तकुमार और प्रमोद फर्स्ट इयर के विद्यार्थी थे, इन्हे भी जेल की सजा हुई। इस समय किसी अभियुक्त को मुखबिर बनाने की कोशिश करने के कारण

जेल के अन्दर ही एक खुफिया पुलिस की हत्या कर दी गई थी, इससे बड़ा हंगामा मचा। खतरे की घंटी बजते ही अलीपुर के जिला मजिस्ट्रेट और सेशन्स जज वगैरह जेल मे आ पहुँचे। सब कैदियों को अलग-अलग जेल मे बन्द कर दिया गया। पहले सैल मे अनन्त और दूसरे मे प्रमोद बन्द था। सैशन्स जज के पूछने पर अनन्त ने बड़ी दृढ़तापूर्वक उत्तर दिया—खुफ़िया पुलिस की हत्या मैने की है। यह सुनकर प्रमोद से न रहा गया। उसने कहा—नहीं, उसकी हत्या का जिम्मेवार मैं हूँ। कहने की आवश्यकता नहीं कि इन दोनो साहसी सपूतो को फॉसी के तख्ते पर लटका दिया गया। बाकी अभियुक्तो मे से किसी को दस साल की और किसी को पॉच साल की सजा का हुक्म मिला। वीरेन्द्र, निखिल और भूपेन दा को अलग-अलग जेलों मे भेज दिया गया। भूपेन दा को मॉटगुमरी जेल मे भेजा गया। यहॉ उन्हे अपने जीवन के सात वर्ष गुजारने थे।

३

सात साल की सख्त सजा ने भूपेन दा को बागी बना दिया था। इसलिये तीन-चार महीने से अधिक वे कभी एक जेल मे नहीं टिक सके। जेल के अधिकारी उनसे परेशान रहते और वे चाहते कि कैदी किसी तरह शान्त रहे।

बाबा हरनाम सिंह कालासिगा।गदरपार्टी के कैदी थे, वे भी यहीं पर जेल काट रहे थे। वे अत्यत शात प्रकृति के थे, और कोई तकलीफ़ हो तो भी चुप रहते थे। लेकिन उचित खुराक के अभाव मे इनका स्वास्थ्य खराब रहने लगा और एक दम उनका ४७ पौड वजन घट गया। भूपेन दा से यह न देखा गया। उन्होने उनके स्वास्थ्य के सबध मे जेल के अधिकारियो से बातचीत की। लेकिन जेल के सुपरिएटेएडेएट को यह बात बुरी लगी। उसने कहा—जो कुछ कहना हो अपने ही बारे मे कहो, दूसरे के बारे मे हम कुछ नहीं सुनना चाहते। यह सुनकर भूपेन दा भी बिगड़ गये और उन्होने उनका कोट पकड़ कर उन्हे रोक लिया। लेकिन इससे लाभ यह हुआ कि बाबा जी की खुराक आदि की ठीक से व्यवस्था हो गई।

सात साल के दीर्घ काल मे भूपेन दा ने जेल का कभी कोई काम नही किया, जिससे उनकी सजा बढ़ती ही गई। पहले उन्हें 'वारनिंग' दी जाती, फिर भोजन वगैरह बन्द कर दिया जाता। टाट के कपड़े पहनने को दिये जाते, और आखिर मे हाथो मे हथकड़ी और पाँवो मे बेड़ियॉ पहना दी जाती। यद्यपि क़ायदे के अनुसार एक महीने से अधिक कालकोठरी मे किसी कैदी को

नहीं रख सकते, लेकिन इन्हे लगातार १८ महीने तक इसमे रक्खा गया ! जेल का सुपरिण्टेण्डेण्ट मेजर सौडी बडे गर्व के साथ कहा करता—देखता हूँ, आप कैसे काम नही करेंगे ? जेल के कानून के अनुसार हर पन्द्रह दिन मे कैदियों का वजन लेने का नियम है, लेकिन सौडी ने इस नियम का कभी पालन नहीं किया।

कालकोठरी मे एकातवास करते हुए भूपेन दा को प्रकाश के अभाव में कोने मे रक्खे हुए पानी के घडे को हाथ से टटोल कर पानी पीना पडता था। यह कोठरी जरा-सी देर के लिये खोली जाती, एक बार जब उन्हे खाना दिया जाता और दूसरी बार जब मेहतर सफाई करने आता ! डेढ साल तक ऐसी दर्दनाक हालत में रहने के कारण भूपेन के हाथ-पॉव को लकवा मार गया जिससे वे एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के लिए असमर्थ हो गये।

इस समय ओकारा मडी की नौजवान सभा का कोई सदस्य जेल से छूट-कर बाहर गया और इस बात को उसने बाहर के लोगों से कहा। इससे अख-बारो मे हल्ला मच गया। जिसके फलस्वरूप जेल-डाक्टर का तबादला कर दिया गया। अब जो नया डाक्टर आया उसने कैदी का वजन लिये बिना रजिस्टर में वजन लिखने से इन्कार कर दिया। कालकोठरी का ताला खोल-कर भूपेन दा को बाहर निकाला गया। लेकिन वे तो उठ कर जरा दूर भी नही चल सकते थे। डाक्टर ने समझा कि कैदी जान-बूझ कर असमर्थता बता रहा है। उसने उसे सिपाहियों को पकड कर लाने को कहा। लेकिन भूपेन दा उठ न सकने के कारण लड़खडा कर वहीं गिर पडे। यह देखकर जेल के सुपरिण्टेण्डेण्ट सौडी ने डाक्टर को डॉटते हुए कहा कि कैदी को क्यों बाहर निकालते हो ? इस अवसर पर कालकोठरी के बाहर प्रकाश की चकाचौंध से भूपेन दा की ऑखो से जल की धारा बह निकली। डाक्टर ने उनका वजन करने के पहले उनके हाथ-पॉव देखे तो पता लगा कि उन्हे लकवा मार गया है। डाक्टर ने सौडी की ओर देखकर कैदी को फ़ौरन ही अस्पताल भेजने को कहा। भूपेन दा का वजन २६ पौंड घट गया था. सौडी इसे जेल के रजिस्टर में दर्ज नही करना चाहता था।

भूपेन दा की हालत का समाचार जेल के बाहर पहुँचने में देर न लगी। उस समय कांग्रेस पार्टी के लीडर मोतीलाल नेहरू थे, उन्होंने सेण्ट्रल असेम्बली मे इस सबंध मे प्रश्न पूछा। परिणाम यह हुआ कि भूपेन दा के इलाज का बन्दोबस्त किया गया, और जेल के दो कैदी उनकी परिचर्या के लिये तैनात कर दिये गये। कुछ समय बाद उन्हे लाहौर सेण्ट्रल जेल के अस्पताल मे भेज

दिया गया। करीब चार महीने तक इलाज करने के बाद उनमें कुछ ताकत आई और वे पहले की तरह चलने-फिरने लगे। यह सन् १६२८ की घटना है।

लाहौर सेण्ट्रल जेल मे लाहौर षडयन्त्र के कैदी भी थे, जिन पर अभी मुकदमा चल रहा था। कैदियो ने इस बात की मॉग पेश की कि उनके साथ मानवोचित व्यवहार किया जाये—उनके भोजन की उचित व्यवस्था हो और उन्हे लिखने-पढने का सामान दिया जाये। दरअसल राजनीतिक कैदियो को उस समय किसी प्रकार की सुविधा नही थी, उनके साथ जानवरो जैसा व्यवहार किया जाता था। भगतसिंह, राजकुमार, सुखदेव वगैरह भी इन कैदियो मे थे। जब कैदियो की मॉग की कोई सुनवाई नहीं हुई तो लाचार होकर भगतसिंह वगैरह ने भूख हडताल शुरू कर दी।

उस समय जतीन्द्रनाथ दास भी लाहौर सेण्ट्रल जेल मे ही थे। उन्हे भूख हड़ताल मे शामिल होने के लिये कहा गया। दूसरे ही दिन उन्होने कैदियो के मामले को लेकर जेल के सुपरिण्टेण्डेण्ट से बातचीत की। जब सुपरिण्टेण्डेण्ट उनकी बातों का सतोष-जनक उत्तर न दे सके तो उन्होने जतीन को पीटने का हुक्म दिया। बस जतीन ने भी भूख हडताल आरभ कर दी। लाहौर षड्यन्त्र केस के और भी अभियुक्त इस हडताल मे शामिल हो गये। सजायाफ्ता कैदियो ने भी कुछ दिन बाद भूख हडताल पर जाने का निश्चय किया।

जेल के कैदियो को अनशन करते देख पजाब सरकार चिन्तित हो उठी। भूख हडतालियो को उसने लाहौर की बोस्टल जेल के अस्पताल मे भिजवा दिया। इधर अग्रेज जेल सुपरिण्टेण्डेण्ट की जगह मेजर चोपडा को नियुक्त कर दिया। लेकिन इससे मूल समस्या मे कोई परिवर्त्तन नहीं हुआ। जतीन्द्रनाथ-दास अपने प्रण पर अटल रहे, और उन्होने अनेक प्रलोभनो के बावजूद अनशन भग नहीं किया। धीरे-धीरे ६३ दिन—२ महीने ३ दिन—गुजार गये और १३ सितबर, १६२६ की रात को १ बज कर ४ मिनट पर भारत का यह वीर अपने देश की खातिर शहीद हो गया। क्षण भर के लिए जेल मे सन्नाटा छा गया। मेज़र चोपडा अपने रूमाल से ऑसू पोछते हुए वहाँ से उठकर चले आये।

जतीन की मृत्यु का समाचार बिजली की तरह देश भर मे फैल गया। लाहौर की जनता को जब इसका पता लगा तो सारा शहर शोक सागर मे डूब गया। शहीद की लाश के अतिम दर्शन के लिए जनता की अपार भीड

टूट पड़ी। लाहौर एक्सप्रेस मे एक डिब्बा रिजर्व किया गया, और गाडी लाश को खींचते हुए हावडा की ओर सरकने लगी। स्टेशनो पर नर-नारियो की भीड़ जतीन के दर्शन के लिये उमडी पड रही थी। पुष्पमालाओ से रेल का ब्बा लाद दिया गया।

१३ घटे देर से एक्सप्रेस ह.वड स्टेशन पर पहुँची। सुभाषचन्द्र बोस ने जब लाश को उतारा तो उनकी आँखे डबडबा आयीं। हावडा स्टेशन से टाउनहाल तक एक लम्बा जुलूस चल रहा था जिसमे करीब दो लाख नर नारी शामिल थे। खेवडातला पहुँचकर इन्कलाब जिन्दाबाद के नारों के साथ लाश का दाहकर्म कर दिया गया।

जतीन के बलिदान के पश्चात् पजाब सरकार को अक्ल आई, और जेल के कैदियों की दशा सुधारने के सबध मे उसने भारत सरकार के साथ पत्र-व्यवहार किया। कैदियो की मॉगोंपर विचार करने के लिये भारत सरकार की ओर से एक कमेटी नियुक्त कर दी गई। कमेटी के सदस्यों मे पडित मदन मोहन मालवीय भी थे। भारत सरकार राजनैतिक कैदियो मे भी श्रेणी-विभाग करना चाहती थी, और पडित मदन मोहन मालवीय जैसे सदस्यों का समर्थन उसे प्राप्त हो गया था बस राजनैतिक कैदियों को ए, बी और सी क्लास मे विभाजित कर दिया गया। क्रातिकारी अब 'आतकवादी के नाम से कहे जाने लगे थे, और 'आतकवादियों' को ए क्लास मे रखने की मनाई थी। अस्तु, राजनीतिक कैदियो को श्रेणियो मे बॉट दिया गया, और भूपेन दा को बी क्लास मिली।

इस समय सन् १९३० के कांग्रेस आन्दोलन मे जालधर के रायजादा हसराज को गिरफ्तार करके लाहौर सेण्ट्रल जेल मे रक्खा गया था। जब उन्हे पता लगा कि भूपेन दा को इस जेल मे बड़ी-बडी यातनाये भोगनी पडी है तो उनके दिल को बहुत चोट लगी और वे भूपेन को अपने ही पास रखने लगे। कुछ समय बाद उनका लडका सौडी वहॉ जेल सुपरिण्टेण्डेण्ट बनकर आया। उसने पूछा—"कहिये, पिताजी कैसे है? कोई तकलीफ तो नहीं?" उन्होंने जवाब दिया—

"मै नु की तकलीफ, तू बी इत्थै मै बी इत्थै, तारी बेन भी इत्थै। तारी मानु वी इत्थै बेज दे।" (मुझे क्या तकलीफ तू भी यहॉ है, मैं भी यहॉ हूँ, तेरी बहन भी यही है। अपनी मॉ को भी तू यही भेज दे)।